चयनित कहानियाँ

अरुण अर्णव खरे

© लेखकाधीन
प्रकाशक : न्यू वर्ल्ड पब्लिकेशन
C-515, बुद्ध नगर, इंद्रपुरी, नई दिल्ली-110012
मो : 8750688053
ईमेल : newworldpublication14@gmail.com
प्रथम संस्करण : 2024
मूल्य : 225 रुपये
मुद्रक : सूरज प्रिंटर्स, दिल्ली (110032)

ARUN ARNAV KHARE : CHAYANIT KAHANIYAN
by : ARUN ARNAV KHARE

आत्मकथ्य

किसी भी लेखक के लिए स्वयं अपनी प्रतिनिधि रचनाओं का चयन जोखिम का काम है। मेरा मानना है कि प्रतिनिधि रचना वह होती है जिसे पढ़ने से पहले उस लेखक का नाम पाठक को न पता हो लेकिन पढ़ते ही उस लेखक की याद आ जाए। दूसरे शब्दों में कहा जाए तो लेखक के नाम से रचना की पहिचान न हो अपितु रचना ही लेखक का परिचय देने लगे। 'राम की शक्तिपूजा' या 'साँप' रचनाओं के साथ यदि उनके रचयिता का नाम न भी दिया गया हो तब भी उनको पढ़ते हुए निराला या अज्ञेय आँखों के सामने उपस्थित हो जाते हैं। ऐसी ही रचनाएँ वास्तविक प्रतिनिधि रचनाएँ कहलाने की हकदार हैं। कहानी की बात करें तो ऐसे अनेक कहानीकार हैं जिनकी रचनाएँ उनका परिचय करा देती हैं। उदाहरणार्थ उसने कहा था (चंद्रधर शर्मा गुलेरी), हार की जीत (सुदर्शन), टोबा टेक सिंह (साअदत हसन मंटो), जहाँ लक्ष्मी कैद है (राजेंद्र यादव), गुलरा के बाबा (मार्कण्डेय), मारे गए गुलफाम (फणीश्वर नाथ रेणु), चीफ की दावत (भीष्म साहनी), घंटा (ज्ञानरंजन), जिंदगी और जोंक (अमरकांत), कोसी का घटवार (शेखर जोशी), तिरिया चरितर (शिवमूर्ति), नौ साल छोटी पत्नी (रवींद्र कालिया) आदि पढ़ते ही उनके लेखकों के नाम याद आ जाते हैं। ये सभी कहानियाँ और इनके कहानीकार एक दूसरे के पूरक हैं। ये कहानियाँ सही अर्थों में उक्त कहानीकारों की प्रतिनिधि कहानियाँ कही जाने के योग्य हैं। कोई भी संपादक जब इन कहानीकारों की कहानियों का चयन करेगा तो ये कहानियाँ स्वतः ही उस सूची में शामिल हो जाएँगी।

पिछली शताब्दी में कहानी की समालोचना पर बहुत काम हुआ है। इस शताब्दी में भी कुछ समालोचकों ने उल्लेखनीय कार्य किया है। 2010 में आजादी के बाद की श्रेष्ठ कहानियों का संकलन खगेंद्र ठाकुर, केवल गोस्वामी, स्वयं प्रकाश, लीलाधर मंडलोई सरीखे मूर्धन्य समालोचकों के संपादन में छः खंडों में प्रकाशित हुआ है। विनोद शाही के संपादन में 21वीं

सदी की आधार कहानियाँ पुस्तक आई है जिसमें प्रियंवद, अखिलेश, संजीव, अल्पना मिश्र, मनोज रूपड़ा सरीखे कहानीकारों की इस सदी में लिखी गई कहानियों पर आलोचनात्मक दृष्टि डाली गई है। ऐसी समालोचनात्मक पुस्तकों से पाठक को लेखकों के रचनाकर्म को समझने का आधार मिल जाता है वहीं लेखक को भी यह ज्ञात हो जाता है कि उसके लेखन पर पाठकीय प्रतिक्रिया कैसी है। सकारात्मक प्रतिक्रियाएँ लेखकों की प्रतिनिधि रचना होने की दिशा भी तय कर देती हैं और इन्हें उस कहानीकार की चयनित कहानियों में स्थान होना निश्चित है।

पूर्व में भी कहानीकारों की प्रतिनिधि अथवा चयनित कहानियों के संग्रह प्रकाशित हुए हैं। न्यू वर्ल्ड पब्लिकेशन द्वारा इस दिशा में उठाया गया कदम कई मानों में भिन्न है। प्रथम तो इस शृंखला में वर्तमान के चर्चित कहानीकारों की कहानियों से रूबरू होने का अवसर पाठकों को मिलेगा और दूसरा इस शृंखला में अपनी प्रतिनिधि कहानियों को चुनने का कार्य स्वयं कहानीकारों को करना है इसलिए ये संग्रह 'चयनित कहानियाँ' होकर भी लेखक की प्रतिनिधि कहानियों के रूप में ही देखा जाएगा। मैंने शुरू में ही लिखा है कि यह एक जोखिम का काम है क्योंकि जिस रचना को हम श्रेष्ठ मानते हैं हो सकता है वही रचना समालोचकों की नजर में उतनी प्रभावी न हो। उदाहरण के रूप में स्मृति के आधार पर कहीं पढ़े गए एक तथ्य का उल्लेख करना चाहता हूँ कि एक प्रसिद्ध समीक्षक को कृष्णा सोबती के जिंदगीनामा, जिसे साहित्य अकादमी पुरस्कार मिला है, के मुकाबले मित्रो मरजानी ज्यादा बेहतर उपन्यास लगता है लेकिन कृष्णा सोबती जिंदगीनामा को ही सर्वश्रेष्ठ कृति कहती हैं। लेखक को ऐसे समालोचकीय खतरों का अभ्यस्त होना चाहिए। उसे स्वयं भी ऐसे खतरे उठाते रहने चाहिए। यदि लेखक को अपनी प्रतिनिधि रचना चुनना पड़े तो वह किसी रचना को चुनने से पूर्व, उस रचना के सभी अवयवों, पहलू और कोणों पर विचार जरूर करेगा। जो रचना उसकी स्वयं की कसौटी पर उसे खरी प्रतीत होगी, वही प्रतिनिधि रचना होने का श्रेय पा पाएगी।

'चयनित कहानियाँ' सीरीज के संग्रह के लिए मैंने कहानियों का चयन पर्याप्त जोखिम उठाते हुए ठीक उसी तरह किया है जैसे किसी कक्षा में कक्षा-प्रतिनिधि चुना जाता है। जरूरी नहीं कि चुना गया कक्षा-प्रतिनिधि

सबसे मेघावी हो, स्मार्ट हो या चतुर हो लेकिन उसमें कुछ ऐसा जरूर होता है जो उसे उस पद के उपयुक्त बनाता है। इस संदर्भ को ध्यान में रखकर यदि इन कहानियों को पढ़ा जाएगा तो निश्चित ही आनंद आएगा। इन कहानियों में जिंदगी के विभिन्न पड़ावों, पीढ़ियों, वर्गों और सामाजिक-पाखंडों के ऐसे यथार्थ का चित्रण हैं जिनका जिंदगी में अहम स्थान तो है ही, जिंदगी से निकट का वास्ता भी है। इन कहानियों में पाठकों का जिंदगी के मनोहर और खुरदुरे सत्य से साक्षात्कार भी होगा और कुछ उजले व चमकीले शेड्स आशा की उम्मीद जगाते मिलेंगे। चूँकि मैं स्वयं इंजीनियरिंग का छात्र रहा हूँ इसलिए जाने-अनजाने, अंदर का इंजीनियर भी प्रतिनिधि रूप में बाहर आ जाता है लेकिन इसे आप बलात या हठी तरीके से अपना स्थान बनाते नहीं पाएँगे।

इस महत्वपूर्ण शृंखला में मुझे भी शामिल करने के लिए न्यू वर्ल्ड पब्लिकेशन के व्यवस्थापक / निदेशक का शुक्रिया। आशा है जिस अपेक्षा के साथ मुझे इस शृंखला में भागीदार बनाया गया है, उस पर मेरी 'चयनित कहानियाँ' खरी उतरेंगी। न्यू वर्ल्ड पब्लिकेशन के संपादक एमएम चंद्रा का भी आभार जिन्होंने मुझे इस शृंखला में सम्मिलित किए जाने की सूचना दी। मित्रों और पाठको से पूर्ववत स्नेह की अपेक्षा के साथ यह संग्रह आपके हाथों में सौंप रहा हूँ। धन्यवाद।

अरुण अर्णव खरे

डी-1/35 दानिश नगर, होशंगाबाद रोड,

भोपाल (म.प्र.) 462026

मोबा: 9893007744

ईमेल : arunarnaw@gmail.com @ sportsbharti@gmail.com

अनुक्रम

आत्मकथ्य	3
दूसरा राज महर्षि	9
चार्ली चैप्लिन ने कहा था	16
पीले हाफ पैंट वाली लड़की	28
यात्रा	41
जॉटर रिफिल पेन	59
कौए	66
कोचिंग	74
वजूद	87
स्टेंट	99
चरखारीवाली काकी	105
बादशाह सलामत की मोहब्बत झूठी है	112
साझा संस्कार	119

दूसरा राज महर्षि

शहर के लगभग सभी मुख्य चौराहों पर लगे राज महर्षि के बड़े-बड़े होर्डिंग्स को जब भी अनुरीता देखती उसके मन में एक ही ख्याल आता कि कब उसका बेटा बड़ा होगा और वह उसकी तस्वीर इन होर्डिंग्स पर दमकते हुए देखेगी। राज महर्षि उस वर्ष का आई.आई.टी. टॉपर था। पहली बार शहर के किसी लड़के ने इतनी बड़ी सफलता हासिल की थी, अतएव शहर के चप्पे-चप्पे पर उसके पोस्टर्स और फ्लैक्स लगे हुए थे। अनुरीता का बेटा शौर्य उस समय छोटा ही था। नौवीं में पढ़ रहा था। वह अब तक किसी भी इम्तिहान में दूसरे स्थान पर नहीं आया था। इसी कारण अनुरीता बड़े-बड़े सपने देखने लगी थी। राज महर्षि की सफलता ने उसकी महत्वाकांक्षा को पर लगा दिए थे। उसने अपने मन की बात को शौर्य से छुपाना भी उचित नहीं समझा। वह सोचती थी कि उद्देश्य प्राप्ति के लिए शौर्य को अभी से प्रेरित करना जरूरी है। शौर्य को पता होना चाहिए कि उसके पैरेंट्स की उससे क्या अपेक्षा है और उसकी मंजिल क्या है। मंजिल का ज्ञान होते ही, आगे चलने की दिशा स्पष्ट हो जाती है। रविवार का दिन था। अनुरीता और शौर्य ग्रोसरी का सामान लेकर न्यू मार्केट से ऑटो में लौट रहे थे। अनुरीता ने सेकेंड स्टॉप पर लगे होर्डिंग की ओर इशारा करते हुए कहा - "शौर्य बेटा, उधर देखो... एक दिन मैं भी तुझे ऐसे ही बड़े होर्डिंग पर देखना चाहती हूँ। मन में ठान ले, आज से तू दूसरा राज महर्षि है।"

"माँ मेंरा नाम शौर्य है।" अनुरीता का बेटा तुनक गया।

"हाँ बेटा, तू शौर्य ही है और होर्डिंग पर भी तेरा नाम ही लिखा होगा, कुछ इस तरह से... शहर का दूसरा राज महर्षि... शौर्य आनंद।" यह कहते हुए अनुरीता की आँखों में सौ कैंडिल पॉवर की चमक उभर आई, पर शौर्य को माँ का बार-बार उसे राज महर्षि कहना पसंद नहीं आया था। उसने कोई उत्तर नहीं दिया और मुँह फेर कर दूसरी ओर देखने लगा।

समय अपनी चाल चलता रहा। शौर्य ने नौवीं में भी टॉप किया। दसवीं

के बोर्ड ऐग्जैम में उसे पूरे राज्य में तीसरा स्थान मिला। गणित में उसे शत प्रतिशत मॉर्क्स मिले थे। अनुरीता को जैसे मनचाहा वरदान मिल गया। उसे लगा उसकी मनमाफिक मुराद पूरी हो गई है। शौर्य ने दुनिया जीत कर उसके कदमों में रख दी है। उसकी उम्मीदों को नए पर निकल आए। वह आसमान में उड़ते हुए इतनी ऊँचाई तक पहुँच गई कि इन्द्रधनुष भी पैरों के नीचे दिखाई देने लगा। वह शहर में जब भी होर्डिंग्स पर किसी की फोटो जगमगाती देखती, उसे उस व्यक्ति की फोटो के स्थान पर शौर्य नजर आने लगता।।

अनुरीता को अब जब भी मौका मिलता वह शौर्य को राज महर्षि की याद दिलाना नहीं भूलती। अपनी खुशी और सपने को बाँध पाना उसके लिए मुश्किल होता जा रहा था। जाने अनजाने उसने बहुत सी सहेलियों और मिलने जुलने वाले लोगों को इस बारे में बता दिया था। कुछ ने तो उसकी बातों पर ज्यादा ध्यान नहीं दिया तो कुछ ने उसे – "हाँ... हाँ... क्यूँ नहीं, शौर्य तो बहुत होशियार लड़का है, वह जरूर टॉप करेगा।" जैसी मन बहलाऊ बातें कर अनुरीता का उत्साह बनाए रखा। कुछ ने ईर्ष्यावश आपस में उस पर व्यंग्य बाण भी चलाए – "बहुत उड़ रही है अभी से... देखना एक दिन मुँह दिखाने से भी कतराएगी।"

अनुरीता की बेसब्री दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही थी। फुरसत में बैठी होती तो सोचा करती – "ये समय इतना धीरे-धीरे क्यूँ चल रहा है। शौर्य तो अभी ग्यारहवीं में ही पढ़ रहा है, इसके बाद बारहवीं, फिर मेंस और एडवांस्ड और फिर परिणाम का इंतजार... उफ्फ! इतना लंबा समय।" दो सालों से चौराहों पर लगे राज महर्षि के पोस्टर भी धुँधलाने लगे थे पर अनुरीता के मन में अंकित राज की छवि अब भी वैसी ही दमक रही थी, जैसी कोचिंग सेंटर के ऊपर लगे निओन लाइट वाले होर्डिंग में दमका करती थी।

उस दिन शौर्य अनुरीता पर बहुत नाराज हुआ जब उसने सरिता और रश्मि आंटी से माँ को यह कहते सुन लिया था – "मैं बहुत बेसब्री से उस दिन का इंतजार कर रही हूँ जब मेंरा शौर्य दूसरा राज महर्षि बनकर इस शहर की हर गली में चर्चा का केंद्र बनेगा।" सरिता तिवारी और रश्मि सिन्हा अनुरीता की पक्की सहेलियाँ थी और उस दिन मधु सुगवेकर की किटी-पार्टी से

लौटते हुए तीनों कुछ देर के लिए अनुरीता के घर पर रुक गई थी।

"अनुरीता, हम सबकी इच्छा है कि शौर्य ऐसी सफलता प्राप्त करे, पर उस पर इसके लिए बहुत अधिक दबाव बनाना मेरे हिसाब से ठीक नहीं है।" – रश्मि आंटी ने कहा था।

"रश्मि, मैं नहीं मानती तुम्हारी बात को। शौर्य बेटा है हमारा, उसे पता होना चाहिए कि हम क्या सोचते हैं? हमारे सपने क्या हैं? हमारी अपेक्षाएँ क्या हैं? उसे अपनी जिम्मेदारी और लक्ष्य का एहसास होना चाहिए। यदि उसे अभी से सचेत नहीं करेंगे, उसे उसकी मंजिल याद नहीं दिलाएँगे, तो फिर वह कैसे अपने उद्देश्य को समझेगा और प्राप्त करेगा।" – अनुरीता ने अपने लहजे और बोलने के हाव-भाव से स्पष्ट कर दिया था कि उसे रश्मि की बात पसंद नहीं आई है।

"तुम तो बुरा मान गई अनुरीता, मेंरा मतलब ये नहीं था।" – रश्मि ने कहा – "मैं तो केवल इतना कहना चाह रही थी कि शौर्य पर राज महर्षि बनने का एक्स्ट्रा प्रेसर न बनाया जाए, उससे अपेक्षा रखो लेकिन अपेक्षाओं का बोझ उस पर मत लादो।"

रश्मि और सरिता के जाने के बाद भी अनुरीता का गुस्सा शांत नहीं हुआ था। चाय के प्याले उठाते हुए वह बड़बड़ाती जा रही थी – "मुझे सीख दे रहीं हैं... मेंरे बेटे से जलती हैं दोनों। रश्मि ने तो अपने बेटे को कॉमर्स दिलाया है। वह अच्छी तरह से जानती है कि मैथ्स लेकर पढ़ पाना हरेक के बस की बात नहीं है। सरिता की बेटी तो और आगे जा रही है, उसे फाईन आर्टस से बेहतर कोई और विषय ही नहीं मिला। दिन भर कागजों पर रंग उड़ेलती रहती है और विचित्र-विचित्र आकृतियाँ बनाती रहती है। उन्हें दिखा कर कभी कहती है एब्सट्रैक्ट पेंटिंग है तो कभी फौविज्म कह कर खुद अपनी पीठ ठोंकती रहती है।"

"माँ मैं शिखर के यहाँ जा रहा हूँ, बहुत दिनों से टेबल टेनिस नहीं खेला है, एक घंटे में लौटूँगा।" कहते हुए शौर्य ने अपनी साइकिल बाहर निकाली और चला गया।

कुछ दिनों बाद शौर्य का बर्थ डे था। उसकी बर्थ डे पार्टी में आए दोस्तों – अनुज, मनीष, ध्रुव और सौम्या से भी अनुरीता ने वही सब कह डाला, जो अनेक बार वह अपनी सहेलियों से कह चुकी थी – "देखना तुम लोग,

शौर्य एक दिन राज महर्षि का रिकॉर्ड भी तोड़ कर दिखाएगा। सारे शहर में उसके पोस्टर्स लगे होंगे।" उस समय तो दोस्तों ने – "हाँ आंटी, आप सच कह रही हैं... सर को भी शौर्य पर पूरा भरोसा है।" कहकर अनुरीता के मन की बात कर दी पर इसके बाद वे शौर्य को राज... राज कह कर बुलाने लगे। सुन कर शौर्य तिलमिला कर रह जाता। माँ पर उसे गुस्सा भी बहुत आता। अनेक बार वह अपना गुस्सा जता भी चुका था लेकिन अनुरीता पर कोई खास असर नहीं हुआ था। वह जान गया था कि माँ से कहने का कोई फायदा नहीं है, वह बदलने वाली नहीं हैं। डेढ़ साल से पापा की पोस्टिंग भुवनेश्वर में थी। वह दो माह में बमुश्किल चार-पाँच दिनों के लिये घर आ पाते थे। शौर्य से उनकी ज्यादा बात नहीं हो पाती थी... "पढ़ाई कैसी चल रही है... अपना व माँ का ठीक से ध्यान रखना, उनको परेशान मत करना... कोचिंग मिस मत करना... सात बजे तक घर आ जाया करो... ।" जैसे संवाद ही दोनों के मध्य होते थे।

शौर्य को भी राज महर्षि अब चुनौती लगने लगा था। जब भी वह रिलैक्स मूड में होता, बरबस ही राज महर्षि के बारे में सोचने लगता... "यदि वह सचमुच राज महर्षि नहीं बन पाया तो... माँ तो टूट ही जाएगी... कितना अपमानित महसूस करेगी वह... सरिता और रश्मि आंटी कितने चटकारे ले-ले कर माँ की हँसी उड़ाएँगी। मेरे दोस्त भी मन ही मन बहुत खुश होंगे, मनीष तो खासतौर पर... उसने मेरा मजाक बनाने के उद्देश्य से पहली बार मुझे स्कूल में पीछे से 'ओए राज' कह कर पुकारा था और खिलखिलाकर उपेक्षापूर्ण ढंग से हँस दिया था। इसके बाद तो उसके क्लासमैट्स उसे इसी नाम से बुलाने लगे थे। कितना असहज हो जाता है वह यह नाम सुनकर... शौर्य का अस्तित्व ही नहीं बचा हो जैसे।"

ऐसी ही अनेक बातों को लेकर मानसिक उधेड़-बुन में डूबता उतराता शौर्य अपने को बहुत अकेला महसूस करने लगा था। पढ़ने बैठता तो किताबों के बीच से राज महर्षि निकल कर उसके सामने खड़ा हो जाता। कभी उसे लगता राज महर्षि पढ़ाई में उसकी मदद कर रहा है... कठिन से कठिन सवाल वह चुटकी में हल कर लेता... कभी उसे इसके उलट महसूस होने लगता, जब आसान से सवाल भी उसे उलझा कर रख देते। उसे लगता राज महर्षि दूर खड़ा-खड़ा उस पर हँस रहा है। वह राज महर्षि नाम की

इस पहेली से जितना दूर रहना चाहता था वह उतना ही निकट आकर उसे अपनी गिरफ्त में ले लेती।

शौर्य ने स्वयं को स्कूल और कोचिंग तक ही सीमित कर लिया था। घर आने के बाद वह स्वयं को कमरे में बंद कर लेता और पढ़ने के लिए बैठ जाता। दो महीने से ऊपर हो गए थे वह न शाम को और न ही छुट्टी वाले दिनों में किसी दोस्त से मिलने गया था। टेबल टेनिस खेलने का उसका शौक भी पीछे छूट गया था। टी.वी. देखे हुये भी उसे एक अर्सा हो गया था, उसे न ही लॉफ्टर शो से दिलचस्पी रह गई थी और न ही तारक मेंहता का उल्टा चश्मा में। मोबाइल में भी उसने पिछले एक माह में एक बार भी नेट-पैक नहीं डलवाया था। अनुरीता बहुत खुश थी कि शौर्य उसके सपनों के लिए कितनी जी तोड़ मेंहनत कर रहा है। पढ़ाई में इस तरह डूबा रहता है कि खाने के लिए नखरे करना भी भूल गया है। लौकी और गिल्की की सब्जियाँ भी आजकल चुपचाप खा लेता है। कभी-कभी अनुरीता उसकी सेहत को लेकर चिंतित भी हो उठती। वह बीच-बीच में शौर्य की मन पसंद चीजें बनाकर खिलाती रहती पर अनुरीता के मन में यह कभी नहीं आया कि वह शौर्य को कभी-कभी बाहर घूमने, दोस्तों से मिलने या थोड़ा बहुत खेलने के लिए कहे।

ग्यारहवीं की स्थानीय परीक्षा में शौर्य पहले स्थान से खिसक कर तीसरे स्थान पर आ गया। हमेंशा खेल-कूद में मस्त रहने वाले तन्मय चतुर्वेदी ने आश्चर्यजनक रूप से सातवें स्थान से छलांग लगाते हुए टॉप किया था और सौम्या हमेंशा की तरह दूसरे स्थान पर ही थी। शौर्य को पता था कि उसके पेपर्स उतने अच्छे नहीं गये हैं। हर पेपर में समयाभाव के कारण वह 5 से 8 अंकों के प्रश्न हल ही नहीं कर पाया था, पर अनुरीता शौर्य के रिजल्ट से ज्यादा विचलित नहीं थी। उसे लगता था कि आई.आई.टी. की तैयारी में अधिक ध्यान देने के कारण ही शौर्य पहले स्थान पर नहीं आ सका है।

रिजल्ट से शौर्य खुश नहीं था। जीवन में पहली बार वह प्रथम आने से वंचित रहा था, और वह भी सीधे तीसरे नंबर पर जा पहुँचा था। तन्मय जिसे कभी कोई बहुत सीरियसली नहीं लेता था सीधा टॉप कर गया था। शौर्य को लगने लगा था कि उसके साथ सब कुछ ठीक नहीं है। उसकी याददास्त उसका साथ नहीं दे रही है। कई बार आसान से फार्मूले तक उसे

समय पर याद नहीं आते और छोटे-छोटे सवालों को हल करने में भी उसे अधिक समय लग जाता है। वह किताबों में और ज्यादा दिमाग खपाने लगा। हर समय उसे लगता रहता कि राज महर्षि उसके आसपास रहकर उसकी हर गतिविधि पर नजर रखे हुए है। कई बार तो वह देर रात तक कुर्सी पर बैठा इसी उधेड़बुन में खोया रहता कि कहीं राज महर्षि उसकी राह कठिन बनाने कोई खेल तो नहीं खेल रहा, लेकिन अगले ही पल उसे अपने पागलपन पर हँसने की इच्छा होती। उसकी हँसी तो पहले ही बहुत पीछे कहीं छूट चुकी थी, अधरों पर आने से पहले ही अंदर ही अंदर घुटकर दम तोड़ देती।

समय जैसे-जैसे बीत रहा था शौर्य का आंतरिक डर बढ़ता जा रहा था। उसे अपनी असफलता का डर बुरी तरह सताने लगा था। किताबें खोलते ही अक्षरों के स्थान पर उसे अब राज महर्षि के साथ-साथ रश्मि और सरिता आंटी के चेहरे भी दिखाई देने लगे थे। उसे लगता ये सभी उसकी असफलता का जश्न मनाने इकट्ठे हो गये हैं। मनीष भी दूर से उसे बड़ी ही अजीब और मजाक बनाने वाली निगाहों से देख रहा है। ध्रुव भी बहुत खुश लग रहा है। लगता है ध्रुव को अपने फेल हो जाने का उतना दुख नहीं पहुँचा है जितना उसके असफल हो जाने से उसे खुशी मिली है। इन सबके बीच माँ का उदास पीला चेहरा देखकर उसका मन उसे धिक्कारने लगता। उसका दिल करता कि तकिए में मुँह छुपाकर रो ले। पापा प्रकट होकर ढाढ़स बँधाते... "अभी राह खत्म थोड़े हुई है, अगले साल और अच्छे से तैयारी कर के परीक्षा देना।" अमिताभ बच्चन की वह सीख भी उसके मन-मस्तिष्क पर उभरती, जो उन्होंने टी.वी. पर किसी कार्यक्रम में दी थी, संभवतया कौन बनेगा करोड़पति में कि "कोशिश करने वालों की कभी हार नहीं होती / लहरों से डरकर नौका पार नहीं होती।"

12वीं के इम्तहान सिर पर थे लेकिन शौर्य इम्तहान देने के लिए स्वयं को तैयार नहीं कर पाया था। आधे से ज्यादा कोर्स का वह रिवीजन ही नहीं कर सका। कई दिनों से उसके सिर में दर्द हो रहा था। नींद भी पूरी नहीं हो रही थी, साथ ही राज महर्षि कभी भी प्रकट होकर उसका रहा-सहा आत्मविश्वास हिलाकर चला जाता था।

शौर्य पहला पेपर देकर वापस आ रहा था कि रास्ते में सायकिल से गिर गया। गिरते ही वह बेसुध हो गया। उसके दोस्तों ने उसे अस्पताल पहुँचाया

और अनुरीता को खबर दी। उसका हीमोग्लोबिन गिरकर नौ से नीचे आ गया था। वजन भी 51 किलो से घट कर 44 किलो रह गया था। अनवरत मानसिक तनाव की काली रेखाओं ने उसके चेहरे को मलिन बना दिया था। वह बिस्तर से उठ भी नहीं पा रहा था। अनुरीता इस स्थिति में अपने बेटे को देखकर सिहर गई, यदि सिस्टर ने उसे संभाला नहीं होता तो वह नीचे गिर गई होती। डॉक्टर ने शौर्य को कम से कम एक सप्ताह तक अस्पताल में रखने को कहा। शौर्य की नींद पूरी न होने की वजह से सायकियाट्रिक एंड न्यूरोलॉजिकल डिस ऑर्डर हुआ था। बीमारी का इतना भारी भरकम नाम सुन कर अनुरीता के तो जैसे होश ही उड़ गए। उसे लगा किसी उपग्रह ने अंतरिक्ष में ले जाकर उसे छोड़ दिया है और राज महर्षि के होर्डिंग्स के टुकड़े भी उसके साथ-साथ शून्य में घूम रहे हैं।

चार्ली चैप्लिन ने कहा था

व्हाट्सएप पर आए मैसेज को पढ़ कर पलक पल भर के लिए विचलित हुई फिर चिर-परिचित शैली में ठहाका लगाते हुए बोली - "अब आएगा असल जिंदगी का मजा।" रात को दस बजे पलक को जोर जोर से अचानक यूँ हँसते देख उसकी रूममेट कुमुद ने पूछा - "क्या हुआ पलक, क्यों इतनी खुश हो रही हो, कोई भयानक जोक भेजा है किसी ने।", पर पलक ने उसकी बात का उत्तर नहीं दिया, उलटा उसे रहस्यमय अंदाज में घूर कर देखने लगी। कुमुद पलक के ऐसे व्यवहार की आदी थी लेकिन उस समय उसे पलक का हँसना रास नहीं आया। उसने पलक के हाथ से मोबाइल छीन लिया और संदेश पढ़ने लगी। पराग का मैसेज था - "सुना तुमने, आज रात से 21 दिनों का टोटल लॉकडाउन हो गया है। ट्रेनें, बसें, हवाई जहाज सब बंद। कोई कहीं आ जा नहीं सकता।"

मैसेज पढ़ते ही कुमुद को अपनी सारी इंद्रियाँ शिथिल होती प्रतीत हुई। 28 मार्च की सुबह पलक, कुमुद और पराग तीनों का ही गौहाटी एक्सप्रेस से पटना के लिए रिजर्वेशन था। "अब क्या होगा।" वाले भाव ने सारे शरीर में झुनझुनी भर दी जैसे बिजली के नंगे तारों को छू लिया हो।

पलक ने उसे छेड़ा - "जानू कैसा लगा, जोर का झटका जोर से ही लगा न।"

"तू पागल हो गई है पलक, हम यहाँ फँस चुके हैं और तू हँसे जा रही है, सोच, क्या होगा हमारा, हम छः सात लड़कियाँ ही बचे हैं होस्टल में, बाकी सब जा चुकी हैं घरों को।" - कुमुद की आवाज बोलते-बोलते भर्राने लगी थी, लगा रो ही देगी।

"देख कुमुद, आज पूरे दिन पढ़ाई में इतना खोई रही कि हँसने का मौका ही नहीं मिला सो अभी हँस लिया... आज का अपना कोटा पूरा हुआ। तुझे पहले भी बता चुकी हूँ कि जिंदगी का वह दिन सबसे बुरा दिन होता है जिस दिन मैं हँसती नहीं हूँ... ये मेरी नहीं चार्ली चैप्लिन की सीख है।

उन्होंने ही कभी यह कहा था। मुझे उनकी यह बात हमेशा प्रेरणा देती है, हँस लो तो सारा तनाव गायब हो जाता है, सोचने समझने की शक्ति बढ़ जाती है।" – पलक ने संजीदा होते हुए कहा – "पराग का मैसेज पढ़कर मैं भी पल भर के लिए डर गई थी, इसलिए हँस कर भीतर का डर निकाल दिया। यदि रोने से बात बन जाए तो हम मिल के रो लेते हैं पर तुम भी जानती हो, कुछ नहीं होगा इससे। समस्या आ गई है तो हल निकालेंगे, कोई न कोई रास्ता निकलेगा।"

"मुझे तो कुछ सूझ नहीं रहा है क्या करेंगे हम, सोनी आंटी ने भी एक अप्रैल तक होस्टल खाली करने का अल्टीमेटम दिया है, कहाँ जाएँगे हम।"

"सो जाओ आराम से अभी, बहुत टाइम है, सुबह डिसाइड करते है।" – पलक ने कुमुद को ढाढस बँधाते हुए कहा – "तुम बहुत जल्दी डर जाती हो, जिंदगी डर से आगे नहीं बढ़ती, हौसले से बढ़ती है... सोचो यदि मैं और पराग चले गए होते तो तुम क्या करती, अब हम तीनों साथ हैं तो जो होगा हम साथ में निपटेंगे।"

पलक और कुमुद अचीवर्स गर्ल्स होस्टल में रहकर आई.आई.टी. की कोचिंग ले रहीं थी। पराग, केतन वर्मा के यहाँ दो और लड़कों के साथ पेइंग गेस्ट था। पलक और पराग पूर्व परिचित थे तथा ओरैंज वैली स्कूल मुजफ्फरपुर में साथ पढ़ते थे। कुमुद आरा की रहने वाली थी। कोचिंग के लिए कोटा आते समय इत्तफाक से उसकी मुलाकात पलक और पराग से हुई थी। तीनों का एक ही बोगी में रिजर्वेशन था। कुमुद के साथ उसके चाचा कोटा जा रहे थे जबकि पराग की माँ साथ में थी। पराग के पापा ने मुजफ्फरपुर से चलने के पहले ही केतन वर्मा और अचीवर्स गर्ल्स होस्टल के केयरटेकर से बात कर पराग और पलक के रहने की व्यवस्था कर दी थी। दोनों पते उनके एक मित्र ने उन्हें दिए थे। चाचा ने भी कोटा पहुँच कर कुमुद के रहने की व्यवस्था उसी होस्टल में कर दी और कुमुद व पलक रूममेट बन गई।

ट्रेन में अचानक हुई दोस्ती धीरे-धीरे प्रगाढ़ता में बदल गई। कुमुद के पापा सत्ताधारी दल के विधायक थे, हमेशा व्यस्त रहा करते। उनका अधि कतर समय आरा या पटना में गुजरता। कुमुद, माँ और दादा-दादी के साथ गाँव में रहती थी। दादा कभी गाँव के सरपंच थे और चाचा वर्तमान में जनपद

पंचायत के सदस्य, यानि कि पूरा परिवार राजनीति के रंग में रँगा हुआ था। माँ सीधी-सादी गृहणी, ज्यादा पढ़ी-लिखी नहीं, काम से काम रखने वाली। ज्यादा पढ़े-लिखे तो उसके विधायक पिताजी भी नहीं थे पर तिकड़म भिड़ाने में उनका कोई सानी नहीं था। पिता कभी कभार ही गाँव आते और लोगों से घिरे रहते। पत्नी से ज्यादा बात नहीं करते, तने-तने से रहे आते। बेटी से बोलते - "तुझे मेरी विरासत संभालना है, थोड़ा दबंग बन, माँ जैसी दब्बू बन कर राजनीति में नहीं टिक सकेगी।" कुमुद माँ की ओर देखती तो उसे बुरा लगता। अकेले में सोचती, पिता सही कहते हैं - दुनिया में दब्बू लोगों की कदर नहीं होती। उसने ठान लिया कि वह माँ जैसी दब्बू नहीं बनेगी लेकिन माँ के समूचे किरदार से खुद को अलग-थलग कर पाना भी उसके लिए संभव नहीं हो पाया। वह बोल्ड बनने की कोशिश करती रही पर पूरी तरह आत्मनिर्भर कभी नहीं बन सकी। छोटे-मोटे कामों के लिए भी उसे माँ के सहारे की जरूरत पड़ जाती। ग्यारहवीं में जब वह क्लास-मॉनिटर चुनी गई तो पिता बहुत खुश हुए थे। वह उसे इंजीनियर बनाना नहीं चाहते थे, कहते - "क्या करोगी इंजीनियर बन के, हमारे प्रांत में आठवीं फेल मंत्री बन जाते हैं, अगला चुनाव जीतने पर मैं भी मंत्री पद का दावेदार हो जाऊँगा।" फिर अचानक पढ़ाई को लेकर उनका विचार बदल गया। दरअसल जबसे उन्होंने राजस्थान और हरियाणा में फर्राटेदार अंग्रेजी बोलने वाली एम.बी.ए. और इंजीनियर महिला सरपंचों के बारे में सुना था तभी से वह कुमुद के इंजीनियर बनने की इच्छा के समर्थक हो गए थे। उन्हें लगने लगा था कि इंजीनियर बनने के बाद राजनीति में बेटी की ब्रांड-वैल्यू बढ़ जाएगी।

पलक, मास्टर पिता की बेटी, आठवीं तक अपने पैतृक गाँव बारा बुजुर्ग के स्कूल में पढ़ी। गाँव ऐसा कि बेगमती नदी हर साल बाढ़ का ऐसा दर्द दे जाती कि जिंदगी पटरी पर आने में महीनों गुजर जाते। जिंदगी वापस शून्य से शुरु करनी पड़ती। पर दिलेरी ऐसी कि सब कुछ खोकर भी जिंदगी में आगे बढ़ने का हौसला कभी नहीं खोया। पलक ने मुश्किलों पर विजय पाने का जज्बा इसी गाँव की हवा, पानी, मिट्टी से सीखा। कुछ बातें राखी बहिनजी से स्कूल में सीखीं। उन्होंने ही उसे चार्ली चैप्लिन की कहानी छठवीं कक्षा में सुनाई थी तब वह चार्ली चैप्लिन के बारे में जानती भी नहीं थी। कहानी उसके मन को छू गई और उसने जिंदगी की दुश्वारियों के बीच हँसना

सीख लिया। आगे की पढ़ाई के लिए वह मुजफ्फरपुर आ गई। पराग दूर के रिश्तेदार का बेटा था, ओरैंज वैली स्कूल में पढ़ता था, पढ़ने में होशियार था सो दोस्ती हो गई। पराग माँ के साथ रहता था। पापा सेल्स टैक्स इंस्पेक्टर थे, पोस्टिंग दरभंगा में थी। वीक-एंड पर आते और दो दिन साथ रहकर सोमवार की सुबह चले जाते। पापा की अनुपस्थिति में सारे बाहरी काम पराग को करना पड़ते जिससे उसमें आत्मविश्वास आता गया और जिम्मेदारियों को निभाने का दायित्वबोध भी। हर काम वह पूरे मन और सलीके से करने का आदी हो गया।

अगले दिन सुबह-सुबह मिसेज सोनी एक केतली में चाय और बिस्किट के तीन-चार पैकेट लेकर होस्टल आई और सभी लड़कियों को मेस में बुलाकर बोली - "आज न भानू आया है और न ही रूपा। नाश्ता नहीं बना है और खाना भी नहीं बन पाएगा। मैं तुम लोगों के लिए चाय और बिस्किट लेकर आई हूँ, लंच में खिचड़ी बना दूँगी। 31 मार्च तक मैं इतना ही अरैंज कर सकती हूँ। तुम सबको इसी में एडजस्ट करना होगा।"

"मैम, वो तो सब ठीक है... पर हम लोग जाएँगे कहाँ, सरकार ने तो सब कुछ बंद कर दिया है हमारा रिजर्वेशन भी बेकार हो गया।" - चिंतित वंदना रावत ने मिसेज सोनी से कहा।

"तुम मेरी भी परेशानी समझो वंदना, कुक और साफ-सफाई करने वाले नहीं आएँगे तो अकेले कैसे सारी चीजें हैंडल कर सकूँगी, घर की भी जिम्मेदारी है, मेस का सामान, सब्जी-भाजी लाने वाला भी कोई नहीं है, तुम्हारे अंकल की भी तबियत ठीक नहीं है कुछ दिनों से।" - मिसेज सोनी ने सभी लड़कियों को अपनी परेशानियाँ गिनाई।

"आप पास की व्यवस्था करवा दीजिए हमारे लिए, हम अपनी बुआ के यहाँ झालावाड़ चले जाएँगे, दीप्ति को भी साथ ले जाएँगे।" - वफा अब्बासी ने कहा। दीप्ति ने सिर हिलाकर अपनी रजामंदी व्यक्त की।

"ठीक है, मैं डी.एस.पी. राजावत से बात करती हूँ उम्मीद है पास मिल जाएगा, बाकी लोग भी इसी तरह व्यवस्था जमा ले।" - मिसेज सोनी बोलीं।

"मेरे पापा अपने एक बैंक कलीग से बात कर रहे हैं, दोपहर तक पता लग जाएगा, मैं शिखा को लेकर उनके यहाँ चली जाऊँगी।" - रजनी सिकदर ने कहा।

"वेरी गुड, देखो कितनी आसानी से सब कुछ हो गया, मैं नाहक चिंता कर रही थी।" – मिसेज सोनी पलक और कुमुद की ओर देखते हुए बोलीं – "तुम लोगों की चिंता नहीं है मुझे, कुमुद के पापा एम.एल.ए. हैं वह तुम लोगों की कुछ न कुछ व्यवस्था करा ही देंगे, अब बचेगी वंदना, उसे मैं अपने घर ले जाऊँगी... देखो, हो गई न सारी परेशानी हल।"

मिसेज सोनी चली गईं, विश्वास जताने के बहाने कुमुद पर बिजली गिराकर। कुमुद रात में ही माँ को सारी कहानी सुना चुकी थी। पापा को भी मैसेज किया था पर अभी तक किसी का न जवाब आया था और न ही फोन। उसे पता था कि माँ जानकर बहुत परेशान हो गई होगी, पर वह चाहकर भी कुछ करने की स्थिति में नहीं है। चाचा से कह जरूर सकती हैं पर चाचा भी मनमौजी हैं, अक्सर हफ्तों तक गाँव नहीं आते। सुना है, आरा में चाचा का किसी और औरत से भी चक्कर है। चाची भी कुछ नहीं कर सकतीं। उनकी स्थिति तो माँ से भी ज्यादा खराब है। शादी के नौ साल बाद भी बच्चा नहीं होने से हर कोई उन्हें तिरस्कार की नजर से देखता है। पापा का क्या, उनने तो अभी तक मैसेज ही नहीं देखा। जरूर रात में बैठक जमी होगी सो अभी तक सो रहे होंगे। मैसेज देखेंगे तो फोन आएगा उनका।

पलक आसन्न विपत्ति से जितनी बेफिकर दिख रही थी उसके अम्मा-पापा उतने ही परेशान। सुबह से दो बार फोन कर चुके थे और अपनी लाचारी प्रदर्शित करते हुए बहुत सी हिदायतें दे चुके थे। पलक हर बार उन्हें दिलासा देने की कोशिश करती दिखाई देती – "आप ज्यादा परेशान मत होइये, हम अपना पूरा ध्यान रखेंगे। बहुत सी लड़कियाँ अभी होस्टल में हैं, सोनी आंटी भी हमारा पूरा ख्याल रख रही हैं, आज तो वह स्वयं अपने हाथ से नाश्ता बनाकर हमारे लिए लाई थी।"

"बेटा तुम कितना ही कहो कि अच्छे से हैं पर माँ का दिल कहाँ मानता है, हमें हर पल चिंता खाए जा रही है। तुम एक गलती कर ही चुकी हो, अपना रिजर्वेशन कैंसिल करा कर, 21 तारीख को यदि वहाँ से आ जाती तो ये परेशानी नहीं होती।"

"अम्मा पहले कहाँ पता था कि ऐसा कुछ होने वाला है। सोचिए, यदि मैं आ जाती तो कुमुद कितना निःसहाय हो जाती। उसकी तो हालत खराब हो जाती। अभी हम दोनों साथ में हैं तो दोगुनी हिम्मत है हमारे साथ, 21

दिनों की ही तो बात है, कट जाएँगे ये मुश्किल भरे दिन।"

कोरोना महामारी की बढ़ती आशंका के चलते कोचिंग संस्थानों ने सावधानी बरतते हुए 15 मार्च से ही कक्षाएँ स्थगित कर दी थी। जिस दिन कोचिंग कक्षाएँ स्थगित होने की सूचना संस्थान ने चस्पा की थी उसी दिन पराग ने अपना और पलक का आनलाइन रिजर्वेशन करवा लिया था। पलक, पराग पर नाराज भी हुई थी कि रिजर्वेशन कराने से पहले एक बार कुमुद से पूछ तो लेना था। पराग ने तो कुमुद का भी रिजर्वेशन करने की कोशिश की थी लेकिन किसी भी क्लास में कन्फर्म टिकट नहीं मिल रहा था। क्या करता वह, सफाई दी थी पराग ने। सुनकर कुमुद उदास हो गई थी, उसके शब्द – "क्या तुम मुझे अकेला छोड़कर चली जाओगी।" पलक के कानों में रात भर बजते रहे थे। सुबह होते ही पराग को फरमान सुना दिया था उसने – "यार, हम साथ आए थे तो अब साथ ही चलेंगे, ये टिकट कैंसिल कर दो और जिस तारीख का कन्फर्म मिले उसमें करा लो।" अगले छः दिनों तक सभी ट्रेनें फुल थीं। इस बीच उनके बहुत से संगी साथी पी.जी. या हॉस्टल छोड़ कर जा चुके थे और जाते जा रहे थे। संयोग से 28 मार्च को तीन बर्थ गौहाटी एक्सप्रेस में मिल गई। तीनों जाने की तैयारी कर रहे थे कि लॉकडाउन की घोषणा हो गई।

पलक माँ से बात कर फ्री हुई ही थी कि पराग का फोन आ गया – "यार, घर में सब बहुत परेशान हैं नाना, नानी और बुआ तक के फोन आ गए हैं, केतन अंकल ने भी माँ से बात कर उन्हें समझाया है पर वह हैं कि समझ नहीं रही हैं... तुम लोगों के क्या हाल हैं।"

"सब बढ़िया है इधर, नाश्ते में चार पारले जी खाए हैं और लंच में खिचड़ी मिलने वाली है।"

"मजाक मत कर यार, सोनी आंटी बहुत खड़ूस औरत हैं यह तो मैं भी जानता हूँ। पहले ही दिन अपनी औकात दिखा देंगी ये नहीं सोचा था।" – पराग ने चिंता जताते हुए कहा – "31 के बाद क्या करेगी तू, उनने तो अलटीमेटम पहले से ही दे रखा है।"

"तेरे साथ आकर रहूँगी।" – पलक अपने बेलौस अंदाज में बोली – "अरे डर मत, नहीं आऊँगी, जब समय आएगा तब डिसाइड करेंगे... पर कुमुद बहुत परेशान है। सोनी मेडम ने उससे कह दिया है कि तेरे पापा

एम.एल.ए. हैं तो वह कोई रास्ता निकाल ही लेंगे, कल से अभी तक उसके पापा का फोन भी नहीं आया है सो उदास भी बहुत है बेचारी।"

"उसकी उदासी का एक कारण तुम भी होगी, तुमने जरूर ठहाके लगाए होंगे, उसे ढाढस बँधाने के स्थान पर... वो क्या... वही घिसी पिटी चार्ली चैप्लिन ने कहा था वाली कहानी चैंप दी होगी।"

"चल मजाक बहुत हो गया, अब सीरियस हो जा... इस बारे में सोच, यदि आंटी सही में नहीं मानी तो हम लोग क्या करेंगे।" – पलक की आवाज में पराग को पहली बार चिंता की खरखराहट सुनाई दी।

"मैं अंकल से बात करता हूँ, तुम्हें भी जानते ही हैं, बहुत भले इंसान हैं... उनकी बहुत जान-पहिचान है सबसे, वह जरूर हमारी मदद करेंगे।" – पराग ने कहा।

"हाँ, जल्दी कर ले, तब तक मैं आंटी को भी पटाने का प्रयास जारी रखूँगी।"

"तो एहसास हो गया न, कि हम फँस गए हैं यहाँ पर, अंकल ने आज ही कहा है कि लॉकडाउन अभी और आगे भी बढ़ सकता है।"

"तुम डरा रहे हो मुझे।"

"नहीं मेरी माँ, अंकल ने जो कहा बस वह बताया है।"

"अच्छा अभी बंद करती हूँ, शायद कुमुद के पापा का फोन आया है, वह चुप रहने का इशारा कर रही है।"

पापा से बात हो जाने के बाद भी कुमुद के चेहरे पर सुकून के भाव नहीं आए थे। अचानक आई यह परेशानी थी भी ऐसी कि कोई कुछ नहीं कर सकता था। जो जहाँ है उसे वहीं रहना है और अपने बूते पर ही स्थिति से निपटना है। दूसरी जगह बैठा व्यक्ति केवल सान्तवना की चाशनी पिला सकता है, कर कुछ नहीं सकता। शायद कुमुद के पापा ने भी अपनी मजबूरी बताते हुए उसे यही समझाइश दी थी, तभी तो बात करने के बाद उसने पलक से कहा था – "पापा के भरोसे नहीं बैठ सकते, अपने को ही कुछ व्यवस्था जमानी पड़ेगी।"

"जम जाएगी डियर, पराग केतन अंकल से बात करने वाला है।" – पलक ने कुमुद की पीठ पर हाथ फेरते हुए कहा।

दो दिन बिस्किट और खिचड़ी खाते हुए गुजर गए। हॉस्टल में उनके

अलावा केवल वंदना ही बची थी, बाकी चारों लड़कियाँ जा चुकी थी। तीसरे दिन सुबह पराग का फोन आया – "तुम लोग तैयार रहो, मैं केतन अंकल के साथ लेने आ रहा हूँ, ऊपर वाले कमरे में उन्होंने तुम लोगों के रुकने की व्यवस्था कर दी है, साथ ही कहा है कि जब तक रास्ते नहीं खुलेंगे तब तक आराम से रह सकती हो।"

पलक खुशी से उछल पड़ी, बोली – "थैंक यू यार, तुमने हमारी मनचाही मुराद पूरी कर दी।"

कुमुद ने सुना तो लपक कर पलक को गले लगा लिया। जब दोनों अलग हुई तो कुमुद की आँखों में आँसू झिलमिला रहे थे। पलक ने उसकी ठोड़ी पकड़ते हुए कहा – "अब तो मुस्करा दो जानू, आज से खिचड़ी से छुट्टी जो मिली।"

केतन अंकल के यहाँ आकर दोनों बहुत आश्वस्त और सुरक्षित महसूस कर रही थीं। आंटी की किचन के दरवाजे भी दोनों के लिए खुले हुए थे, कुछ भी बनाने और खाने-पीने की छूट। मनचाहा आश्रय और सुरक्षा कवच पाकर दोनों का समय आराम से कटने लगा था यद्यपि बाहर से आ रहीं खबरें चिंताजनक ही थी। पॉजिटिव केसेज की संख्या हर दिन बढ़ रही थी और विशेषज्ञों के आकलन भयावह तस्वीर पेश कर रहे थे। डर का आलम यह था कि देश के हर कोने से हजारों लोग सड़कों पर निकल आए थे और हजारों कि.मी. की दूरी को चुनौती देते हुए पैदल ही अपने घरों की ओर चल पड़े थे। टी.वी. पर पलायन के इन दृश्यों को देखकर हृदय द्रवित हो जाता और जनसेवा की शपथ लेनेवाले नेताओं की बेरुखी पर गुस्सा फूटने लगता था। केतन अंकल ने बच्चों के सामने न्यूज देखना ही बंद कर दिया। लंच के बाद सब ड्राइंग रूम में बैठकर नेटफ्लिक्स या जी-क्लासिक्स पर फिल्में देखते। जिंदगी पहले जैसी न सही पर निराशा के भँवर से उबरने लगी थी। घर वाले भी अब पहले जैसे चिंतित नहीं लगते थे। बातचीत में उनके अंदर का डर झलकना कम हो गया था और वह आंटी को परेशान न करने व उनका ख्याल रखने की हिदायत देने लगे थे। पढ़ाई का दवाब जाता रहा था सो मस्ती का मूड भी होने लगा था। डिनर के बाद पाँचों मिलकर अंताक्षरी खेलते और वीडियो बनाकर घरवालों को यह जताने के लिए भेजते कि देख लो, महामारी के इस दौर में भी वे कितने निश्चिंत और इनर्जी से भरपूर हैं।

अंकल आंटी भी कितने प्रसन्न हैं और उनकी कंपनी को एंजॉय कर रहे हैं।

एक सप्ताह हो गया था पलक और कुमुद को केतन अंकल के यहाँ रहते हुए। पलक के हँसमुख व्यक्तित्व से केतन अंकल भी बहुत प्रभावित थे। वह अक्सर कहते कि "पलक ने हमें जिंदगी जीने का नया नजरिया दिया है। जब-जब वह चार्ली चैप्लिन का नाम लेकर खिलखिलाती है, मुझे बहुत आनंद मिलता है। मुझे अपने पसंदीदा हीरो देवानंद का यह गीत याद आ जाता है - मैं जिंदगी का साथ निभाता चला गया, हर फिक्र को धुएँ में उड़ाता चला गया।" अंकल पर जब मस्ती सवार होती तो वह ये गीत गुनगुनाने लगते और सब उनका साथ देते। पलक की खुशी के लिए यू-ट्यूब चैनल पर चैप्लिन की फिल्में भी सबके साथ मिलकर देखते।

अप्रैल की छः तारीख थी उस दिन। कुमुद जब सुबह उठी तो देखा पापा के चार-चार मिस्ड काल हैं उसके मोबाइल पर। शाम को अंताक्षरी खेलते समय उसने मोबाइल को म्यूट मोड में कर दिया था जिसे बाद में वह अनम्यूट करना भूल गई थी। तीन दिन बाद पापा का फोन आया था, पता नहीं क्या-क्या सोचा होगा उन्होंने। कुमुद ने तुरंत ही उन्हें काल बैक किया - "पापा, मोबाइल साइलैंट हो गया था सो पता ही नहीं चला आपके काल का... आप ठीक तो हैं, हम लोग भी अच्छे से हैं यहाँ पर।"

"बेटा, मैं तुम्हें लेने आ रहा हूँ, घर से निकल गया हूँ परसों सुबह कोटा पहुँच जाऊँगा, तैयार रहना।"

"जी पापा, तैयार रहेंगे हम।" - कुमुद चहकते हुए बोली - "कहाँ तक पहुँच गए हैं आप।"

"दानापुर आने वाला है, पटना में कुछ देर रुकेंगे, पास और सिक्योरिटी गार्ड को लेते हुए वहाँ से शाम को निकलेंगे।"

"ठीक है पापा, जहाँ सिग्नल मिलें बात करते रहिए।"

तीनों घर जाने की कल्पना करके पुलकित थे। देर से ही सही कुमुद के पापा को एम.एल.ए. होने की अहमियत का भान तो हुआ। कुमुद ने सगर्व यह सूचना सोनी आंटी को भी दी। पराग विशेष रोमांचित था। वह दो दिनों में अनेक बार कुमुद को थैंक्स कह चुका था। पलक ने भी कुमुद को गले लगाकर धन्यवाद कहा था। इसके बाद तीनों अपना सामान पैक करने में जुट

गए थे। केतन अंकल भी बच्चों की खुशी देखकर प्रसन्न थे। महीनों बाद अपने पैरेंट्स से मिलने की खुशी क्या होती है वह इससे भलीभाँति परिचित थे। उन्होंने भी तो हॉस्टल में रहकर कॉलेज की पढ़ाई की थी। कॉलेज की छुट्टियाँ होते ही पहली ट्रेन पकड़ कर घर भागते थे।

रात में नौ बजे कुमुद ने फोन लगाकर पता किया कि पापा कहाँ पहुँच गए। उस समय वह गोरखपुर की सीमा में प्रवेश कर रहे थे। रात में उनका वहीं मौसी के यहाँ रुकने का कार्यक्रम था। अगले दिन सुबह पाँच बजे गोरखपुर से निकलकर जयपुर के आसपास रात्रि विश्राम करने की योजना थी तथा उससे अगले दिन सूर्योदय से पहले चलने का प्रोग्राम था ताकि आठ-नौ बजे तक कोटा पहुँच जाएँ।

जयपुर पहुँचने से पहले शाम को पापा ने कुमुद को फोन किया - "तुमने चलने की तैयारी कर ली कि नहीं, कोटा में ज्यादा देर नहीं रुकेंगे, तुरंत निकलेंगे वहाँ से। तुम आंटी से कहकर चार लोगों के लिए तीन टाइम का खाना बनवा लेना, वहाँ आकर भुगतान कर देंगे उनको। यहाँ पर तेज बारिश हो रही है फिर भी हजारों नालायक लोगों का हुजूम सड़कों पर पिला पड़ा है, मानते ही नहीं कि कुछ दिन घर में रहे आएँ, सरकार उनके खाने-पीने की व्यवस्था करने के लिए कह रही है न।"

"ठीक है पापा, आंटी से बोलकर रास्ते के लिए खाना बनवा लूँगी।" - कुमुद ने कहकर फोन रख दिया। शायद उसे पापा की कुछ बातें पसंद नहीं आई थीं। क्या करे, उसके पापा हैं ही ऐसे, पता नहीं, शुरु से ही ऐसे थे या राजनीति में आकर ऐसे हो गए थे। पिछले कुछ सालों में अनेक बार उसने इस बारे में सोचा था पर कभी भी सही उत्तर खुद को नहीं दे पाई थी।

सुबह तीनों जल्दी उठ गए और नहा-धोकर तैयार भी हो गए। तीनों ने अपना सामान लाकर बरामदे में रख लिया था। पलक सबसे पहले उठी थी। नीचे आई तो देखा अंकल ब्रेडरोल के लिए उबले हुए आलू मींस रहे हैं और आंटी किचिन में पूड़ियाँ तल रहीं हैं। वह भी उनका हाथ बँटाने किचिन में आ गई। दोनों ने मिलकर सत्तर-अस्सी पूड़ियाँ बनाकर सिल्वर क्वाइल में पैक कर लीं। करेले और अरबी की सब्जियाँ आंटी पहले ही बना चुकी थी। सब्जी और आचार रखने के लिए हॉटकेस उन्होंने साफ करके रखा था। नाश्ते में ब्रेड रोल खिलाने की तैयारी थी।

आठ बज कर दस मिनट पर एक टवेरा घर के सामने आकर रुकी। केतन वर्मा फुर्ती से बाहर आए और आत्मीयता से हाथ जोड़ते हुए बोले – "आइए, शिवशंकर जी स्वागत है आपका, ड्राइंग रूम में बैठते है।"

इस बीच तीनों बच्चे भी वहाँ आ गए थे। तीनों ने शिवशंकर के पैर छुए। कुमुद ने कहा – "पापा, आप ठीक समय पर आ गए।"

शिवशंकर बच्चों से फ्री होकर केतन वर्मा की ओर मुखातिब हुए, बोले – "वर्मा जी, हम जल्दी निकलेंगे, बैठेंगे बिल्कुल नहीं, बहुत लंबा सफर तय करना है, बेमौसम बारिश भी हो रही है।"

"एक कप चाय तो हो सकती है, नाश्ता भी तैयार है।" – केतन वर्मा ने अनुरोध किया।

"अभी माफ कीजिए।" – शिवशंकर ने केतन वर्मा से कहा और फिर कुमुद की ओर मुखातिब होते हुए बोले – "बेटा कितना पेमेंट करना है अंकल को।"

"पापा मैंने नहीं पूछा, पूछने की हिम्मत नहीं हुई, वे हमें मानवता के नाते लेके आए थे कैसे पूछती उनसे।" – कुमुद फुसफुसाते हुए बोली।

"ठीक है तुम अपना सामान गाड़ी में रखो, ये बच्चे भी कितने नादान हैं केतन जी, हर बात में भावुक होने लगते हैं, बड़ी खराब आदत है इनकी... आप ही बताइए, कितना पेमेंट करूँ।" – शिवशंकर खिसियानी हँसी हँसते हुए बोले।

"आप बच्चों को सुरक्षित घर पहुँचा दीजिए, मेरा पेमेंट हो गया समझो।" – केतन वर्मा ने विनम्रता पूर्वक कहा।

तभी बूँदा-बाँदी शुरु हो गई। बच्चों ने अपना सामान गाड़ी में रखने के लिए उठाया ही था कि शिवशंकर बोले – "कुमुद क्या इतना सारा सामान है तुम्हारे साथ।"

"नहीं पापा, हम तीनों का है।" – कुमुद ने उत्तर दिया।

"बेटा, क्या है ये... इतने लोग नहीं जा सकेंगे गाड़ी में, सोशल डिस्टेंसिंग के सरकारी नियम कायदे भी हैं कुछ, इनको लाने के लिए मुख्यमंत्री जी बसों की व्यवस्था कर रहे हैं, कुछ दिन बाद आ जाएँगे ये लोग, तुम चलो।"

"पापा, ये हमको छोड़कर... ।" कुमुद कुछ कहना चाहती थी पर तब तक शिवशंकर गाड़ी में बैठ चुके थे। ड्राइवर ने गाड़ी भी स्टार्ट कर ली

थी। कुमुद वहीं खड़ी थी कि पापा की कड़कदार आवाज कानों मे पड़ी –"जल्दी बैठो"

कुमुद के बैठते ही बारिश शुरु हो गई। उसके अंदर पहले से ही बारिश हो रही थी। उसकी हिम्मत नहीं हुई कि वह नजरें उठाकर पलक और पराग को असहाय खड़े हाथ हिलाते हुए देख सके।

गाड़ी आँखों से ओझल होने तक पलक वहीं खड़ी भीगती रही। केतन अंकल ने आवाज दी – "पलक बेटा, अंदर आ जाओ, तबियत खराब हो जाएगी।"

पलक हँसी, वही चिरपरिचित हँसी। हर गम पर भारी पड़ने वाली हँसी।

फिर अचानक बारिश थम गई। शायद पलक की हँसी देखकर उसे अपनी निरर्थकता का एहसास हो गया था।

पीले हाफ पैंट वाली लड़की

अजब लड़की थी वह।

पहली बार देखने पर ही वह कुछ अलग, सबसे अलग लगी थी।

हम लोग नए-नए ओएशिस ड्रीम्स हाउसिंग सोसायटी में शिफ्ट हुए थे और डिनर के बाद सोसायटी-कैंपस में स्थित वाक-वे पर टहलने निकले थे।

वह आसपास के लोगों से बेपरवाह मोबाइल पर जोर-जोर से बात करती हुई हमारे आगे-आगे चल रही थी। उसकी बातों पर तो ज्यादा ध्यान नहीं गया लेकिन उसकी टिपिकल कलर-कॉम्बिनेशन वाली ड्रेस जरूर बार-बार उसे ही देखने के लिए विवश कर रही थी। उसने पीले रंग का हाफ पैंट और नारंगी रंग की टी-शर्ट पहनी हुई थी। पीछे से उसे देखना हवा में लहराते हुए सूरजमुखी का आभास करा रहा था।

अगले दिन फिर वह उसी समय टहलते हुए मिली। यह इत्तफाक ही था कि उस दिन भी वह हमारे आगे-आगे चल रही थी। उस दिन भी उसने पीला हाफ पैंट ही पहिना था लेकिन टी-शर्ट का रंग बदला हुआ था, सुर्ख लाल। वैसी ही निश्चिंत और तेज आवाज में बात करती हुई। उसकी बातों पर ध्यान न चाह कर भी बीच-बीच में चला जाता था। शायद माँ से बात कर रही थी किसी पारिवारिक मसले पर। बहू ने माँ को कुछ बोला होगा सो वह माँ को समझा रही थी।

कैंपस के वॉक-वे पर वहाँ रहने वाले बहुत से लोग सुबह-शाम टहलते थे जिनमें बहुत सी लड़कियाँ भी होती थी। कुछ लड़कियाँ शॉर्ट्स में भी होती थी और कुछ ट्रैकशूट में, लेकिन मुझे किसी ने भी आकर्षित नहीं किया था सिवाय पीले हाफ पैंट वाली लड़की के। लगभग सभी लड़कियाँ कानों में ईयर प्लग लगाए हनी सिंह, आतिफ असलम या एफ.एम. रेडियो सुनते हुए दीन-दुनिया से बेखबर टहलते मिलती थीं, केवल वही एक लड़की, सबसे अलग दिखाई देती, स्वयं में मस्त, फोन पर जोर-जोर से बातें करते हुए।

उसने अपने टिपिकल कलर सेंस के कारण ही मेरा ध्यान खींचा था

लेकिन कुछ दिनों तक उसके पीछे-पीछे चलते रहने के कारण उसकी बातों में भी दिलचस्पी होने लगी थी। वह हर दिन पीला हाफ पैंट ही पहने होती लेकिन टी शर्ट के रंग बदलते रहते। हर दिन का अलग रंग। मैंने रंगों पर गौर करना शुरु कर दिया। नारंगी रंग से शुरु हुआ सिलसिला सात दिन बाद फिर नारंगी रंग से शुरु हो जाता। मैं उसके पीछे-पीछे चलते हुए अक्सर रंगों के इस रहस्य को सुलझाने की कोशिश करता रहता। मैंने जया से भी इसकी चर्चा की पर उसकी रुचि टी-शर्ट के रंगों में नहीं थी। जया उसकी बातों में ज्यादा दिलचस्पी लेती थी और गौर से सुनने का प्रयास करती रहती थी। मैं भी सुनता था पर मेरा दिमाग रंगों की गुत्थी सुलझाने में उलझा रहता। मुझे लगता था कि रंगों की इस सीक्वेंस या कहिए चॉइस के पीछे कोई न कोई कारण अवश्य है वरना रंगों का क्रम कभी टूटता भी। फिर एक दिन मैंने इस रहस्य को डिकोड कर ही लिया। उस दिन वह अपने किसी मित्र से थ्री-जी स्पेक्ट्रम में हुए घोटाले के संबंध में बात कर रही थी, हमेशा की तरह तेज आवाज में। स्पेक्ट्रम... यह शब्द अनायास ही मेरे मन में कौंधा। स्पेक्ट्रम यानि कि इन्द्रधनुष, सात रंगों का एक दिलकश कलर बैण्ड... और कुछ ही क्षणों में दिमाग आर्कमिडीज की तरह "यूरेका, यूरेका।" करने लगा। उसके रंगों का रहस्य खुल गया। मैंने पहली बार जब उसे नारंगी टी शर्ट में देखा था उस दिन शुक्रवार था, इसी कारण कुछ समझ नहीं पा रहा था। अब रहस्य शीशे की तरह साफ हो गया, रंगों का क्रम शुक्रवार से नहीं रविवार से शुरु होता था। उस दिन वह बैंगनी कलर की टी शर्ट पहिन कर घूमती थी, इसके बाद नीली, आसमानी, हरी, पीली, नारंगी और लाल रंगों की। विबग्योर वाला सीक्वेंस... इंद्रधनुष के रंगों का क्रम। कमाल की लड़की थी वह, इतने दिनों तक नाहक ही रंगों के मायाजाल में उलझा कर रखा था। अब मन में दूसरा कौतुहल था, पीले हाफ पैंट और टी शर्ट के रंगों की यह चॉइस बेवजह नहीं हो सकती, कोई न कोई कारण जरूर है इसके पीछे। एक दिन वह भी पता लग ही जाएगा, मैं खुद को भरोसा दिलाता रहता। पर लड़की है बड़ी दिलचस्प, बोल्ड तो दिखाई ही देती थी, समझदार भी है।

एक माह हो गया था हमें टहलते हुए और वह हमारी आदत में शुमार हो चुकी थी। उसके पीछे-पीछे चलना मन को भाने लगा था और शायद उसे भी। यह हमारा भ्रम नहीं था बल्कि हमने महसूस किया था। एक दिन

हम टहलने के लिए पाँच मिनट विलंब से नीचे उतरे तो उसे डी-ब्लॉक के नीचे इंतजार करते पाया। हमारा वहम भी हो सकता है लेकिन यह वहम मन को अच्छा लगने वाला था इसलिए उस दिन ज्यादा सोच-विचार नहीं किया। चार दिन बाद जब हम एक बार फिर विलंब से नीचे उतरे तो उसे उसी स्थान पर खड़े देखा। जया ने नोटिस किया, धीरे से फुसफुसाई - "देखो, आपका इंतजार कर रही है।"

उत्तर में मैंने मुस्कुरा भर दिया। सदा की तरह मोबाइल पर वह चलते-चलते तेज स्वर में बात कर रही थी। पहले तो कुछ समझ में नहीं आया लेकिन जब उसने कहा - "अब बात नहीं करना मुझसे, तुम्हें रागिनी पसंद है तो उसी के पास जाओ... मेरे भेजे सारे मैसेज डिलीट कर देना, गुड बाय।" तो पता चला अपने बॉयफ्रेंड से बात कर रही है। दोनों की बातचीत सुनकर अच्छा नहीं लगा। दूसरी तरफ से क्या कहा गया, यह तो सुनाई नहीं दिया लेकिन पीले हाफ पैंट वाली लड़की बोलते हुए रुआँसी हो गई थी - "बहुत खराब हो तुम, तुमने पहले क्यों नहीं बताया, आंटी की तबियत खराब है और तुम्हें उनको लेकर डॉक्टर के पास जाना पड़ा। मैंने पौन घंटे तक तुम्हारा फीनिक्स मार्केट सिटी के फूड जोन में इंतजार किया, तीन बार काल भी किया, दो मैसेज भेजे... गुस्सा नहीं होती तो क्या करती। प्लीज माफ कर दो न मुझे।" फिर थोड़ा रुक कर बोली - "अच्छा तुम आंटी का ध्यान रखो, मैं सुबह आती हूँ उनसे मिलने। कल की छुट्टी ले लूँगी, दिन भर उनके साथ रहूँगी।"

अगले दिन मिली तो इच्छा हुई आंटी की तबियत के बारे में पूछूँ लेकिन इससे पहले कभी बात नहीं की थी अतएव हिम्मत नहीं हुई। इस ख्याल ने बात दिल में ही दबी रहने दी कि क्या सोचेगी वह, हमारी पर्सनल बातें इतने ध्यान से सुनते हैं ये बुढ़ऊ लोग।

शायद उसने हमारी विवशता भाँप ली। उस दिन उसकी बातें सुनकर यही लगा। वह किसी से बात करते हुए कह रही थी - "दीदी, आज मैं सुहैल की अम्मी के साथ पूरे दिन रही। बीमार थीं पर मुझसे मिलते ही स्वस्थ हो गईं। मम्मा से बात करो न आप, सुहैल आपकी छुटकी के लिए परफेक्ट पार्टनर है।"

कुछ देर की खामोशी, शायद दीदी की बात सुन रही थी, बोली - "ही

इज ए नाइस गाई, आई लव हिम वेरी मच दी... ही टू लव्स मी ए लॉट।"

तो पीले पैंट वाली लड़की को किसी मुस्लिम लड़के से प्यार है, मैंने सोचा। इसके घरवाले शायद ही विवाह के लिए तैयार होंगे। टहल कर वापस लौटते समय मैंने जया से उसकी राय पूछी तो उसने स्पष्ट कह दिया, ऐसा कोई भी रिश्ता वह स्वीकार नहीं करती। असमंजस में तो मैं भी था। कोई दूसरा होता तो मैं भी जया का ही साथ देता पर बात पीले हाफ पैंट वाली लड़की की थी। मन बार-बार दोनों के मिलन के लिए प्रार्थना करने को कह रहा था। उस रात इसी उधेड़बुन में ठीक से नींद भी नहीं आई।

इसके बाद कई दिनों तक सुहैल के बारे में सुनने को नहीं मिला। शायद दीदी के उत्तर का इंतजार था उसे। उस दिन वह कुछ ज्यादा ही खुश थी। मैंने अंदाज लगाया, माँ से बात हो रही है। मेरा अंदाज सही निकला, जब उसने कहा - "माँ, तुमको पता है मैं थोड़ा एडवांस हो गई हूँ, मॉडर्न लुक वाले कपड़े पहिनती हूँ। तुम पास होती तो जरूर टोकती, अरे ये क्या पहिन रखा है, आपकी ये झिड़की बहुत मिस करती हूँ... ।"

"...।"

"देखो सही कहा न मैंने, तुमने बिना देखे ही कितना लंबा लेक्चर झाड़ दिया।"

"...।"

"अच्छा भेजती हूँ... देख लेना, नाराज भी होना है तो हो लेना, कम से कम बाद में तो नहीं कहोगी कि लड़की बिगड़ गई है। वैसे दीदी बहुत तारीफ करती हैं मेरी। एम.एन.सी. में काम करना है तो लुक भी तो इंटरनेशनल होना चाहिए, कहती रहती हैं वह, सतीश जीजू भी फेसबुक पर ऑसम लिखकर कमेंट करते हैं। तुम सोच रही होगी कैसी बातें कर रही हूँ मैं? पर मैं बिगड़ी बिल्कुल नहीं हूँ, कपड़े पहिनने से भी कोई बिगड़ता है क्या।"

वह चिल्ड्रेन पार्क के किनारे लगे लाइटिंग पोल के पास रुकी और रोशनी में विभिन्न कोणों से सेल्फी लेने लगी। हमको रुक कर देखना उचित नहीं लगा अतएव वाक-वे पर चलते रहे। राउंड पूरा कर उसी जगह पर पहुँचे तो तेजी से कदम बढ़ाते हुए वह हमारे आगे-आगे चलने लगी।

"माँ छः फोटो व्हाट्सएप की हैं आपको, देख कर बताओ कैसी लग रही हूँ मैं, दादी को भी दिखाना।"

"..।"

"अरे माँ... क्या कहा, इतना छोटा पैंट पहिन कर मर्दों के बीच घूमती हूँ। सभ्य लोग रहते हैं यहाँ, कोई माइंड नहीं करता। आप भी जब आओगी तो साड़ी नहीं पहिनने दूँगी आपको, केवल सलवार सूट और जींस-टॉप।"

माँ-बेटी के बीच बहुत देर तक बातें चलती रही। नार्मल टाइम से दस मिनट ज्यादा टहल लिया था हमने। पर वह अभी और टहलने के मूड में थी। हम वापस लौट आए लेकिन उसे देखने की चाह में फ्लैट में पहुँचने के तुरंत बाद बालकनी में जाकर खड़े हो गए। वह डी-ब्लॉक के सामने खड़े होकर हमारे फ्लैट की ओर देख रही थी। हमें खड़े देखा तो अंदर चली गई।

अगले दिन वह थोड़ी देर से टहलने आई। हमें देखकर पहली बार मुस्कराई और मोबाइल पर बातों में खो गई। शायद छोटा भाई था उस तरफ, यह उसकी बातचीत सुनकर आभास हुआ। वह बोल रही थी - "रूनी, तू फिर बयासी परसेंट पर रुक गया। अभी तो दसवीं में ही पढ़ रहा है, इतने कम नंबर में तो अच्छे आर्ट्स कॉलेज तक में एडमिशन नहीं मिलेगा। तेरे कहने पर मैंने टैग हैउर वॉच लेके रखी है पर मिलेगी तभी जब नब्बे परसेंट से ऊपर नंबर लाएगा।"

"..।"

"हाँ, हाँ, तुझे दूँगी, तेरे लिए ही ली है लेकिन ओर मेहनत से पढ़ाई कर। आज ही तेरे लिए राखी ऑर्डर की है फ्लिपकार्ट से। एक नैवी ब्लू कलर की टी-शर्ट भी साथ में है, पहिन कर बहुत जमेगा तू, बिल्कुल जैकब हॉपकिंस सरीखा। मुहुर्त पर राखी बँधवा लेना... आई मिस यू माय स्वीट ब्रो।"

"..।"

"मैं नहीं आ सकती। बहुत इंपोर्टेंट प्रोजेक्ट पर काम कर रही हूँ, एक महीने के अंदर लॉन्चिंग है। तब तक तो छुट्टी ले ही नहीं सकती। सो प्लीज, इस साल और... अगले साल पक्का रक्षाबंधन पर तेरे साथ रहूँगी। अच्छा बता भाभी तेरा ध्यान रखती हैं या नहीं, माँ से क्यूँ लड़ती रहती है वह।"

उसकी बातें सुनकर जया भी उदास हो गई, बोली - "कितने साल हो गए केदार भैया को राखी बाँधे, गिनती भी याद नहीं अब तो।"

"तुम्हें जाना है तो रिजर्वेशन करा लेते हैं, साथ चलेंगे इस बार।" - मैंने दिलासा देने के दृष्टिकोण से कहा।

"रहने दो, अथर्व किसके पास रहेगा, उसे अकेला भी तो नहीं छोड़ सकते, डे-केयर पर भरोसा नहीं होता।"

"स्मिता से कह देना एक सप्ताह के लिए माँ को बुला ले।" - मैंने सलाह दी।

"उनके बस का नहीं है अथर्व के साथ भाग-दौड़ कर पाना... हम दोनों को ही कितना थका देता है। थोड़ा और बड़ा हो जाए, फिर चलेंगे।"

कुछ दिन और गुजर गए। हमारी और पीले हाफ पैंट वाली लड़की की दिनचर्या पूर्ववत चल रही थी। उस दिन उसकी आवाज में गजब का जोश था। फोन लगाते ही बोली - "माँ पहले पापा से बात कराइए, उसके बाद आपसे बात करती हूँ।"

थोड़े अंतराल के बाद पुनः उसकी आवाज कानों में पड़ी - "आई मेड यू प्राउड पापा। आज मुझे कंपनी के वाइस प्रेसीडेंट की तरफ से एक्सीलेंस अवार्ड मिला और दो लाख का इयरली हाइक... अब मेरा पैकेज अठारह लाख का हो गया पापा, आप खुश तो हैं न अपनी बेटी की कामयाबी पर।"

"..।"

"थैंक यू पापा... लव यू।"

"मम्मा आज मैं बहुत खुश हूँ, लगता है आसमान में उड़ रही हूँ और चंद्रमा मेरी मुट्ठी में समा गया है। मैं अगले हफ्ते आ रही हूँ अपनी खुशी सेलीब्रेट करने... कहीं घूमने चलेंगे... पचमढ़ी या कान्हा। पापा से भी कह दीजिए एक हफ्ते काम से पूरी छुट्टी। छुटंका पास में हो तो उससे भी बात कराइए... कल भाभी से बहुत देर तक बात हुई थी और भैया से भी। बच्चे के लिए ताना मत दिया करो, उन्हें फील होता है। वह दोनों अभी तीन साल तक बच्चा नहीं चाहते हैं तो उनकी बात भी मान लो। उन लोगों ने हर चीज प्लान कर रखी है, अभी केवल घूमना-फिरना, मस्त रहना, इसके बाद बच्चा। दो तीन साल देर से सही आप दादी तो बनेंगी हीष

हम अपने फ्लैट में जाने के लिए लिफ्ट में थे कि जया ने बात छेड़ी - "आज तो बहुत समझदारी भरी बातें कर रही थी आपकी वो पीले हाफ पैंट वाली लड़की।"

"वो तो हमेशा ही करती है। मैंने कभी उसे निर्रथक बातें करते नहीं सुना।"

"उसका सुहैल से प्यार करना भी यदि आपको बहुत अच्छा लगता है तो करवा दीजिए उसका निकाह उससे।" – जया तुनकते हुए बोली।

"तुम भी कहाँ की बात कहाँ ले जाती हो, प्यार धर्म देख कर नहीं होता मन की पवित्रता देख कर होता है।"

"रहने दो अपनी फिलॉसफी... भूल गए केदार भैया की बेटी का किस्सा, वह तो सिंधी लडके से शादी करना चाहती थी किसी मुसलमान से नहीं, सुनकर आप कितना भड़क गए थे और शादी में न जाने तक की बात कह डाली थी आपने।"

बात सही थी। मैं निरुत्तर हो गया। सोचने लगा आखिर ऐसा क्या है कि मैं इस पीले हाफ पैंट वाली लड़की के लिए अपनी मान्यताएँ तक भूल गया हूँ, उनको तिलांजलि दे दी है। क्या समय के साथ जीवन-मूल्य इतनी आसानी से बदलते रहते हैं या फिर यही दोहरा चरित्र है जो अपनों के लिए अलग व्यवस्था चाहता है और दूसरों के लिए अलग, पर मुझे अपने इस रुख परिवर्तन में कुछ भी अस्वाभाविक नहीं लग रहा था। मैं दिल से चाह रहा था कि उसकी शादी सुहैल से हो जाए।

दो दिनों बाद उसे कहते सुना – "माँ दीदी ने आपको कोई बात बताई है क्या, मैं आपका उत्तर सुनना चाहती हूँ यह मेरी जिंदगी का प्रश्न है"

"..।"

"अरे ये क्या... दीदी ने अब तक आपको नहीं बोला, मैं आपसे बाद में बात करती हूँ पहले दीदी की खबर ले लूँ। मेरे भले की बिल्कुल भी परवाह नहीं है उन्हें... और माँ, मैं आपसे मिलने नहीं आ पा रही हूँ। कंपनी मुझे छुट्टी नहीं दे रही है, वह मुझे नए एसाइनमेंट पर फ्रैंकफर्त भेज रही है, वीसा के लिए डॉक्यूमेंट सब्मिट करना है।"

उसके मुँह से फ्रैंकफर्त जाने की बात सुनकर अच्छा नहीं लगा। उसके बिना टहलने का आनंद जाता रहेगा। जया भी उदास थी। उस दिन हम समय से कुछ पहले ही टहल कर वापस लौट आए।

अगले दिन वह टहलते समय नहीं दिखी, शायद फ्रैंकफर्त जाने की तैयारियों में व्यस्त होगी। जया ने पूछा भी –"क्या वीसा के लिए कहीं बाहर जाना पड़ता है, बंगलौर में ये सुविधा नहीं है क्या।"

जया की बात सुनकर आभास हो गया, वह भी उसे मिस करने लगी

है। आज तो पहला ही दिन है, अब तो आदत डालनी ही होगी उसके बिना टहलने की। दो दिन और गुजर गए, वह नहीं दिखी। वाक-वे के बीस चक्कर लगाने का सिलसिला दो दिनों में ही घट कर बारह पर आ गया।

मैं अथर्व को सारा मोन्टेसरी से लेकर लौट रहा था कि मोबाइल की घंटी बजी। अनजान नंबर से काल था अतएव रिसीव नहीं किया। फ्लैट पर पहुँचते-पहुँचते देखा पाँच मिस-काल थे। मैं रि-डायल करने की सोच ही रहा था कि फिर घंटी बज उठी। मैं 'हैलो' ही कह सका कि उधर से आवाज आई - "करन अंकल बोल रहे है।"

मेरे हाँ कहते ही वह बोली - "अंकल मैं गायत्री रंगराजन बोल रही हूँ। नीला आपसे अभी मिलना चाहती है।"

"कौन नीला, मैं किसी नीला को नहीं जानता, लगता है आप कुछ कन्फ्यूज हो रही है।"

शायद मोबाइल को वॉइस-ऑन मोड में रखा गया था। एक मद्धिम सा स्वर कानों में पड़ा, "उनसे कहो पीले हाफ पैंट वाली लड़की, नीला नही।"

मैं बुरी तरह चौंका। पूछा - "कहाँ है नीला, क्यूँ मिलना चाहती है।"

"आप स्वयं पूछ लीजिए उससे, पर आप तुरंत आइए, देर मत कीजिए।"

एच.सी.जी. कैंसर केयर हॉस्पिटल का नाम सुनकर सिर चकरा गया और सैकड़ों प्रश्न मन को मथने लगे। कहीं नीला को तो कुछ नहीं हो गया, नहीं नहीं, उसे कुछ नहीं हो सकता, उसका कोई अपना एडमिट होगा... मुझसे कुछ हेल्प चाहिए होगी।

मैंने शीघ्रता से यूबर बुक की और चलते-चलते जया को संक्षेप में बता भी दिया।

अस्पताल के बाहर ही मुझे गायत्री रंगराजन मिल गई, वह मेरा ही इंतजार कर रही थी। उसके हाथ से पास लेकर पाँच मिनट में ही मैं नीला के कमरे में था। नीला आँख बंद किए लेटी थी। तीन दिनों में ही वह सूखे गुलाब के फूल की मानिंद हो गई थी... कांतिहीन मुख और पीतवर्णी काया। उसे इस हालत में देख कर मन व्यथित हो गया। गायत्री से पूछा - "क्या हुआ है नीला को, उसके घर वालों को खबर की या नहीं... कोई अब तक पहुँचा क्यों नही।"

"अंकल, नीला तो अनाथ है, वह तो बालग्राम में पली-बढ़ी है, अपना

कहने वाला कोई नहीं है उसका।" - गायत्री ने अपनी आँखों में उतर आए आँसुओं को पोंछते हुए कहा - "नान-होजकिन लिम्फोमा है उसे, डॉक्टर ने बहुत पहले ही बता दिया था कि तीन माह से अधिक का समय नहीं है उसके पास, बहुत बहादुर निकली वह, डॉक्टर को झूठा साबित कर दिया और पाँच माह गुजार दिए, लेकिन अब शायद चौबीस घंटे भी नहीं है उसके पास।"

गायत्री के एक-एक शब्द दिल पर गहरा आघात पहुँचा रहे थे। लगा झूठ कह रही है गायत्री। अनाथ कैसे हो सकती है नीला। चार महीनों तक प्रतिदिन मैंने स्वयं उसे कभी माँ से, कभी पापा से, कभी बहिन से, कभी भाई से और कभी अपने बॉय-फ्रेंड से बातें करते सुना है। कितनी बार उसकी बातें सुनकर मैंने और जया ने आपस में चर्चा भी की है। मन गायत्री की बात स्वीकारने को तैयार नहीं था। हो सकता है नीला ने उसे कभी बताया ही न हो या मजाक में अनाथ होने की बात कह दी हो। मेरे भीतर चल रहे अंतर्द्वंद्व को भाँपते हुए गायत्री बोली - "आपको विश्वास नहीं हो रहा न... नीला है ही ऐसी, मुझे भी जब उसने अपनी बीमारी के बारे में बताया था तो मैं कई दिनों तक रोई थी लेकिन वह बिल्कुल निश्चिंत और बेफिक्र थी, जैसे कुछ हुआ ही न हो। कहती, जिंदगी ने जब कुछ दिया ही नहीं और जिंदगी में कुछ मिला ही नहीं तो मौत क्या ले जाएगी... देखना जिंदगी को ठेंगा दिखाते हुए चली जाऊँगी एक दिन।"- कहते-कहते गायत्री का गला भर आया और उसका स्वर भर्राने लगा।

कुछ देर कमरे में नीरवता रही। गायत्री इस बीच कई बार अपने आँसू पोंछ चुकी थी। बहुत से प्रश्न मेरे मन को अशांत किए हुए थे। बहुत कुछ पूछना था गायत्री से पर उसकी हालत देख कर हिम्मत नहीं कर पा रहा था।

"अंकल आप कुछ कहना चाह रहे हैं तो कह दीजिए।" - गायत्री मेरे पास आकर कब खड़ी हो गई पता ही नहीं चला।

"बहुत सारे सवाल हैं मन में। पिछले चार महीनों से मैं स्वयं नीला को हर रोज उसके घर वालों से बात करते सुनता आ रहा हूँ... नीला अनाथ है, विश्वास नहीं हो रहा।"

"हाँ अंकल, पिछले तीन सालों को छोड़कर नीला की पूरी जिंदगी ही बालग्राम में बीती है।" - गायत्री थोड़ा रुकी और नीला के बैग से उसका

मोबाइल निकाल कर दिखाते हुए बोली – "इसी फोन से बात करती थी न नीला, आप स्वयं देख लीजिए इसे।"

मैंने गायत्री के हाथ से फोन ले लिया – "इसमें तो सिम ही नहीं है और न किसी के नंबर हैं इसमे।"

"हाँ अंकल, अब तो मेरी बात पर विश्वास हो गया न आपको, तीन माह में वह जिंदगी का हर रंग जी भर के देखना चाहती थी, हर रिश्ते को जीना चाहती थी, इसीलिए वह रोज किसी न किसी से बातें करने का अभिनय करती थी, जिसे आप सच मानते रहे। हर दिन वह आकर मुझे बताती थी कि आज मम्मा से बात हुई, आज पापा से, तो कभी दीदी से, छोटे भाई से तो कभी भाभी से... बहुत तरोताजा फील करती थी वह इस आभासी संसार में जीकर। मैं उसे खुश देखने के लिए कुरेद-कुरेद कर पूछती कि माँ ने क्या कहा, पापा से क्या बात हुई और घर पहुँच कर रोती।"

"तो क्या सुहैल नाम का भी कोई नहीं है।"

"है अंकल, सुहैल उसका नहीं मेरा बॉय-फ्रेंड है लेकिन न मेरे और न उसके पेरेंट्स इस शादी के लिए तैयार थे, इसीलिए नीला जिंदगी की इस विवशता के रंग को भी महसूसना चाहती थी। पेरेंट्स के खिलाफ जाने की हमारी हिम्मत नहीं हुई और हमने अपनी राह अलग कर ली। पंद्रह दिन पूर्व वह कंपनी चेंज करके फ्रैंकफर्त चला गया।"

"सचमुच कितनी अजीब है नीला।" – मैं बुदबुदाया – "मौत के इतने नजदीक खड़ी होकर भी जिंदगी के हर पल का आनंद लेती रही।"

पिछले चार महीनों में जो कुछ घटा था, सब याद आने लगा। गायत्री की आवाज सुनकर सोचने का क्रम भंग हुआ – "पता है अंकल, गायत्री आपके बारे में क्या सोचती है।"

"पता तो नहीं पर कह सकता हूँ, गलत तो नहीं ही सोचती होगी।"

"वह कहती है डॉक्टर ने तो तीन महीने की जिंदगी दी थी... दो माह की एक्सटेंडेड जिंदगी तो करन अंकल और आंटी के कारण मिली है।"

"हमें तो कुछ पता भी नहीं था नीला के बारे में, हम तो उसका नाम तक नहीं जानते थे, हमारे लिए तो वह केवल पीले हाफ पैंट वाली लड़की भर थी। हमने तो कुछ नहीं किया उसके लिए।" – मैंने विस्मय से गायत्री की ओर देखते हुए कहा।

"अंकल पिछले चार महीने से आप और आंटी उसके साथ टहल रहे थे। कई बार जब वह मम्मी और पापा से हवा में बात करती थी तो आप दोनों को सुनाने के लिए ही तेज-तेज बोला करती थी। उसे लगता था कोई तो है जो उसकी बातें ध्यान से सुन रहा है वरना सब उसे पागल, बेहूदी, नानसेंस और पता नहीं क्या-क्या कहते रहते थे। वह हर्ट होती थी पर आप लोगों को देखकर चहक उठती थी। उसकी आँखों में एक खास चमक आ जाती थी, जब वह मुझसे आपके संबंध में बात करती। काश जिंदगी को एंजॉय करना मैं भी उससे सीख पाती... उसका वियोग मैं कैसे सहूँगी, सोच कर ही काँपने लग जाती हूँ।" - कहते हुए गायत्री की रुलाई छूट गई।

रोना तो मेरा दिल भी चाहता था। एक अनजान सी लड़की हमारे बारे में इतना पॉजिटिव सोचकर हौसला पाती रही और हम मात्र उसकी अजीबोगरीब ड्रेस और तेज-तेज बोलने की आदत से अपना मनोरंजन करते रहे। हमने तो उससे कभी बात करने का प्रयास भी नहीं किया, उसका नाम जानने तक की कोशिश नहीं की और वह न केवल हमारा नाम जानती है, हमारा नंबर उसके पास है। दो सौ अस्सी फ्लैट्स की सोसायटी में वह हमें अपना सबसे बड़ा हितैषी भी मानती रही। सचमुच बहुत अजीब है नीला। उसको देखकर हमारा पहला इंप्रेशन भी यही था, पर वह अजीब कहाँ, वह तो सबसे अलग, बहुत जिंदादिल लड़की है।

कुछ देर तक हम दोनों चुपचाप बैठे नीला की ओर देखते रहे। मन में गुबार उठता रहा और उसे बाहर आने से रोकने के प्रयास में अधीरता बढ़ती रही। इच्छा हुई नीला के सिर पर हाथ फेरूँ। मेरे हाथ का स्पर्श पाते ही उसने आँखे खोल दीं - "अंकल... आ... गए... आप... आंटी नहीं... आई।"

"आंटी आ जाएँगी थोड़ी देर में... तुम्हारा नटखट भतीजा घर में अकेले कैसे रहता... उसे अस्पताल लेकर भी नहीं आ सकते थे, इसलिए आंटी को रुकना पड़ा उसके साथ।" - मैं बड़ी मुश्किल से बोल सका।

"तब तक बहुत देर हो जाएगी।"- नीला का स्वर डूब रहा था। गायत्री यह देख कर डॉ राघवेंद्र को बुलाने हेल्प-डेस्क की तरफ दौड़ी।

"अंकल आप मेरी इतनी बात तो मानेंगे न, मुझे अस्पताल से सीधे श्मशान नहीं जाना है, अपने घर से अपनों के हाथ से विदा होना है। अपनी विदाई की सारी तैयारी की हुई है वहाँ। कल बुधवार है, आंटी से कह

दीजिए वह मुझे मेरी प्रिय ड्रेस में ही विदा करें... पीला हाफ पैंट और हरी टी शर्ट। मेरे हैंडबैग में एक पेन ड्राइव है, विदा के समय उसे जरूर सुनवा देना... सुकून से विदा हो सकूँगी... विदा अंकल।" - कहते हुए नीला ने आँखें बंद कर ली। मेरी आँखों से आँसू बह निकले। डॉ राघवेंद्र ने नीला की नब्ज टटोली और गायत्री के कंधे थपथपाते हुए कमरे से बाहर हो गए। गायत्री सुनसान में देखते हुए वहीं जमीन पर बैठ गई।

नीला की मौत की खबर सुनकर जया खुद पर नियंत्रण नहीं रख सकी और बहुत देर तक फूट-फूट कर रोती रही। रात भर नीला का शव मारचुरी में रहा। अगले दिन मैं और गायत्री उसका शव लेकर उसके फ्लैट डी-602 में लेकर आए। फ्लैट में प्रवेश करते ही टीवी वाली दीवार के ऊपर बड़े-बड़े अक्षरों में लिखा था - "आनंद कभी नहीं मरते."... गायत्री ने पहले ही मुझे बता दिया था कि नीला हर रोज राजेश खन्ना की आनंद फिल्म देखा करती थी। ये फिल्म उसे अपनी कहानी लगती थी।

जया ने नीला की इच्छानुसार उसे पीला हाफ पैंट और हरी टी शर्ट पहना कर अंतिम विदा के लिए तैयार किया। मैंने उसकी दी हुई पेन ड्राइव को म्युजिक सिस्टम में प्ले किया। पहले गीत के बोल हवा में तैरने लगे - "जिंदगी प्यार का गीत है, इसे हर दिल को गाना पड़ेगा। जिंदगी गम का सागर भी है, हँस के उस पार जाना पड़ेगा।" फिर एक के बाद एक कई गाने बजते गए - "जिंदगी हँसने गाने के लिए है पल दो पल, इसे खोना नहीं, खो के रोना नही।", "जीवन चलने का नाम, चलते रहो सुबहो शाम, ये रस्ता कट जाएगा मितरा।", "ये जीवन है, इस जीवन का यही है यही है यही है रंग रूप, थोड़े गम हैं थोड़ी खुशियाँ, यही है यही है यही है छाँव धूप।", "जिंदगी का सफर है ये कैसा सफर, कोई समझा नहीं कोई जाना नही।", "आदमी मुसाफिर है आता है जाता है, आते जाते रस्ते में यादें छोड़ जाता है।", "जिंदगी के सफर में गुजर जाते हैं जो मकाम, वो फिर नहीं आते, वो फिर नहीं आते।"

बहुत सोच समझ कर नीला ने गाने चुने थे, जिंदगी और ऊर्जा से भरपूर। उसकी अर्थी उठाते हुए सबकी आँखें नम थी। डॉ राघवेंद्र अप्रत्याशित रूप से उसकी अर्थी को कंधा देने आ पहुँचे थे। उसके म्युजिक प्लेयर पर "तुझे जीवन की डोर से बाँध लिया है, तेरे जुल्मो सितम सर आँखों पर / मैंने

बदले में प्यार के प्यार दिया है, तेरी खुशियाँ और गम सर आँखों पर।" गीत बजने लगा था।

और विदा हो गई प्यार की डोर में बाँध कर, छोटी सी उम्र में बड़ी सी जिंदगी जीकर, पीले हाफ पैंट वाली लड़की... ।

यात्रा

हमेशा शोर-शराबे में डूबी रहने वाली आजाद नगर झुग्गी बस्ती में शमशानी सन्नाटा अपने पैर फैला चुका था। वहाँ रहने वाले अधिकांश लोग अपने घरों पर ताला जड़कर अपने-अपने गाँवों की ओर कूच कर गए थे। जितना जरूरी सामान, साथ में ले जा सकते थे, बाँध कर ले गए थे। जो लोग किसी कारण वश रुके हुए थे उनमें से भी कुछ लोग शनैः-शनैः बस्ती से विदा होते जा रहे थे। अब गिनती के घरों से ही रात में झपझप करती रोशनी दिखाई देती थी जिससे पता चलता था कि उस घर में अभी भी लोग-बाग डेरा जमाए हुए हैं। दहशत इतनी कि दिन में मुश्किल से ही कोई बस्ती में दिखाई देता था, जो थे, वे अपने घरों में दुबके रहते। वातावरण में हरदम एक अजीब सा खौफ, एक विचित्र सी बेचैनी घुली रहती।

उसी बस्ती में एक झोपड़ी, रैपुरा के सुदामा की भी थी। कई दिनों से सुदामा जत्थों में बस्ती छोड़कर जा रहे लोगों को देख रहा था। उसके मन में भी अपने गाँव जाने का विचार अनेक बार आ चुका था पर हजार कि. मी. की दूरी पैदल तय करने के नाम पर दिल काँप जाता था। वह अकेला होता तो किसी तरह हिम्मत करके चल भी देता पर ग्यारह साल की जूही भी उसकी जिम्मेदारी थी। उसकी ओर नजर डालता तो हिम्मत जवाब दे जाती।

सुदामा के आसपास की झुग्गियों में रहने वाले उसके संगी-साथी एक-एक कर जा चुके थे। झुग्गी से बाहर निकल कर बस्ती में साँय-साँय करते सन्नाटे को जब भी वह महसूस करता उसका दिल बैठने लगता। उस दिन वह बस्ती का चक्कर लगाकर लौटा था। घर के भीतर पड़े-पड़े कमर अकड़ गई थी, कमर सीधी करने का बहाना कर वह पूरी बस्ती का जायजा ले आया था। आकर खाना खाया और हमेशा की तरह खटिया पर धँस गया। जूही बर्तन धोने में व्यस्त थी। कुछ देर तक सुदामा छप्पर को ताकते हुए विचारों में खोया रहा फिर जूही को आवाज दी - "बिट्टो, कछू कहने है तुमसे।"

"बोलो बापू।" - जूही हाथ पोंछते हुए बोली।

"पूरी बस्ती खाली हो गई है, गिरधारी और रामरतन भी गाँव जाने की कह रहे हैं, अपनो सामान बाँधवे में जुटे हैं दोनों, तुम कहो तो हमऊँ निकल चलत हैं उनके संगे जहाँ से।" - सुदामा ने चिंतित स्वर में जूही से कहा।

"इत्ती दूर पैदल कैसे चलहो बापू, तबियत भी तुम्हारी ठीक नहीं है।" - जुही ने पास ही पड़ी दूसरी खटिया पर बैठते हुए कहा।

"चल लेंगे बिटवा, जैसे इत्ते सारे लोग जा रहे हैं हम भी साथ में हो लेंगे, हाथ में काम-धाम वैसे भी नहीं है, कछु दिनन में फाँकन की नौबत आ जैहे, फैकटरी खुलबे को भी ठिकानो नहीं है... गाँव पहुँच कर कम से कम रुखी-सूखी खावे तो मिल जैहे, सुनत है गाँव में मनरेगा को काम भी शुरु होवे बालो है, कछु न कछु काम उते मिलई जैहे, बाई दद्दा की भी चिंता सता रही है, ऐसी बिपदा में अकेले हैं दोनऊ।"

"ठीक है बापू, गिरधारी चाचा कबै निकल रहे हैं गाँव को, हम भी अपनो सामान बाँध लेत है।"

"सूरज निकलबे से पहले बोलो हतो, तुम सामान समेटो, हम पक्को पता करके आवत है।" - सुदामा खटिया से उठा और खूँटे पर टंगी शर्ट उतार कर अपने कंधे पर डालते हुए झुग्गी से बाहर निकल गया।

गिरधारी से मिलकर सुदामा लौटा तो अपेक्षाकृत खुश था। जूही बस्ते में अपनी कॉपी, किताबें जमा रही थी। ओढ़ने, बिछाने, पहिनने के कुछ कपड़े और बचा हुआ आटा, दाल, चावल, आलू, प्याज आदि दो अलग-अलग थैलों में उसने पहले ही रख लिया था। सामान के थैलों पर नजर डालते हुए सुदामा बोला - "बिट्टो, तुमने तो सारो सामान इतनी जल्दी बाँध लओ। गिरधारी ने कहो है कि पंद्रह-बीस दिन रास्ते में लग जैहें सो खावे-पीवे को सामान के साथ कछू बर्तन-भाँडे भी ले चलबो जरूरी है, पानी की पिकिया भी अबई से भरके रख लेत हैं सबेरे जल्दी-जल्दी में भूलई न जाएँ।"

"कपड़न के थैला में दो ठो गंजी और तस्तरी रख लई हैं बापू।" - जूही ने कहा - "कितने बजे निकलने है घर से।"

"गिरधारी ने सबेरे चार बजे कहो है ताकि तेज धूप होवे से पहले पलवल तक पहुँच जाएँ फिर उते से शाम को चलहे।" - सुदामा ने कहा।

"दस बज रहे हैं बापू, अब तुम आराम कर लो, हम जल्दी से रस्ते के

लाने पूड़ी बना लेत हैं... फिर स्टोव भी पैक करके रख लेबी।" - जूही बोली।

सुदामा चौदह साल पहले अपने गाँव रैपुरा से फरीदाबाद आया था। गाँव में लगातार तीन सालों के सूखे ने खाने-कमाने के सभी स्त्रोत सुखा दिए थे। गाँव के अधिकांश लोग कमाने खाने का ठिकाना ढूँढ़ने पलायन कर गए थे। सुदामा के सामने भी दो जून की रोटी जुटाने का संकट आ खड़ा हुआ था। अधेड़ हो चले बाई-दद्दा और गर्भवती पत्नी गौरी के भरण-पोषण की जिम्मेदारी उसी के कंधों पर थी। दो बकरियाँ और एक मिट्ठू भी घर पर था। काम की तलाश में सुदामा अनेक बार पास के कस्बे देवेंद्र नगर भी होकर आया था लेकिन नियमित काम का कोई ठिकाना नहीं बन सका था। दो चार दिन दिहाड़ी पर काम मिल जाता पर उतनी मजूरी से चार प्राणियों को भरपेट खाना भी नसीब नहीं हो पाता। बकरियों के खाने की व्यवस्था घर के पीछे लगे इमली, बेर और बबूल के पेड़ों की पत्तियों तथा खेत में उगी घासपूस से हो जाती। गौरी गर्भवती होने के बावजूद ठकुराइन की सेवा टहल कर ज्वार व कुटकी की थोड़ी बहुत व्यवस्था कर लेती। हर बीतते दिन के साथ जिंदगी की जद्दोजहद बढ़ती जा रही थी। पास के गाँव के कुछ लोग सिमरिया में हीरे की खदान में काम करते थे। सूरत के जिस सेठ ने इन खदानों को लीज पर लिया था उसके मुनीम से भी सुदामा दो बार मिन्नतें कर आया था पर उसने भी टका सा जबाव दे दिया था - "खदान घाटे में जा रही है तुम्हें कहाँ से पैसे दूँगा।" अब सुदामा मुनीम को पलट कर जवाब तो दे नहीं सकता था कि "कायखों झूठ बोलत हो... अबे मुश्किल से दस-बारह दिना भए हैं जब खदान से छः कैरेट को हीरा निकलो हतो।" किस्मत का फेर समझ कर मुँह लटकाए वापस आ गया था सुदामा।

उस दिन उसकी आँखों में नींद नहीं थी। देवेंद्र नगर के जिन मास्साब के यहाँ वह तीन दिनों से रेजागिरी कर रहा था, उनका अचानक हार्टफेल हो गया था। उनके घर में कोहराम मचा हुआ था सो बाहर से ही सारा दृश्य देखकर चुपचाप लौट आया था। तीन दिनों की मजूरी के पैसे भी डूब गए थे। ऐसे में वह उनके घर में किसी से रोजन्दारी के पैसे कैसे माँग सकता था? पैसे डूबने की उतनी चिंता भी नहीं थी उसे जितनी मास्साब की मौत से बीस-पच्चीस दिनों का काम हाथ से चले जाने की थी।

उस दिन भी सुदामा आज की ही तरह खटिया पर लेटा सोच रहा था, फर्क केवल इतना था कि उस दिन वह लेटे-लेटे खुले आसमान को ताक रहा था जबकि आज झुग्गी की छत के नीचे लेटा हुआ था। उस दिन शाम को उसे गाँव की देवी मंदिर का पुजारी टकरा गया था, उसे देखते ही उसका पारा चढ़ गया था। दो साल हो गए थे जब वह देवी मंदिर में मत्था टेकने गया था और उसका हाथ देखकर पुजारी ने कहा था - "सुदामा तुम्हारी भागरेखा तो बहुतई जबर्दस्त है, कछु दिनन में बहुतई अच्छे दिन आवे वाले हैं तुम्हारे।" "लबरा (झूठा) कहीं का, दो साल से ऊपर हो गए ई बात को... अच्छे दिनन की बाट जोहत-जोहत ऐसे दुर्दिन गले पड़ गए कि जान हलक में अटकी पड़ी है। इकइस रुपैया हड़पबे के चक्कर में ससुरे ने कैसो चूतिया बनाओ हमें और हम बन भी गए। हमारी मति फिर गई थी जो तुरंत निकाल के इकइस रुपैया भी ऊके हाथ पे धर दए हते। गरीबन के हाथ में भी भागरेखा होवत है कहूँ, अगर होती तो कायखों गरीबन खो तिल-तिल करके मरने पड़तो। सबई कहत हैं घूरे के दिन भी फिर जात हैं पर ऊके दिन काय नहीं फिर रहे। का वो घूरे से भी गओ बीतो है।" सोचकर परेशान हो गया था सुदामा।

यदि 'घूरे के भी दिन फिरत हैं' वाली कहावत सही है तो फिर सुदामा के दिन फिरना भी लाजिमी था। सुदामा को जितनी ठोकरें खानी थी, खा चुका था वह, जितने दरवाजों पर माथा घिसना था घिस चुका था वह। उसके भाग्य से गाँव से हो रहे पलायन की खबर सुनके उसके रिश्ते के काका नरहरि यादव गाँव में रह रही अपनी पत्नी को लेने आए हुए थे। उन्होंने सुदामा की परेशानी और विवशता को भाँपते हुए उसे अपने साथ फरीदाबाद चलने को कहा। बाई-दद्दा और गर्भवती गौरी का ध्यान कर वह एकाएक निर्णय नहीं ले सका। यह तो अच्छा हुआ कि उन तीनों ने उसे हौसला दिया और वह नरहरि काका के साथ चलने को तैयार हो गया। नरहरि फरीदाबाद में एक टायर फैक्टरी में चौकीदारी करते थे। इतवार तथा अन्य छुट्टी वाले दिनों में वह रबर ब्लेंडिंग यूनिट के वर्क्स मैनेजर कपूर साहब के यहाँ बागवानी का काम करने जाते रहते थे, जिस कारण मैनेजर की नजर में उनकी छवि एक मेहनती और विश्वसनीय कर्मचारी की बन गई थी। उनसे कह कर ही नरहरि ने सुदामा के लिए नौकरी की व्यवस्था

टायर फैक्टरी में करवा दी थी।

नौकरी लगते ही सुदामा की हैसियत में सुधार आने लगा। वह आधी पगार गाँव भेज देता और आधे में अपना गुजारा अच्छे से कर लेता। नरहरि ने अपने पास ही आजाद नगर बस्ती में उसके लिए भी झुग्गी की व्यवस्था करवा दी। तीन सालों के भीतर ही उसने पास की झुग्गी को खरीद लिया था। इसी बीच जूही के पैदा होने की खबर मिली। साक्षात लक्ष्मी आई थी घर में। जिस दिन वह पैदा हुई थी उसी दिन सुदामा ने अपनी झुग्गी में 'गिरह परवेश' किया था।

सुदामा ने करवट बदल कर जूही की ओर देखा। वह गहरी नींद में थी। घर के सारे काम का बोझ उस नन्ही सी जान पर ही था। थक कर निढाल हो जाती है। छः सात महीने पहले तक कितनी छोटी सी लगती थी। स्कूल से लौटकर गली की लड़कियों के साथ लंगड़ी खेलती रहती और जब वह थकाहारा फैक्टरी से लौटता तो उससे कहानी सुने बिना नहीं सोती थी। पर गौरी के जाते ही एकदम से सयानी हो गई। जिम्मेदारी से भर गई। उसने न केवल घर-गृहस्थी की सारी जबाबदारी अच्छे से संभाल ली अपितु उसका भी ध्यान वह गौरी की तरह ही रखती है।

सुबह झुग्गी की साँकल चढ़ाकर ताला लगाते हुए सुदामा की आँखे भर आई। गाँव से आने के बाद उसके हर सुख-दुख का गवाह थी यह झुग्गी। उसकी तरक्की की साक्षी होने के साथ ही गौरी की आखिरी साँसों की चश्मदीद भी थी यह झुग्गी। जब दो जून की रोटी जुटाने के लाले थे उसके सामने तब इसी झुग्गी से उसकी खुशहाल जिंदगी की राह निकली थी और छः महीने पूर्व इसी झुग्गी की देहरी लाँघ कर उसके सुखों की दुनिया उजाड़ने मौत दबे पाँव आकर गौरी को साथ ले गई थी। नियति का खेल भी अजीब है। चौदह साल पहले जब सुदामा यहाँ आया था तब तीन सालों से गाँव में भयंकर सूखा पड़ रहा था लेकिन गौरी की सूखी कोख हरी हो गई थी। छः साल लगे थे कोख में बीज अंकुरित होने में। सुदामा तब जैसे आया था अब फिर वैसे ही वापस जा रहा है। उस समय भी वह गौरी को मजबूरी में साथ नहीं ला सका था और आज भी वह गौरी को साथ नहीं ले जा सकता। तब भी गौरी को याद करते हुए फरीदाबाद आया था और आज भी गौरी की स्मृतियाँ साथ लेकर जा रहा है। पर तब में और अब में बहुत

फर्क आ गया है। पहले वह गौरी की सहमति से सुखी जीवन के सपनों के साथ यहाँ आया था और अब गौरी को सदा के लिए खोकर बिना कोई सपना लिए वापस जा रहा है। तब भी भविष्य की चिंता यहाँ ले आई थी और अब भी भविष्य की चिंता वापस लौटा के ले जा रही है। कुछ भी तो परिवर्तन नहीं आया है इन दो यात्राओं के उद्देश्य में। सोचते हुए सुदामा की आँखों से कुछ आँसू गालों पर ढुलक ही आए। उसने जूही से नजर बचाते हुए कंधे पर टँगे अँगोछे से जल्दी से अपने आँसू पोंछे और हाथ से फिसल कर नीचे गिर गए ताले को उठाने के लिए झुका।

"जल्दी करो सुदामा, क्या सोच रहे हो।" - गिरधारी की आवाज सुनकर सुदामा ने जल्दी से दरवाजे पर ताला जड़ा और पलटते हुए कहा - "अरे, हम तो कबसे तैयार खड़े है।"

सुदामा ने एक बैग कंधे पर टाँग लिया और हाथ में पानी की जरीकेन ले ली। जूही भी पीठ पर बस्ता टाँगे और सिर पर खाने के सामान का थैला रखकर तैयार थी। उसने भारी मन से चलते हुए पीछे मुड़कर देखा तो लगा जैसे किसी ने उसके कंधे पर हाथ रखते हुए कहा हो, हौसला रखो, सब भला होगा। आसपास देखा कोई नहीं था फिर खुद को संयत रखने के प्रयास में गिरधारी चाचा के छोटे बेटे रज्जन का हाथ पकड़ते हुए बोली - "रज्जू, तेरे लिए बस्ते में कंचे और लूडो रखकर लाई हूँ, रास्ते में जहाँ भी रुकेंगे, खेलेंगे अपन।"

"मैं भी चाचा चौधरी और चंदा मामा रखकर लाया हूँ, तुम पढ़कर सुनाना और मैं सुनुँगा।"

सूरज की पहली किरण के साथ जूही की नजर पलवल 14 कि.मी. के माइलस्टोन पर पड़ी और उसने सुदामा की ओर देखा। सुदामा के चेहरे पर थकान की परछाइयाँ उतरने लगीं थी। राधा चाची भी लँगड़ा कर चल रही थी। रामरतन चाचा अपनी झल्लाहट उनपर उतारते हुए चल रहे थे। रज्जन बार-बार बीच सड़क पर चलने लगता और गिरधारी चाचा की डाँट खाकर सहम जाता। हजारों लोग सड़क पर थे, सभी बदहवास से, डरे हुए और सहमे-सहमे। सभी के नाम, जाति और धर्म अलग-अलग लेकिन सभी के चेहरों पर एक ही पहिचान लिखी हुई। सिर पर पोटलियाँ, कंधों पर बैग, हाथों में थैले, गोदी में रोते-बिलखते बच्चे, लाठी टेकते-घिसटते बुजुर्ग और

बार-बार थककर सुस्ताने बैठ जाते लाचार वृद्ध। चल नहीं पा रहे हैं पर चलते जा रहे हैं। मंजिल पता है पर यात्रा का अंजाम नहीं पता। अनंत यात्रा है यह। कुछ देर पहले ही जूही ने सुनी थी, सडक किनारे सुस्ताने बैठे लोगों की बातचीत। सिहर गई थी वह, मन कसैला हो गया था उसका। पिछली रात किसी अनजान ट्रक ने तीन लोगों को रौंद दिया था। मोपेड पर सवार होकर पूरा परिवार घर जाने को निकला था। कोई नहीं बचा था। कुछ ही कि.मी. की यात्रा के बाद थम गई थी उनकी जीवन-यात्रा।

जूही गुमसुम चल रही थी। सुदामा आगे-आगे और वह पीछे-पीछे। वह सुदामा से आगे निकलना नहीं चाहती थी। सुदामा पर नजर रखते हुए चल रही थी वह। अम्मा के चले जाने के बाद से ही उदासी ने बापू को दबोच लिया था। वह दिखते अच्छे भले थे पर उनकी तबियत अक्सर ही ढीली रहने लगी थी। अंदर ही अंदर घुटते रहते थे। समझती थी सब। भरसक ध्यान भी सुदामा का रखती थी। पर यह सफर तो बापू को खुद ही चलकर पूरा करना होगा। बेजा सफर है ये, सुबह से ही सूरज आग बरसाने लग जाता है, धरती गरम तवे सी तपने लगती है और लू के थपेड़े सारे शरीर में तीर से चुभते हैं। कैसे पूरी होगी इतनी लंबी और कष्टप्रद यात्रा। अभी तो मुश्किल से पंद्रह-बीस कि.मी. ही आए हैं और बापू निढाल हो रहे हैं। बाकी लोग भी परेशान हैं। रास्ते में कोई बीमार पड़ गया तो नई मुसीबत। परेशानी के इस सफर में भी दोनों चाचा अपना गुस्सा दूसरों पर उतार रहे हैं। घर की चारदीवारी में सिमटी रहने वाली राधा चाची पर दया आ रही है उसे। रामरतन चाचा उनसे उम्मीद कर रहे हैं कि वह उनके सरीखे तेज-तेज कदम बढ़ाते हुए चलें। चाचा को तो स्टेडियम में बड़े-बड़े रोलर खींचने का अभ्यास है, वह तेज-तेज चल सकते हैं पर चाची कैसे चल सकती हैं इतनी तेजी से, डाँट खाकर सहम जाती है बेचारी।"

"चाचा, तीन-साढ़े तीन घंटे से ज्यादा हो गए चलते हुए, कुछ देर के लिए किसी बोरिंग के पास रुक जाते है।" - जूही राधा चाची की परेशानी भाँपते हुए बोली।

"ई रोड पर अब तक एकऊ बोरिंग न दिखो है, प्रिथला आवेगो तो रुक जावेंगे कछू देर को।"

"ठीक है चाचा, प्रिथला तो आने वाला है, पिछले पत्थर पर दो कि.

मी. लिखा था।"

पाँच दिन हो गए थे चलते हुए। इस बीच कितने ही कारुणिक दृश्य देखे थे जूही ने... बूढ़ी माँ को पीठ पर लादकर चलता हुआ अधेड़ बेटा, सोते हुए बच्चे को अटैची पर लिटाकर अटैची खींचती माँ, बैलगाड़ी में एक बैल के साथ जुता किशोर, छः-सात लोगों को बिठाकर रिक्शा खींचता युवक, बेरहमी से लोगों को पीटते पुलिस वाले, जालीदार टोपीवालों को दूर से ही दुत्कारते लोग और थोड़ी-थोड़ी दूरी के मनमाने पैसे वसूलते ट्रक-टैम्पो वाले। लोग आपस में चर्चा करते कि देश को बहुत बुरी नजर लगी है, आजाद भारत में ऐसा पलायन नहीं देखा, हर तरफ लाखों लोगों का रेला दिखाई देता है। अभी तक का सफर ठीक-ठाक ही गुजरा था। सुदामा थकान से चूर होकर लेटते ही खर्राटे मारने लगता था। जूही को जल्दी नींद नहीं आती। वह और रज्जन कभी कहानी सुनते-सुनाते तो कभी आसमान में तारों को निहारते हुए नींद की दुनिया में उतरते। नींद की दुनिया की भी अजीब कहानियाँ हैं। क्या-क्या दिखता रहता है नींद में। जूही भी अक्सर एक आकृति को नींद में देखा करती। वह आकृति उसके साथ खेलती, उसे पुचकारती, हिम्मत देती पर उसका चेहरा नहीं पहिचान पाती। कई सालों से वह यही चेहरा देखती आ रही है।

यात्रा में अब पाँच लोग ही बचे थे। रामरतन चाचा और राधा चाची आठ हजार रुपए में एक मिनी ट्रक वाले से सौदा कर झाँसी के लिए निकल चुके थे। राधा चाची दो बार रास्ते में चक्कर खाकर गिर पड़ी थी। कोई अनहोनी न घट जाए इसलिए ट्रक ड्राइवर की मनमानी भी बरदास्त करना जरूरी हो गया था। उस दिन फराह गाँव के बाहर डेरा जमाया था पाँचों ने। रात के दस बज रहे थे। रोड पर अभी भी काफी चहल-पहल थी। रह-रह कर "अरे रुको नही।", "चलते रहो।", "आगे किसी दूसरे गाँव में रुकेंगे।" "किनारे पर चलो।", "गाड़ियों से बचके।" जैसे कुछ वाक्य हवा में तैरते हुए उनको सुनाई दे जाते। आस-पास और भी बहुत से लोग सोए हुए थे, कुछ अभी भी आपस में बतिया रहे थे। जूही और रज्जन सो चुके थे। "कौन गाँव से हो भाई।" - पास ही बैठे एक बुजुर्ग व्यक्ति ने सुदामा से पूछा।

"रैपुरा, पन्ना जिला।"

"साथ में कौन-कौन है।"

"दोस्त का परिवार और बिटिया है।"

"अपनी बिटिया का ख्याल रखना भाई, बहुत गहरी नींद में मत सो जाना।"

उस यात्री की बात सुनकर सुदामा ने पहले जूही की ओर, फिर उस यात्री की ओर आश्चर्य से देखा। सुदामा को एकाएक समझ में नहीं आया कि उसने यह बात क्यों कही? यह बात कहने का क्या आशय है उसका? क्या जूही को कुछ गलत करते हुए देखा है उसने या जूही के मुँह से कोई गलत बात सुनी है? सुदामा को कुछ बोलता न देख, उस यात्री ने अपनी बात आगे बढ़ाई - "जवान लड़की साथ में है इसलिए सावधान किया है भाई... दो दिन पहले वल्लभगढ़ में एक हादसा हो चुका है, सुना होगा तुमने।"

"हमने तो नहीं सुना, आप ही बताओ क्या हुआ था।"

"उस रात रोड किनारे इसी तरह भाई-बहिन सोए हुए थे कि मुँह-अँधेरे लड़की फारिग होने के लिए उठी तो फिर वापस ही नहीं आई। जागने पर जब भाई ने खोज खबर ली तो एक कि.मी. दूर वह अधमरी हालत में मिली। कुछ दरिंदों ने उसकी इज्जत लूटकर बुरी गत बना दी थी। पता चला कि तीन लड़के उसके पास ही लेटे थे जो सुबह गायब थे।"

अंदर तक दहल गया सुदामा। वह बिना कुछ बोले उठा और अपने मुँह पर पानी के छींटे मार कर जूही के सिरहाने जाकर बैठ गया। एक भरपूर नजर आसपास लेटे, अधलेटे, ऊँघते, जागते और बातचीत में मशगूल लोगों पर डाली फिर मन ही मन एक संकल्प ले लिया - "कुछ भी हो जाए वह सोएगा नहीं, जूही को पल भर के लिए भी अकेला नहीं छोड़ेगा, दिशा-मैदान के लिए भी वह साथ में लेकर जाएगा, वह रोकेगी तो भी नहीं सुनुँगा उसकी, मुँह फेर कर खड़ा रहूँगा, भले ही जूही बेशरम समझे पर बीच-बीच में पूछता भी रहूँगा "हो गई।"। जूही के लिए ही तो उसने इस अनंत यात्रा को चुना है। जूही को अपने लोगों के बीच सुरक्षित ले जाना उसकी पहली प्राथमिकता है। अकेला होता तो कभी इस यात्रा के बारे में नहीं सोचता, रहा आता अपनी झोपड़ी में अकेला, कर लेता हर कठिनाई का सामना, मौत का डर भी उतना नहीं सताता जितना अभी सता रहा है। डरे भी क्यों नहीं, जूही को असहाय और अकेला छोड़कर वह किसी अनजान शहर में मर भी तो नहीं सकता था। अकेली स्त्री का रहना कितना कठिन होता है, देखा है

उसने। लीलाधर के मरने पर मीरा भौजी का जीना कितना दूभर बना दिया था उसी के आस पास रहने वाले लोगों ने, दिन-रात कुत्तों की तरह नोचने के लिए लालायित घूमते रहते थे लीलाधर के ही यार दोस्त। इस यातना से मुक्ति का मार्ग मीरा भौजी ने फिनाइल की बोतल में खोज लिया और अपनी जान दे दी थी। उफ्फ, कितनी घिनौनी हो गई है ये दुनिया, सोच कर दिल दहल जाता है। लोगों का हुजूम सड़क पर है लेकिन हैरान-परेशान लोगों की इस भीड़ में भी दरिंदे साथ चल रहे हैं। भगवान कभी माफ नहीं करेगा ऐसे लोगों को।"

नींद का तेज झोंका आया और सुदामा एक ओर को लुढकने ही वाला था कि हड़बड़ाकर उठ बैठा। चारों ओर नजर डाली। सड़क पर अभी भी लोग-बाग आ जा रहे थे। आस-पास सैकड़ों लोग बेतरतीब बेसुध लेटे हुए थे। खर्राटों और कुत्तों के रोने की आवाजें माहौल में अजीब सी अकुलाहट पैदा कर रही थी। सुदामा उठकर खड़ा हो गया और आगे तथा दाएँ-बाएँ झुककर कमर सीधी करने की कोशिश करने लगा। दो-तीन मिनट बाद ही वापस उसी स्थान पर बैठ गया। आँखों से नींद गायब हो गई। जूही ने करवट बदल ली थी। रज्जन का एक हाथ उसकी कमर पर था। जूही जब छोटी थी तब वह भी इसी तरह गौरी की कमर पर हाथ रखकर सोती थी। आज गौरी होती तो उसे जूही की इतनी चिंता नहीं करनी पड़ती। जूही भी गौरी से हर वह बात कर लेती जो उससे नहीं कह सकती। जूही को जब गौरी की सबसे ज्यादा जरूरत है तभी वह छोड़ कर चली गई। गौरी को बहुत दिनों से तकलीफ थी पर उसने कभी अपनी तकलीफ का जिक्र नहीं किया। जब तक जिंदा रही उसे सुख नहीं दे सका। सोचते ही सुदामा के भीतर एक गुबार सा उठा और गले में आकर फँस गया। घुटन सी महसूस हुई और जोर से खाँसी आ गई। उसके पीछे की ओर लेटा व्यक्ति चौंककर उठा और भाग खड़ा हुआ। दो और व्यक्ति भी उठकर बैठ गए और आँखे मलते हुए स्थिति का आकलन करने लगे। सुदामा कुछ देर तक उसके द्वारा उत्पन्न किए गए भय की भयावहता को चुपचाप महसूस करता रहा। फिर सोचने लगा कि लोग अंदर से कितना डरे हुए हैं। लोग क्या, वह स्वयं भी तो डरा हुआ है। जहाँ देखो वहीं डर पसरा दिखाई दे रहा है।

याद हो आया वर्षों पहले का वह दिन, जिस दिन उसे फरीदाबाद के

लिए निकलना था। बाई-दद्दा ने "अपनो ख्याल रखियो।" कहते हुए उसके सिर पर हाथ फेरा था। गौरी किवाड़ की ओट से आँचल से आँसू पौंछते हुए उसे देख रही थी। वह गौरी का हाथ पकड़ कर "थकवे वालो ज्यादा काम न करियो और अपनो तथा आवे वाले बच्चे को ध्यान रखियो।" कहना चाहता था लेकिन नरहरि काका और काकी के आ जाने के कारण वह गौरी से बिना मिले ही उनके साथ चल दिया था। सुख के दिन तो आए लेकिन किस्मत का छलावा जारी रहा, एक दरवाजा खुला तो किस्मत ने दूसरे पर ताला जड़ दिया। जिस किस्मत ने नौकरी देकर उपकार किया था, दो महीने बाद उसी किस्मत ने इसी जून के महीने में उससे बाप बनने का मौका छीन लिया था। "गौरी का गर्भ गिर गया है।", सुनकर बहुत रोया था वह। रात में खाना भी नहीं खा सका था। शादी के छः साल बाद ऊपर वाले ने गौरी की कोख भरी थी और उसी ने आशा के इस दीप को एक झटके में बुझा भी दिया। नई-नई नौकरी थी सो छुट्टी भी नहीं मिली। झुग्गी में अकेले पड़े-पड़े कई दिनों तक कलपता रहा था।

आठ महीने बाद जब वह होली के अवसर पर रैपुरा आया था तो दिन में गौरी के सामने आने की हिम्मत ही नहीं जुटा पाया था। रात के एकांत में दोनों एक दूसरे से लिपट कर बहुत देर तक सुबकते रहे थे। बहुत कमजोर हो गई थी गौरी। कजरी गाय सरीखी आँखें अंदर की ओर धँसी-धँसी लगने लगी थी और सुंदर मांसल देह ज्वार की आधी खाली बोरी सरीखी हो गई थी। एक सप्ताह कैसे गुजर गया पता ही नहीं लगा। वापस लौटने लगा तो गौरी से कहके आया था कि अगली बार कुछ दिनों के लिए उसे भी अपने साथ ले के चलेगा और मोहना गाँव की कालका माता के मंदिर में मन्नत माँगने चलेगा। माता सबकी मुराद पूरी करती हैं।

"शायद माता को तरस आ गया गौरी की उदासी देखकर। एक माह फरीदाबाद में बिताकर जब वह गाँव लौटी तो दस-बारह दिनों बाद ही उसका पत्र मिला था। वह पेट से थी। अब सुदामा अच्छा खासा कमाने लगा था इसलिए गौरी को ठकुराइन के यहाँ जाकर काम करने की जरूरत नहीं थी। यह सुखद संयोग ही था कि जिस दिन जूही पैदा हुई थी उसी दिन उसने आदर्श नगर की अपनी खोली में गृह प्रवेश की पूजा रखी थी।"

जूही पढ़ने में होशियार थी। गाँव के स्कूल से उसने पाँचवी क्लास नब्बे

प्रतिशत अंको से पास की। वह आगे पढ़ना चाहती थी सो सुदामा उसे और गौरी को फरीदाबाद ले आया। बाई-दद्दा गाँव में अकेले रह गए। खेती के काम में हाथ बँटाने के लिए मामा का बेटा गाँव में आकर रहने लगा था। फरीदाबाद आकर पता नहीं क्या हुआ कि गौरी बीमार रहने लगी। उसकी सेहत दिन प्रतिदिन गिरने लगी। वह अक्सर पेट दर्द की शिकायत करती थी। यदा-कदा उसे उल्टियाँ भी हो जाती। हमेशा थकी-थकी रहती। डॉक्टर ऊपरी इलाज करते रहे, असल मर्ज उनको समझ में ही नहीं आया। कपूर साब की सलाह पर सुदामा गौरी को गुडगाँव के बड़े अस्पताल में दिखाने ले गया। दो दिन तक बहुत सी जाँच होती रही फिर जो परिणाम आया उसने सबकी नींद उड़ा दी। गौरी को आँतों का कैंसर था। महीनों इलाज चलता रहा। सारी जमापूँजी स्वाहा हो गई। घर गृहस्थी का सामान तक बिक गया। फिर एक दिन गौरी "जूही को ख्याल रखियो।" कह कर दुनिया से विदा हो गई। ग्यारह साल की मासूम जूही यकायक बहुत बड़ी गई, जैसे गौरी की आत्मा उसमें प्रवेश कर गई हो। उसने सुदामा को संभाल लिया। स्कूल भी जाती और घर की देखभाल भी करती।

सफर का छठवाँ दिन था। मुँह अँधेरे चार बजे से ही उठकर लोगबाग चलने की तैयारी शुरु कर देते थे। पिछले पाँच दिनों से उन लोगों का भी यही कार्यक्रम चल रहा था। चैत का सूरज आठ बजे से ही आग के गोले दागने लगता था अतएव आठ बजते ही रुकने के लिए ठिकाना खोजना जरूरी हो जाता था। शाम पाँच बजे फिर यात्रा शुरु होती और रात्रि नौ बजे तक कहीं न कहीं रुकने का सुरक्षित ठौर ढूढ़ना पड़ता। जूही की आँख खुली तो सुदामा को उसने सिरहाने बैठा पाया - "बापू इत्ती जल्दी जग गए, रात में नींद नई आई का।"

"जल्दी नींद खुल गई तो फिर सोवे की इच्छा नई भई, उठई के बैठ गए... तुम जल्दी से फारिग हो जाओ, हम तुमारे साथ खेत में चलत है।" - सुदामा बड़ी मुश्किल से कह पाया।

"अरे हम चाची के साथ चले जैबी जैसे रोज जात हैं, तुम मंजन बगैरा कर लो तब तक।" - जूही दरी और चादर उठाकर तह करते हुए बोली।

आधे घंटे के अंदर सभी चलने को तैयार थे। पाँच किमी का रास्ता तय करने में ही दो घंटे लग गए। सुदामा बड़ी मुश्किल से चल पा रहा था। एक

तो थकान, ऊपर से पूरी रात का जागरण। सारा बदन टूट रहा था। कुछ दूर चलते ही वह सुस्ताने बैठ जाता। गिरधारी और उसका परिवार आगे निकल जाता और फिर उनको सुदामा के आने का इंतजार करना पड़ता। तीन-चार बार ऐसा हुआ तो गिरधारी का धैर्य जबाब दे गया। वह झल्लाते हुए बोला - "सुदामा तुमसे नहीं चलो जा रहो तो तुम रुको यहीं, एक दो दिन आराम करबे के बाद आ जाना, हम लोग चलत है।"

"बापू तुम भी रुक जाओ न, जूही दीदी के साथ ही चलेंगे।" कहते हुए रज्जन बिफरा तो गिरधारी ने दो तमाचे उसके गाल पर रसीद कर दिए। वह रोते हुए चुपचाप उनके साथ चलने लगा।

जूही और सुदामा ने पूरा दिन रास्ते में किनारे पर पड़े हुए एक टूटे सीवेज पाइप के अंदर बैठकर गुजारा। पिछली रात का बचा हुआ दलिया दोनों ने मिलकर खाया। पेट की ज्वाला ठंडी पड़ते और सिर पर छाँव मिलते ही सुदामा की आँख लग गई। जब नींद खुली तो उसे अपेक्षाकृत अच्छा लग रहा था। सूरज के कदम पश्चिमी ढलान पर चल पड़े थे अतः दोनों भी आगे के सफर पर चलने के लिए तैयार हो गए।

अरसेना के निकट पहुँचते ही एक नई समस्या खड़ी हो गई। अँधेरे में सुदामा को सड़क किनारे पड़े पत्थर दिखाई नहीं दिए और ठोकर खाकर औंधे मुँह गिर गया। उसके दाएँ घुटने, कुहनी और माथे पर काफी चोट आई। घुटने और कुहनी पर सूजन आ गई। उठने की कोशिश की तो खड़े होते नहीं बना, वहीं पसर कर बैठ गया। कुछ दयालु यात्रियों ने उसे कुछ दूर बने एक शेड तक पहुँचाया। किसी ने सलाह दी हल्दी-चूना लगाने से आराम मिलेगा। हल्दी तो जूही साथ लेकर आई थी लेकिन चूना, उसने कुछ लोगों से पूछा भी किंतु किसी के पास चूना नहीं मिल सका। हार कर उसने केवल हल्दी का लेप बनाकर यह सोचकर सुदामा के जख्मों पर लगा दिया कि कुछ राहत तो मिलेगी। सुबह वह गाँव में चूना तलाशने जाएगी, वहाँ कोई डॉक्टर या वैद्य मिल गया तो दवा भी ले आएगी।

रात भर दर्द के कारण सुदामा को नींद नहीं आई। जूही भी नहीं सो सकी। रात में दोनों ने खाना भी नहीं खाया था। सुबह जूही ने चावल पकाए। दोनों के खा चुकने के बाद जूही बर्तन धोकर थैले में जमाते हुए बोली - "बापू मैं गाँव से चूना लेके आती हूँ तब तक तुम आराम से लेट जाओ।"

अरसेना वहाँ से ज्यादा दूर नहीं था लेकिन सुदामा जूही को अकेले जाने देना नहीं चाहता था, बोला – "हमऊँ चलत हैं संगे, इते पड़े रहबे से अच्छो है कि गाँव में ही चलकर ठौर ढूँढे।"

"तुम कैसे चलहो बापू, पाँव तो मुड़ नहीं रहो तुमाओ।"

"घिसट के चलबी, कछु टैम जादा लग जैहे और तुमाई चिंता भी न रैहे।"

मुश्किल से जूही और सुदामा ने एक फर्लांग की दूरी तय की होगी कि सायकल चलाता हुआ तेरह-चौदह साल का एक बच्चा उनके पास आकर रुका – "क्या हो गया इनको, किसी ने टक्कर मार दी क्या।"

"रात में गिर पड़े थे... तुम क्या इसी गाँव में रहते हो।" – जूही ने पूछा।

"हाँ, कहाँ जाना है तुमको, मैं काका को छोड़ दूँगा।" – सायकल वाले बच्चे ने कहा।

"हमें तो बहुत दूर जाना है, गाँव में कोई डॉक्टर हो तो तुम बापू को उनके पास तक ले चलो।"

"डॉक्टर है तो लेकिन कई दिनों से उनका दवाखाना बंद है। हमारे अब्बू कंपाउंडर हैं, वे काका की पट्टी कर देंगे, लेकिन तुम हमारे साथ चलोगी उनके पास।"

"तुम ये क्यों पूछ रहे हो।"

"बस यूँ ही, लोग कहते हैं कि ये बीमारी हमने फैलाई है।"

"अरे ये बीमारी तो चीन से आई है किसी ने नहीं फैलाया है इसे, तुम हमें उनके पास ले चलो। क्या नाम है तुम्हारा"

"हनीफ।" बच्चे ने कहा।

कंपाउंडर लतीफ कुरैशी से मल्हम पट्टी और टिटनेस का टीका लगवा कर जूही और सुदामा ने एक जर्जर इमारत के अहाते में अपना नया ठिकाना बना लिया। सुदामा को चलने लायक स्थिति में आने के लिए तीन-चार दिन के सख्त आराम की जरूरत थी।

शाम को हनीफ फिर आ गया – "तुम्हें कुछ चाहिए तो बोलो मैं ला दूँगा।"

"नहीं सब कुछ है हमारे पास, तुम यहाँ बैठो, देखो मैंने क्या बनाया है, खाओगे तुम।"

"तुम खाना बनाना जानती हो, तुम्हारी अम्मी क्या गाँव में रहती है।"

"अम्मा नहीं हैं, हम और बापू हैं बस।"

"कहाँ तक जाना है तुमको।"

"बहुत दूर, छः-सात सौ कि.मी. और चलना है अभी।"

"इतनी दूर, काका कैसे चल पाएँगे।"

"जैसे फरीदाबाद से चलकर आए हैं वैसे ही।"

सत्तू का आधा पराठा खाकर हनीफ चला गया। आसपास कुछ और लोगों ने भी अपना डेरा डाल लिया था। रात अपेक्षाकृत आराम से कटी। सुबह कुछ लोग आकर ब्रेड, बिस्किट और नमकीन के पैकेट दे गए। शाम को हनीफ पुलाव लेकर आया - "अम्मी ने बनाया है, कहा है खाने के लिए फोर्स मत करना।"

"हम तो जरूर खाएँगे, पर तुम हमारे लिए सबको इतना परेशान क्यों कर रहे हो।"

"बहुत दिनों बाद किसी ने हमसे इतने प्यार से बात जो की है, तुम बहुत अच्छी हो।"

"अच्छा अब तुम जाओ, रात हो रही है।"

"ठीक है, कल आऊँगा अब।" - कहते हुए हनीफ साइकल में पैडल मारते हुए चल दिया। जूही उसको जाते हुए देखती रही, पर ये उस ओर क्यों जा रहा है, उसका घर तो दूसरी दिशा में है, सोचा जूही ने - "होगा कोई और काम उसे, करके चला जाएगा घर।"

"तुम भी लेट जाओ, दो दिनन से ठीक से आराम भी न करो तुमने।" सुदामा ने जूही से कहा।

"लेटत हैं बापू, सामान समेट के बैग में रख दइये।"

लेटते ही जूही के मन में पिछले दो दिनों की घटनाएँ चलचित्र के समान घूमने लगीं। गिरधारी चाचा का नाराज होके जाना और फिर बापू का गिर जाना, कितना डर गई थी वह, लगा था मुसीबतों का पहाड़ टूट पड़ा है उस पर। वह रोना चाहती थी पर बापू की हालत देखकर आँसुओं ने बाहर आने से मना कर दिया था। जब जरूरत थी तभी अपने भी साथ छोड़ कर आगे बढ़ गए। अनजान लोगों ने बापू को हाथों पर उठाकर शेड तक पहुँचाया था। अम्मा सही कहती थी कि "एक रास्ता जब बंद होत है तो दूसरो खुल जात

है।" हनीफ ने पहाड़ सी मुश्किल को कितना आसान कर दिया। वह नहीं मिला होता तो बाहर गाँव ही पड़े रहते, बापू उसे अकेले जाने नहीं देते और वह साथ चल नहीं सकते थे।

तीन दिन बीत गए। हनीफ रोज मिलने आता और जूही से बतियाता रहता। सुदामा भी अब थोड़ा-थोड़ा चलने लगा था।

"बापू कह रहे हैं कल सुबह निकल चलेंगे यहाँ से।" - हनीफ जब शाम को मिलने आया तो जूही ने उससे कहा। सुनकर हनीफ को निराशा हुई, बोला - "एक दिन और रुक जाओ, फिर चली जाना, कल हमारा जन्मदिन है।"

जूही ने सुदामा की ओर देखा, फिर बोली - "बापू हाँ कह रहे हैं, हम लोग परसों चले जाएँगे।"

अगले दिन हनीफ पूड़ी, सब्जी और शीर कुर्मा लेकर आया। जाने लगा तो रुआँसा होकर बोला - "तुम सुबह चली जाओगी।"

"पर तुमको कभी नहीं भूलूँगी, बहुत याद आओगे तुम, तुमसे दोबारा मिलने भी आऊँगी।"

"हमारी साइकल ले जाओ, काका नहीं चल पाएँगे इतनी दूर... हमें जरूरत नहीं है इसकी, स्कूल भी नहीं खुलेंगे इस बार।"

जूही ने आश्चर्य से हनीफ की ओर देखा। वह डरते हुए बोला - "मना मत करना, मैंने दिन में इसके सारे कलपुर्जे टाइट किए हैं, चेन में आइल डाला है, साथ में पंप भी लाया हूँ।"

"मैं तुम्हारी साइकिल ले गई तो तुम अब्बू से क्या कहोगे।"

"मैं उन्हें सच-सच बता दूँगा।"

"वह पीटेंगे तुम्हे।"

"अम्मी बचा लेंगी।"

"मैं नहीं ले जा सकती।"

"तुम जब मिलने आओगी तो वापस कर देना, तुम्हें हमारी कसम।" - कहते हुए हनीफ साइकल वहीं छोड़कर अँधेरे में ओझल हो गया। जूही बहुत देर तक एकटक उस दिशा में देखती और सोचती रही - "कौन है हनीफ, क्या पिछले जनम का कोई रिश्ता है उससे, क्यों इतनी चिंता है उसे हमारी, वह अपरिचित होकर भी कितना परिचित सा लगता है, कितने अपनत्व से

बातें करता है, कैसे अनूठे बंधन में बाँध लिया है उसने हमको, जिंदगी भर के लिए अपना ऋणी बना लिया... ।"

ऐसे कितने ही विचार जूही के मन में आते रहे। नींद में भी हनीफ ने उसका पीछा नहीं छोड़ा। उसकी छवि अवचेतन मन में उभरती और एक अस्पष्ट आकृति में विलीन हो जाती, वही अस्पष्ट आकृति, जिसे जूही वर्षों से सपने में देखते आ रही थी, किसकी आकृति है वह, कभी समझ नहीं पाई थी। उसका स्पर्श उसे बहुत आह्लादित करता था। वह जब भी सिर पर हाथ फेरता तो बहुत ही सुरक्षित महसूस करती थी, सोचती काश उसका भाई जीवित होता तो उसके साथ भी वह इसी तरह सुकून और सुरक्षित महसूस करती। वह वर्षों से उस आकृति को सपनों में देखती आ रही थी लेकिन अम्मा के गुजर जाने के बाद से वह कुछ ज्यादा ही सपनों में आने लगा था। वह हमेशा कुछ कहता पर आवाज बहुत स्पष्ट सुनाई नहीं देती थी। एक आभास सा होता था जैसे वह कह रहा हो कि तुम अकेली नहीं हो, मैं हूँ तुम्हारे साथ। इस सफर में भी वह साथ-साथ ही चल रहा था। जब पहले दिन पलवल तक पहुँचते-पहुँचते बापू थकान से निढाल हो गए थे और मैं आशंका से भर गई थी तब उसने ही रात में आकर हिम्मत बँधायी थी। इसके बाद तो वह रोज रात में उसकी पीठ थपथपाने आता रहा, उसके छूते ही सारी थकान छूमंतर हो जाती थी, एक नवीन ऊर्जा का संचरण पूरे शरीर में हो जाता था, पर ये हनीफ क्यों उस आकृति के पीछे जाकर विलीन हो रहा है, क्या वह वर्षों से हनीफ की आकृति को देख रही थी... ।" विचार कौंध ते ही चौंक कर उठ बैठी जूही। उसकी साँसे धौंकनी की तरह चल रही थी, सारा शरीर पसीने से भीग चुका था। आसपास शोरगुल बढ़ने लगा था, लोग बाग जाग गए थे और चलने की तैयारी में व्यस्त थे। जूही ने सुदामा को जोर से हिला कर जगाया और बड़ी मुश्किल से - "बापू... हनीफ।" बोल पाई।

"कोनऊ बुरो सपनो देखो है तुमने, का भव हनीफ को।" - सुदामा ने जूही के माथे से चूँ रहे पसीने को अँगोछे से पौंछते हुए पूछा।

"वो हनीफई है बापू जो हमाए सपने में आत हतो, आज ऊकी साफ-साफ शकल दिखी हमे।" - जूही की आवाज अब भी भर्राई हुई थी। सुदामा ने हैरत से उसकी ओर देखा।

"हम सच्ची कहत हैं बापू, चलबे से पहले एक बार हनीफ से मिलने

है हमे।"

"ठीक है बिट्टू, हम ऊके घर होत चलहें, अबै सुबह होवे में देर है, तनिक और लेट जाओ तुम।"

साइकिल पर अपना सामान बाँधकर जूही और सुदामा उस घर के सामने रुके जहाँ हनीफ उनकी मल्हम पट्टी कराने के लिए लेकर आया था। कुछ देर में लतीफ कुरैशी ने दरवाजा खोला, सामने सुदामा को देखकर पूछा – "कैसे हो अब तुम।"

"ठीक हैं हम, आज यहाँ से निकल रहे हैं तो सोचा आपसे और आपके बेटे से मिलते चले।"

"मेरा बेटा, मेरे तो कोई बेटा नहीं है, मैं तो यहाँ अकेला रहता हूँ।"

"क्या कहा, हनीफ आपका बेटा नहीं है, उसने तो हमें यही बताया था।"

"कहा न मेरे कोई बेटा नहीं है, उस लड़के को तो मैंने पहली बार देखा था, कोई बदमाश होगा जो तुम लोगों को लूटने की फिराक में होगा, लूटपाट की बहुत खबरें आ रही हैं, आप लोग संभल कर जाना आगे।"

"13–14 साल का बच्चा और लुटेरा, नहीं..नहीं... वह लुटेरा नहीं है, वह किसी को नहीं लूट सकता" – सुदामा मन ही मन बुदबुदाया।

"बापू बैठो, हम चलत हैं यहाँ से।" – जूही के स्वर में दृढ़ता के साथ ही आत्मविश्वास की प्रबलता भी थी। सुदामा साइकिल के कैरियर पर जैसे ही दोनों ओर पैर डालकर बैठने को हुआ तो उसे लगा जैसे किसी ने सहारा देकर बैठने में मदद की है।

अगले छः दिनों में जूही ने बिना थके साढ़े छः सौ किमी की यात्रा तय की। वह और सुदामा सकुशल रैपुरा पहुँच चुके हैं। हनीफ कौन था, यह प्रश्न अभी भी अनुत्तरित है...

जॉटर रिफिल पेन

रोज की तरह फेसबुक और व्हाट्सएप पर आए नोटिफिकेशन देखने के बाद दिलीप भाटिया ने अपना मेलबॉक्स खोला तो नैंसी सहगल का दूसरा मेल आया देख थोड़ा परेशान हुआ। कल भी उसका एक मेल मेलबॉक्स में था लेकिन फिशिंग मेल की आशंका में दिलीप भाटिया ने बिना खोले ही उसे डिलिट कर दिया था। आज फिर नैंसी का मेल देखकर वह असमंजस में पड़ गया, खोल कर देखे या डिलिट कर दे। वह कुछ देर सोचता रहा, नैंसी नाम उसे कुछ परिचित सा लगा। स्कूल के दिनों में उसके साथ नैंसी नाम की एक लड़की पढ़ती थी - "शायद वही तो नहीं। पर उसे मेरी मेल आईडी कहाँ से मिली और इतने वर्षों बाद मुझसे संपर्क क्यों करना चाह रही है। जब साथ में पढ़ती तब तो कभी बात नहीं की थी, हमेशा एटीट्यूड दिखाती थी, अब मेल पर क्या जताना चाहती है।" दिलीप भाटिया का असमंजस बढ़ा तो वह अतीत में जा पहुँचा - "नैंसी खूबसूरत थी, पापा बडे अफसर थे, अक्सर कार छोड़ने आती थी स्कूल। सबसे अलग पहिचान थी उसकी। अब शायद कोई मुसीबत आन पड़ी है इसलिए पुराने दोस्तों को खोज-खोज कर मैसेज कर रही है। पर मैं तो कभी भी उसका दोस्त नहीं रहा। साथ में पढ़ती जरूर थी पर मुझे देखकर हमेशा मुँह फेर लेती थी जैसे जताना चाहती हो कि तुम हमारी दोस्ती तो छोड़ो बात करने के भी लायक नहीं हो। ऐसा वह केवल जताती ही नहीं थी, बल्कि कुछ अवसरों पर उसने अपने व्यवहार से ऐसा सिद्ध भी किया था।" सोचते ही एक वाक्या दिलीप की नजरों के सामने घूम गया। छुट्टी के दिनों में वह अक्सर दोपहर बाद न्यू मार्केट स्थित अपनी छोटी सी स्टेशनरी की दुकान पर बैठा करता था। पापा लंच के लिए घर आते थे और वह उनकी अनुपस्थिति में दुकान संभालने दुकान पर पहुँच जाता था। पापा लंच लेकर कुछ देर आराम करने के बाद शाम को छः बजे तक दुकान पर आते थे। कभी-कभी साथ में पढ़ने वाला पक्का दोस्त अभिलाष शर्मा भी दुकान पर आ जाता और पापा के आने तक

उसके साथ दुकान पर रहा आता। खाली समय में दोनों या तो होमवर्क किया करते या फिर चेस खेलते। ऐसा ही एक दिन था जब वह और अभिलाष दुकान पर चेस खेलने में खोए हुए थे। तभी नैंसी आई थी वहाँ। शायद उसने ध्यान नहीं दिया था कि उसके दो-दो क्लासफैलो वहाँ बैठे चेस खेल रहे हैं।

"ब्लैक जॉटर रिफिल पेन देना।" - नैंसी ने कहा था।

दोनों ने पलट कर देखा और दिलीप "जी" कहते हुए फुर्ति से उठा और रैक पर रखे जॉटर रिफिल के पैकेट्स में से ब्लैक कलर का पैकेट खोजने लगा। अभिलाष अपनी जगह से उठकर काउंटर पर आ गया और बोला - "हैलो नैंसी।"

नैंसी ने अभिलाष की बात का कोई जवाब नहीं दिया। दिलीप भी तब तक जॉटर रिफिल का पैक हाथ में लेकर काउंटर पर आ गया और पूछा - "कितने चाहिए।"

"लगता है गलत दुकान पर आ गई।" कहते हुए नैंसी बिना पेन लिए बुरा सा मुँह बनाते हुए अगली दुकान के अंदर चली गई। दोनों को कुछ समझ नहीं आया कि क्या हुआ। ऐसा अजीब ग्राहक पहली बार उनकी दुकान पर आया था। दोनों को ही यह अत्यंत अपमानजनक लगा था। दिलीप के मन में प्रतिक्रिया स्वरूप इस अपमान का बदला लेने का भाव भी आया पर अभिलाष ने समझाया था उसे। नकचढ़े के साथ नकचढ़ा नहीं बना जाता। ओछेपन की काट ओछापन नहीं है। समझ लो बड़े बाप की बिगड़ैल बेटी है और ऐसे लोगों को सबक सिखाने के लिए उनके अहम् पर चोट करना जरूरी है। उसने जिस पेन के लिए तुम्हारा अपमान किया है, तुम उसी पेन से उसको उसके ओछेपन का एहसास दिलाना। दिलीप को बात जँच गई और उसने पैकेट से एक पेन निकाल कर अपनी जेब में रख लिया। दोनों का मूड अपसेट हो चुका था, चेस खेलने में भी दोबारा मन नहीं लगा।

यह पहली घटना नहीं थी। कुछ दिनों बाद दिलीप को एक बार फिर ऐसी ही स्थिति या कहें इससे भी ज्यादा अप्रिय स्थिति का सामना करना पड़ा था। उस दिन भी अभिलाष उसके साथ था। दोनों दुकान से घर जाने के लिए निकले थे कि इच्छा हुई टॉप एंड टाउन से मैंगो कैंडी ली जाए। दोनों आइसक्रीम शाप पर पहुँचे ही थे कि देखा नैंसी और उसकी एक सहेली वहाँ पहले से खड़ी हैं और दोनों ठीक उनके बगल में जाकर खड़े

हो गए हैं। उनको देखते ही नैंसी ने आइसक्रीम का ऑर्डर कैंसिल कर दिया और सहेली के साथ बगल वाली होजियरी शॉप में घुस गई। दुकानदार को लगा कि दोनों ने उनसे कुछ छेड़छाड़ की है या कोई कमेंट पास किया है जिससे वे दोनों बिना आइसक्रीम लिए चली गईं। दोनों सफाई देते रहे पर दुकानदार ने उन्हें बहुत बुरा-भला कहा और दोबारा दुकान पर न आने की हिदायत देकर चलता किया।

तो ऐसी थी नैंसी... नैंसी कार्वेल्हो, अबूझ, नखरेली और उद्दंड। "मेल भेजने वाली नैंसी वो वाली नैंसी नहीं हो सकती।" - दिलीप का असमंजस बरकरार था - "ये नैंसी तो बहुत सब्मिसिव लगती है और दोस्ताना भी। वो नैंसी तो क्रिश्चियन थी, पंजाबी नहीं। ये हंड्रेड परसेंट कोई और नैंसी है। वैसे भी, नैंसी कोई पैटेंट नाम थोड़े ही है कि किसी और लड़की का नाम नैंसी नहीं हो सकता। यदि ऐसा कोई नियम होता तो निश्चित ही वो वाली नैंसी किसी और का नाम नैंसी होने ही नहीं देती। अजीब उलझन है, मन कहता है कि ये वही नैंसी है लेकिन दिल मानने को तैयार नहीं। प्रोबैबिलिटी देखें तो फिफ्टी-फिफ्टी चांसेज हैं कि यह वही नैंसी हो और नहीं भी हो। रही कार्वेल्हो और सहगल वाली बात, तो यह कोई अबूझ पहेली नहीं है। हो सकता है नैंसी ने किसी पंजाबी लड़के से शादी कर ली हो। स्कूल के दिनों में ही उसके हाव-भाव से लगता था कि वह लव मैरिज करेगी, सो कर ली होगी लव मैरिज और बन गई होगी नैंसी कार्वेल्हो से नैंसी सहगल।"

"तो क्या नैंसी कार्वेल्हो, नैंसी सहगल बनते ही बदल गई। फिर भी यह विश्वास करने का मन नहीं हो रहा कि मेल भेजने वाली नैंसी सहगल वही नकचढ़ी लड़की है। अपनी सुंदरता और बाप के अफसरी रुतबे के कारण हमेशा गुरूर और ठसक में रहने वाली नैंसी का इंटरेस्ट उस जैसे साधारण दिखने और साधारण हैसियत वाले लड़के में अचानक कैसे जाग गया जो उसे मेल पर मेल किए जाने लगे। हो सकता है उसे अपनी गलतियों का एहसास हुआ हो और पश्चाताप करना चाह रही हो। उम्र के एक पड़ाव पर आकर इंसान जब अपने भूतकाल में झाँकता है तो उसे पूर्व में किए गए अपने बहुत से कर्मों पर ग्लानि महसूस होने लगती है। नैंसी के साथ भी ऐसा ही हुआ होगा। उसकी गलतियों की लिस्ट भी बहुत लंबी है। अपने रूखेपन और उपेक्षापूर्ण वर्ताव से पता नहीं उसने कितने लोगों का दिल दुखाया होगा।

फुरसत के पलों में उसे रह-रह कर सब याद आता होगा तो दिल में हूक उठती होगी, बहुत कष्ट पहुँचता होगा। किसी-किसी की प्रारंभिक जिंदगी इतनी खुशहाल और रंगों से इतनी लबरेज होती है कि आसपास की बहुत सी चीजें उसे गैरजरूरी और निरर्थक लगने लगती हैं। एक तरह की संवेदनहीनता उसके अंदर अपने पैर फैलाने लगती है। नैंसी भी ऐसे ही एक घराने की प्रतिनिधि थी। जिंदगी में मुश्किलें क्या होती हैं वह जानती ही नहीं थी, सब कुछ उसे सहज ही सुलभ था। उस जमाने में जब एक रिक्शे में दस-दस बच्चे लदकर स्कूल आते थे, नैंसी कभी एस्टीम तो कभी सियलो में बैठकर स्कूल आती थी। उसकी शानो-शौकत देख कर बहुत से बच्चे हीनभावना से ग्रसित हो उसके पास आने से भी कतराते थे। ऐसे बच्चों को वह भी अहमियत नहीं देती थी और उन्हें अनदेखा करते हुए निकल जाती थी। यही गुरूर और संवेदनहीनता उसकी पहिचान थी। दो साल तक वह स्कूल में साथ पढ़ी थी और इस बीच उसने कभी भी मित्रवत व्यवहार नहीं किया था।"

दस मिनट से ज्यादा हो गए थे दिलीप को मानसिक ऊहापोह की स्थिति में। मेलबॉक्स में और भी मेल आए हुए थे लेकिन दिलीप है कि पहले मेल पर ही अटका हुआ था। किसी मेल के भविष्य को तय करने में उसने कभी इतना सोच-विचार नहीं किया था, या तो उसे खोल कर पढ़ लिया था या फिर सेलेक्ट कर डिलिट के डिब्बे के हवाले कर दिया था। इस जल्दबाजी में अनेक बार उसने बैंक या कुछ अन्य प्रतिष्ठानों से आए कुछ महत्वपूर्ण सूचनाओं वाले मेल भी डिलिट कर दिए थे, जिसका बाद में अफसोस भी मनाया था उसने।

"नैंसी का मेल है, चाहे वह कोई भी हो, कार्वेल्हो या सहगल, उसे अनदेखा करना ठीक नहीं है। यदि यह फिसिंग मेल भी है तो भी बिना खोले पता लगाना मुश्किल है। जी मेल के स्पेम मेल फिल्टर से बचकर मेन फोल्डर में आया है सो स्पेम मेल तो नहीं ही है।" ये विचार आते ही दिलीप ने मेल पर डबल क्लिक कर दिया और पढ़ने लगा। नैंसी सहगल चाहती थी कि उसके पति के साथ हुए अन्याय के खिलाफ दिलीप भाटिया उसका साथ दें और संलग्न ऑनलाइन पिटीशन को साइन करके भेज दें। उसकी इस मुहिम में दिलीप अपने कुछ और दोस्तों को भी शामिल कर उनसे भी पिटीशन साइन करवाए।

नैंसी के पति के साथ क्या अन्याय हुआ है, जानने की उत्सुकता पैदा हो गई। मेल पढ़ते ही दिलीप के मस्तिष्क में सबसे पहले यही विचार आया कि ष्बचपन से अब तक न जाने कितनी बार सुनता आया है कि जो जैसा करता है, उसे वैसा ही भरना पड़ता है। आज तक मैं इस कहावत को मात्र मन बहलाने के लिए रची गई आम कहावत समझता आया था पर पुरानी कहावतों में भी दम है, इस बात पर विश्वास करने का मन होने लगा है। नैंसी जैसी लड़कियाँ वक्त के साथ भी स्वयं को कहाँ बदल पाती हैं और मुसीबतों को आमंत्रण देती रहती हैं। जरूर ही उसके पति के साथ हुए अन्याय के पीछे भी नैंसी की ही कोई गैरजिम्मेदाराना हरकत होगी।"

दिलीप ने मेल के साथ अटैच पिटीशन खोलकर पढ़ना शुरु कर दी। लिखा था –

"मेरे पति उज्जवल सहगल यशभारती एयरलाइंस में कैप्टन थे। उन्हें अच्छे फ्लाइंग रिकॉर्ड और बोइंग 787 व एयरबस ए–380 जैसे विमानों को दो हजार से भी अधिक घंटों की उड़ान का अनुभव होने के कारण नमन इंडिया जैसे महत्वपूर्ण मिशन के लिए चुना गया था। कोविड काल में उन्होंने अनेक देशों में फँसे अपने नागरिकों को वापस लाने का सराहनीय कार्य किया है। अपने कर्तव्यपालन की राह में उन्होंने अपनी व्यक्तिगत परेशानियों को भी आड़े नहीं आने दिया। जब पहली बार उन्हें सिंगापुर में फँसे लोगों को लाने भेजा गया था तब उनकी माँ श्रीमती शोभना सहगल का किडनी स्टोन का ऑपरेशन हुआ था और वह हॉस्पिटल में एडमिट थी लेकिन मिस्टर सहगल ने अपने कर्तव्य को प्राथमिकता दी। मनीला मिशन पर उनकी फ्लाइट सुबह तीन बजे रवाना होनी थी लेकिन उन्हें रात में ग्यारह बजे मिशन पर जाने की सूचना दी गई और दो घंटे के अंदर रिपोर्ट करने के लिए कहा गया। लॉकडाउन के कारण टैक्सियाँ भी नहीं चल रही थीं तो मुझे रात में 55 कि.मी. कार चलाकर उनको एयरपोर्ट छोड़ने जाना पड़ा ताकि वह समय पर रिपोर्ट कर सकें। इसके बाद वह क्वालालम्पुर, शिकागो, दोहा और फ्रैंकफर्त के मिशन में भी शामिल रहे। गत दिनों जब वह सिडनी से परेशान देशवासियों को लेकर आ रहे थे उसी दौरान उन्हें नौकरी से मुक्त कर दिया गया। यह तो अच्छा हुआ कि उन्हें यह सूचना वापस आने पर मिली। यदि उन्हें यह सूचना फ्लाइट में मिल गई होती तो मन कल्पना करके ही अशांत

हो जाता है और अनेक तरह की आशंकाएँ मन को घेर लेती हैं। कोविड के कहर और तीस प्रतिशत सैलरी-कट के साथ काम करने वाले कर्तव्यपरायण व्यक्ति के साथ उसके नियोक्ताओं का यह व्यवहार मनमाना और गैरसंवैधानिक है। उनके इस व्यवहार से पूरा परिवार सदमे में है। ऐसा निर्मम व्यवहार केवल उनके साथ ही नहीं हुआ है, अपितु चालीस से अधिक कैप्टंस व पायलेट्स को अपनी नौकरी से हाथ धोना पड़ा है।"

इसके बाद एक अनुरोध था कि न्याय की हमारी लड़ाई में पिटीशन साइन कर आप साथ दीजिए।

पिटीशन पढ़कर दिलीप को अच्छा नहीं लगा। कुछ देर पहले उसे जिस कहावत में दम नजर आ रहा था वही अब खोखली लगने लगी। नैंसी के पति मिस्टर सहगल ने कम से कम "ग्यारह सैल्यूट" वाला काम किया है। इस काम के लिए उनको नियोक्ताओं की ओर से प्रशंसापत्र और विशेष पारितोषक मिलना चाहिए था लेकिन मिला टर्मिनेशन। ऐसे नियोक्ताओं से लाख गुना अच्छा तो मेरा मालिक है जिसके पास कारों की डीलरशिप है। पिछले चार महीने में चार कारें भी नहीं बिकीं, फिर भी उसने अपने किसी कर्मचारी को नहीं निकाला और न ही किसी की सैलरी कम की। बड़ी कंपनियों की बड़ी बातें, उन्हें किसी की परेशानी या रेपुटेशन से क्या मतलब। सहगल साब कैप्टन हैं, करोड़ों का पैकेज होगा, नैंसी भी जॉब करती होगी, फायनेंसियली उन्हें ज्यादा फर्क नहीं पड़ेगा लेकिन टर्मिनेशन का दाग एक ऐसा दाग है जिसे कोई भी वाशिंग पाउडर नहीं धो पाता। महामारी से निजात पाते ही एयर ट्रैफिक फिर सामान्य होने लगेगा और सहगल साब को भी कोई न कोई एयरलाइंस दोबारा जॉब दे ही देगी पर उस मानसिक यंत्रणा का क्या, जिससे वह इस समय गुजर रहे होंगे। शायद नैंसी भी अनुभव कर रही होगी इस पीड़ा को।

नैंसी और पीड़ा? दिलीप कब से चाह रहा था कि कोई नैंसी का गरूर भी खंडित करे, उसके स्वाभिमान को चोट पहुँचाए, कोई उसे नीचा दिखाए। आज उसे मौका मिल गया है नैंसी को नीचा दिखाने का। नैंसी उससे उसके पति को न्याय दिलाने में उसका साथ देने का अनुरोध कर रही है। "मैं अन्याय के खिलाफ इस लड़ाई में उसका साथ दूँगा और नीचा भी दिखाऊँगा उसे।", यह विचार मस्तिष्क में कौंधते ही दिलीप फुर्ति से उठा और लेपटॉप

से प्रिंटर कनेक्ट कर पिटीशन का प्रिंट आउट निकालने लगा।

दिलीप ने एक बार फिर पिटीशन को ध्यान से पढ़ा। वह उस पर दस्तखत करने वाला ही था कि अभिलाष की बात याद आ गई। वह कुर्सी से उठा और अलमारी में पिछले बीस साल से संभाल कर रखे गए जॉटर पेन को उठा लाया। इसी पेन के लिए अपमान किया था नैंसी ने उसका, अब यही पेन उसके अपमान का बदला नैंसी पर उपकार कर लेगा।

पर यह क्या, दिलीप को अच्छा नहीं लग रहा है। जी कसैला हो गया है। दस्तखत करते-करते हाथ रुक गए हैं। नहीं कर पा रहा है उस पेन से पिटीशन पर अपने दस्तखत। उंगलियों से जॉटर पेन फिसल कर टेबल पर एक ओर लुढ़क गया है। उसने जल्दी से दूसरा पेन उठाया और दस्तखत कर पिटीशन को लिफाफे में बंद कर दिया।

लिफाफा पोस्ट कर बहुत राहत महसूस की दिलीप ने। आकर नैंसी के मेल का उत्तर दिया - "मैंने पिटीशन साइन कर पोस्ट कर दी है। अन्याय के विरुद्ध आपकी लड़ाई को मेरा पूरा समर्थन है। आपको जरूर न्याय मिलेगा, मेरी शुभकामनाएँ।" - दिलीप भाटिया, भोपाल।

दस मिनट के अंदर नैंसी का उत्तर आ गया - "कहीं तुम वही तो नहीं, जी.एम. कान्वेंट में हमारे साथ पढ़ने वाले, न्यू मार्केट में जिसकी पेन की दुकान थी, दिलीप भाटिया। बचपन की नादानी में बहुत गलतियाँ हुई है मुझसे... और देखो मैं कितनी खुशकिस्मत हूँ कि किसी ने उन गलतियों को अपने दिल पर नहीं लिया। अभिलाष कभी मिले तो उस तक भी मेरी भावनाएँ पहुँचा देना। अपना नंबर दो, तुमसे बात करनी है।" - नैंसी कार्वेल्हो सहगल, मुम्बई।

नैंसी के मेल को कई बार पढ़ा दिलीप ने और फिर जॉटर पेन को टेबल से उठाकर डस्टबिन में डाल दिया...

कौए

रविकांत की आकस्मिक मृत्यु का मैसेज पढ़ते ही कार्तिक शर्मा को अपनी सारी संज्ञायें शिथिल पड़ती प्रतीत हुईं। वह किंकर्तव्यविमूढ़ स्थिति में कुर्सी पर ही अपने दोनों हाथों से सिर को पकड़ कर फैल गया। पास बैठे सहकर्मी मानवजीत ने उसे देखा तो उठकर पास आ गया और कंधे पर हाथ रखते हुए बोला – "तुम ठीक तो हो।" कार्तिक ने स्वयं को संभालने की कोशिश की किंतु बड़ी मुश्किल से कह पाया – "मानव, मेरा छोटा भाई नहीं रहा... प्लीज भोपाल जाने के लिए हम तीनों, मेरा, सरला और नैवेद्य का तुरंत किसी फ्लाइट से टिकट बुक करा दो।"

बैंगलौर से भोपाल के लिए पहली उपलब्ध फ्लाइट मुम्बई होकर रात को ग्यारह बजे थी। मानवजीत ने उसी फ्लाइट से तीनों के टिकट बुक करा दिए। कार्तिक समय से काफी पहले ही सरला और नैवेद्य को लेकर एयरपोर्ट पहुँच गया। हर पल उसे काट रहा था, जितनी जल्दी हो सके वह अपने गाँव भानपुर पहुँच जाना चाहता था। हर पाँच मिनट में वह घड़ी की ओर देखता और उसकी सुस्त चाल देखकर मन ही मन खीझ उठता।

रविकांत कार्तिक का चचेरा भाई था लेकिन वह बचपन से ही कार्तिक के साथ रहा था अतएव दोनों के बीच रिश्ता सगे भाईयों से भी बढ़कर था। रविकांत जब सात साल का था तभी उसके पिताजी गाँव से शहर में अपने भाई के पास पढ़ने के लिए सागर छोड़ गए थे। चाचा गाँव में खेती-बाड़ी का काम देखते थे। गाँव में ढंग का स्कूल नहीं था, रविकांत पढ़ने में पिछड़ रहा था। रविकांत के आने से कार्तिक, उसका छोटा भाई सौरभ तथा बहिन वर्तिका बहुत खुश हुए थे।

रविकांत कार्तिक से दो साल छोटा था और सौरभ से केवल ग्यारह दिन बड़ा था। वर्तिका सबसे बड़ी थी। हम उम्र होने के कारण सौरभ और रविकांत में बात-बेबात लड़ाई होती रहती, तब कार्तिक को ही दोनों के बीच सुलह करानी पड़ती। वह दोनों को अपने पास बैठाकर प्यार से समझाता।

रविकांत गाँव से आया था, शुरु में उसे शहरी तौर-तरीकों से बोलने और उठने-बैठने का सलीका नहीं आता था। सौरभ के दोस्त उससे दूरी बना कर रखते। रविकांत को बुरा लगता और दोनों इसी बात को लेकर भिड़ जाते। दोनों के बीच लड़ाई के अनेक दूसरे कारण भी होते। जैसे कभी-कभी जब दोनों लूडो अथवा साँप-सीढ़ी खेलने बैठते और सौरभ बेईमानी कर जीतने की कोशिश करता, तब रविकांत "नहीं खेलना तुझ जैसे रोंगट्टे के साथ" कहते हुए बीच में ही खेलना छोड़ देता। फिर क्या था, दोनों में तू-तू मैं-मैं होने लगती, कभी-कभी हाथापाई भी हो जाती। हार अक्सर रविकांत की होती, फिर वह कमरे में जाकर देर तक सुबकता रहता। वर्तिका दीदी सौरभ को डाँटती, सौरभ को भी अपनी गलती का अहसास हो जाता और फिर वह स्वयं ही रविकांत के पास जाकर अपनी छोटी उंगली से उसकी छोटी उंगली मिलाकर मिट्टी कर लेता।

एयरपोर्ट पर फ्लाइट के इंतजार में बैठे कार्तिक का मन रविकांत के बचपन की सुधियों में खोया हुआ था। उसके मस्तिष्क में स्मृति-चित्रों की जैसे कोई फिल्म चल रही थी। रविकांत के साथ व्यतीत किए गए दिनों की हर छोटी-बड़ी घटना उसकी चेतना को झकझोर रही थी। वह रोना चाहता था लेकिन बड़ी मुश्किल से अपने आँसुओं के सैलाब को बांध तोड़ कर बह जाने से रोके हुए था। नैवेद्य सरला की गोदी में रोते-रोते सो गया था। उसे सरला ने बड़ी मुश्किल से रागी और वैफर्स खिलाकर सुलाया था। उन दोनों ने तो दोपहर से कुछ भी नहीं खाया था।

"कार्तिक, आप धीरज रखिए... आपकी व्यग्रता मुझे भी व्यथित कर रही है। एक बार आप गाँव में चाचा जी से भी बात कर लीजिए, मन हलका हो जाएगा... ।" सरला ने कार्तिक की ओर कातर निगाहों से देखते हुए कहा।

"नहीं सरला, मै क्या कहूँगा उनसे... शांत हो जाइए, रोइए नहीं। क्या हुआ यदि रविकांत नहीं रहा... नहीं, मैं नहीं बात कर पाऊँगा उनसे।" - कार्तिक की आवाज भर्राने लगी। उसकी वाणी में लिपटी पीड़ा ने सरला की आँखों को भी झील में तब्दील कर दिया।

"ठीक है, मैं समझ सकती हूँ... बात मत कीजिए लेकिन संभालिए अपने को, अच्छा चलिए, उठिए एक-एक कप चाय पीकर आते हैं। आप कुछ खा भी लीजिए, भूखे रहेंगे तो एसिडिटी बढ़ जाएगी।" - सरला रुक-रुक कर

बोली। वह चाहती थी कि इसी बहाने कार्तिक थोड़ी चहलकदमी कर लेंगे। हो सकता है उन्हें विषाद के खोल से बाहर निकलने की राह सूझ जाए या कुछ समय के लिए भाई की मौत का दर्द ही भूल जाएँ।

"तुम बैठो, नैवेद्य जाग जाएगा। मैं तुम्हारे लिए भी चाय और कुछ स्नैक्स लेकर आता हूँ।" – कार्तिक ने कहा और स्नैक्स पार्लर की ओर चल दिया।

चाय पीते हुए भी कार्तिक अपने आंतरिक ऊहापोह में ही फँसा रहा। सरला ने उसका ध्यान भटकाने के लिये कई बार बात करनी चाही पर उसने... हाँ... हूँ.. के अतिरिक्त कोई उत्तर नहीं दिया। वह रविकांत की यादों से बाहर निकलना ही नहीं चाह रहा था।

रविकांत आठवीं में मात्र 52 प्रतिशत अंक ही ला सका था। पापा ने उसे बहुत डाँटा था, एक कार्तिक ही था जिसने उसे हिम्मत बँधाई थी और हर दिन एक-दो घंटे पढ़ाने का जिम्मा लिया था। उसकी और रविकांत की मेहनत रंग लाई थी। नौवीं में रविकांत फर्स्ट आया था तथा दसवीं में तो उसे तीन विषयों में डिस्टिंक्सन मिला था। सौरभ और रविकांत में झगड़े तब भी होते रहते थे लेकिन सुलह भी दोनों में शीघ्र हो जाती। कार्तिक को याद आया जब एक बार दोनों में झगड़ा हुआ था तो कई दिनों तक दोनों ने एक दूसरे से बात नहीं की थी। रविकांत को माचिस की खाली डिब्बियाँ और सिगरेट के पैकेट के रैपर इकट्ठे करने का शौक था। सौरभ को उसका कलेक्शन देख कर ईर्ष्या होती थी तथापि सौरभ के पास भी पोस्टल स्टैंप्स का अच्छा खासा कलेक्शन था जिसे देख कर रविकांत का मन भी ललचाता था। एक दिन सौरभ ने मौका पाकर रविकांत के कुछ रैपर ले लिए। बाद में जब रविकांत ने अपना कलेक्शन चेक किया तो वह तुरंत समझ गया कि यह सौरभ की ही कारिस्तानी है। उसी दिन उसने भी मौका देखकर सौरभ के एलबम से कुछ स्टैंप्स निकाल लिए। इसके बाद तो दोनों में जमकर हाथापाई हुई थी, वर्तिका दीदी भी दोनों को रोक नहीं सकी थी। कार्तिक ने किसी तरह रविकांत को शांत कराया था।

गाँव से चाचा-चाची लगभग हर माह दो-तीन दिनों के लिए रविकांत से मिलने शहर आते रहते थे। रविकांत की पढ़ाई-लिखाई से वह संतुष्ट थे। उनकी इच्छा थी कि रविकांत बारहवीं पास करने के बाद उनके साथ गाँव में ही रहे और खेती-बाड़ी के कामों मे उनका हाथ बँटाए। रविकांत

उनकी इकलौती संतान था लेकिन रविकांत आगे पढ़ना चहता था। कार्तिक भी चाहता था कि रविकांत अपनी पढ़ाई जारी रखे। सौरभ भी नहीं चाहता था कि रविकांत पढ़ाई बीच में छोड़ कर गाँव चला जाए। अंत में पापा ने सब अच्छे से संभाल लिया था।

12वीं पास करते ही कार्तिक बी.बी.ए. करने नोएडा चला गया था। बाद में सौरभ का एडमिशन भी पुणे के इंजीनियरिंग कॉलेज में हो गया था और रविकांत भी बी.एस.सी. (एग्रीकल्चर) करने जबलपुर चला गया। पापा ने चाचा को रविकांत की पढ़ाई जारी रखने के लिए समझा कर तैयार किया था।

रविकांत से कार्तिक की अगली मुलाकात डेढ़ वर्ष पश्चात वर्तिका दी की शादी में हुई थी। उसने शादी की व्यवस्था की सारी जिम्मेदारी अपने कंधों पर उठा रखी थी। वह बहुत बड़ा हो गया था बिल्कुल घर के दूसरे बुजुर्गों की तरह। उसकी बातचीत के लहजे में भी बुजुर्गियत झलकने लगी थी। समय से पहले ही रविकांत का यूँ बड़ा हो जाना कार्तिक को अच्छा नहीं लगा था। सौरभ तो तब तक वैसा ही बेपरवाह और बिंदास था।

वर्तिका दीदी की शादी के चार माह पश्चात ही परिवार पर दुखों का पहाड़ टूट पड़ा। मम्मी-पापा तीर्थ-यात्रा पर केदारनाथ गए तो वहाँ से लौट कर ही नहीं आए, आई उनकी मौत की खबर आई। दाह-संस्कार हेतु उनके मृत शरीर भी नहीं मिल सके। बेटी को विदा करने के बाद मम्मी की बड़ी इच्छा थी, किसी तीर्थस्थान पर जाने की। पापा को भी छुट्टियाँ मिल गईं सो मम्मी की इच्छा पूरी करने की राह की अड़चन भी समाप्त हो गई। अचानक मिले इस सदमे से उबर पाना किसी के लिए आसान नहीं था। बी.बी.ए. करने के बाद कार्तिक एम.बी.ए. कर रहा था उस समय। पूरा एक साल बाकी था, डिग्री हासिल करने के लिए। सौरभ का तो इंजीनियरिंग का दूसरा ही साल था। दोनों को अपना भविष्य अंधकारमय लगने लगा था। कार्तिक के मन में तरह-तरह के विचार आने लगे थे। उनमें से एक यह भी था कि वह पढ़ाई छोड़ कर अनुकंपा नियुक्ति के लिए आवेदन दे देगा और सौरभ की पढ़ाई में अवरोध नहीं आने देगा। चाचा को कार्तिक के प्लान का पता चला तो वह नाराज हुए। उन्होंने खेत का एक छोटा सा टुकड़ा बेंचकर कार्तिक और सौरभ की पढ़ाई जारी रखने की व्यवस्था की। यह तो उन्हें बहुत बाद में पता चला कि उनकी पढ़ाई के लिए रविकांत ने बहुत बड़ा बलिदान दिया

था। उसने चाचा को उनकी इच्छा की याद दिला कर अपनी पढ़ाई बीच में छोड़ दी थी और खेती-बाड़ी के कामों में चाचा का हाथ बँटाने लगा था। रविकांत के इस त्याग की याद आते ही कार्तिक की आँखें भर आईं और रुके हुए आँसू अंततः ढुलक ही पड़े।

फ्लाइट की बोर्डिंग का समय हो चुका था। कार्तिक ने नैवेद्य को गोदी में उठाया और एयरोब्रिज से होते हुए विमान में बैठ गया। उसके विचारों की शृंखला केवल उतनी देर के लिए ही बाधित हुई, जितनी देर उसे बोर्डिंग पास दिखाने से लेकर निर्धारित सीट पर बैठने में लगी। विमान में बैठते ही वह फिर यादों की खोह में घुस गया और पूरे सफर के दौरान चुपचाप बैठा रहा।

मुम्बई में लगभग दो घंटे रुकने के बाद तीनों अगली फ्लाइट पकड़ कर रात में चार बजे भोपाल पहुँचे। कार्तिक के कहने पर मानवजीत ने पहले ही गाँव जाने के लिए टैक्सी बुक कर दी थी। भोपाल से गाँव तक का सफर लगभग तीन घंटे का था। जैसे-जैसे उसका गाँव पास आता जा रहा था कार्तिक के हृदय की धड़कनें बेकाबू होने लगीं, आँखों से आँसू बाहर आने के लिए बेताब हुए जा रहे थे। सरला ने उसे रूमाल दिया, कार्तिक ने डबडबाई आँखों से उसकी और देखा और रूमाल लेकर चेहरे को पोंछते हुए बोला - "अब तक तो सभी रिश्तेदार भी गाँव पहुँच चुके होंगे, सभी उनका ही इंतजार कर रहे होंगे। चाचा-चाची तो देखते ही लिपट जाएँगे, रो-रोकर उनका तो बुरा हाल हो चुका होगा। कैसे सामना करेगा उनका... क्या कहेगा उनसे... कैसे ढाढ़स बँधाएगा उन्हें? बुढ़ापे के दिनों में कैसा दुखों का पहाड़ टूट पड़ा है उन पर... ।"

"आप धीरज रखिए, आप सबसे बड़े हैं अब परिवार में, इतने व्यथित रहेंगे तो चाचा-चाची को कैसे सहारा देंगे।" - सरला ने कार्तिक के सिर को सहारा देते हुए शांत स्वर में कहा।

कार्तिक ने कोई उत्तर नहीं दिया। टैक्सी जब चाचा के घर के सामने रुकी तो वहाँ का दृश्य देखकर सभी आवाक रह गए, कोई भीड़-भाड़ नहीं, कोई अफरा-तफरी नहीं, रोने-धोने की आवाज भी नहीं, किसी तरह के गम का चिन्ह नहीं। धड़कते दिल और तेज कदमों से कार्तिक ने घर के अंदर प्रवेश किया। पौंर पार करते ही आँगन में चाची उसे साबूदाने के पापड़ चादर से निकालते दिखीं। आहट पाकर चाची ने उन लोगों को पलट कर

देखा तो स्नेह से बौराती हुई उठ खड़ी हुई - "अरे बबुआ... आ गए तुम... बहुरिया भी आई है... तुम सब वहीं ड्योड़ी पर रुको... बिट्टू पहली बार गाँव आओ है ऊकी आरती उतारने है।" - कहते हुए खुशी के अतिरेक में चाची उतनी ही तेजी से चौके की और लपकीं। कार्तिक और सरला हतप्रभ खड़े अविश्वास से चाची को देखे जा रहे थे, उन्हें कुछ समझ में नहीं आ रहा था। चाची की हड़बड़ाहट और खुशी देख कर दोनों असमंजस में थे लेकिन उनके क्लांत हृदय की व्यथा कम होने लगी थी, उनकी आँखों से बहने को आतुर अश्रु सूखने लगे थे। अब उन्हें दूसरा प्रश्न परेशान कर रहा था - "रविकांत कहाँ है? चाचा भी दिखाई नहीं दे रहे हैं... कोई रिश्तेदार भी नजर नहीं आ रहा है, तो क्या किसी ने रविकांत की मौत की झूठी खबर दी उन्हें, पर किसने? ऐसी शरारत भी भला करता है कोई? नहीं ये शरारत नहीं है... चाचा के नंबर से ही रविकांत की मौत का संदेश मिला था उनको... तो क्या किसी ने चाचा के मोबाइल से ऐसी छेड़छाड़ कर यह शरारत की है? कौन कर सकता है ऐसा, एक बार पता लग जाए तो वह छोड़ेगा नहीं। पिछले 20-22 घंटों में कितनी पीड़ा सही है उन लोगों ने, एक पल भी सुकून से नहीं गुजरा है।" कार्तिक का मन पुनः अशांत होने लगा था। जल्द से जल्द सच जानने को उतावला हुए जा रहा था वह।

"रविकांत कहाँ गया है चाची।" - कार्तिक ने आरती की थाली लेकर आती हुई चाची से पूंछा।

"वो अपने ड्यूटी पर गओ है कछू जरूरी काम से, तीन बजे तक आ जैहे।" - चाची उत्तर में बोलीं।

"वह ठीक तो है, उसे कुछ हुआ तो नही।" - साफ-साफ पूछने में कार्तिक को झिझक महसूस हो रही थी।

"अरे नईं बबुआ, वो बिल्कुल भलो चंगो है... ऊकी महरारू अबईं परों मायके गई है, सोनी के होवे के बाद गई नईं थी अब तक।" - कार्तिक के मानसिक उथल-पुथल से अनभिज्ञ चाची ने सहज भाव से उत्तर दिया। चाची की बातों से कार्तिक को इतना भरोसा तो हो गया था कि रविकांत सकुशल है लेकिन उसकी विह्वलता शांत नहीं हुई थी। वह आँगन में पड़ी चारपाई पर बैठ गया। सरला चौके में चाची का हाथ बँटाने चली गई। थोड़ी देर में चाची चाय और बेसन के लड्डू लेकर आईं और कार्तिक के पास

जमीन पर बैठ गई।

"बहुत दुबरा गए हो बबुआ, इतना ज्यादा काम मती किया करो... बहू, तुम भी ध्यान दिया करो, देखो कैसो चेहरा हो गओ है।"

सरला क्या जवाब देती, कैसे कहती... "जबसे देवर जी की मौत की खबर सुनी है तबसे अर्द्धविच्छिप्त सरीखे हो गए हैं, अब जाके थोड़ा सहज दिखाई दे रहे हैं।"

"चाची" – संबोधित कर कार्तिक रुक गया और सही शब्द तलाश करने लगा कि कैसे चाची से अपने मन में चल रहे असमंजस को व्यक्त करे – "रविकांत के बारे में कल चाचा की खबर आई थी, लगता है उनके फोन से किसी ने मजाक किया था।"

"अरे नईं, वो खबर तो चाचा ने ही दई हती... हमाए कहबे से।" – चाची बोली।

"आपके कहने से... पर आपने ऐसा करने को कहा क्यों?" – कार्तिक के अंदर का गुस्सा उसके शब्दों में झलक आया था। सरला ने आश्चर्य से कार्तिक की ओर देखा और आँखों ही आँखों में स्वयं पर नियंत्रण रखने का अनुरोध किया। कार्तिक को लगा वह धड़ाम से आसमान से जमीन पर आ गिरा है। चाची को उन्हें बुलाना ही था तो सीधे-सीधे बोल कर बुला लेतीं, ऐसा बाहियात मैसेज भेजकर बुलाने की क्या जरूरत थी। ऐसा करके उन्होंने कितना मानसिक संताप दिया है उसे, नहीं समझेंगी चाची। कार्तिक खुद को बुरी तरह छला गया महसूस कर रहा था। रविकांत की मौत की खबर से उसका मन कितना विह्वल था कि सिर फटने को करने लगा था, अब उसका मन सिर धुनने का हो रहा था।

"भैया, आप कमाल हो, मुझे शर्त में हरवा दिया न... आप तो सचमुच में हमसे पहले पहुँच गए।" – यह सौरभ की आवाज थी जो अभी-अभी अंदर आया था और कार्तिक को देखकर उससे गले लगने उसकी ओर लपक कर चला आ रहा था। पत्नी सीमा और वर्तिका दीदी भी उसके साथ आई थी। थोड़ी ही देर में रविकांत के मामा और मौसी भी आ गई।

"मेरे कारण कौन सी शर्त हार गए तुम।" – कार्तिक ने सौरभ से पूछा।

"वर्तिका दीदी कह रहीं थी कि देखना सबसे पहले कार्तिक ही पहुँचेगा लेकिन मैं उनकी बात से सहमत नहीं था सो उनसे शर्त लगा ली, अब शर्त

हार गया न आपके कारण।" – सौरभ ठिठोली करते हुए बोला।

"क्या तुम्हें मैसेज पढ़कर दुख नहीं हुआ था जो शर्त-शर्त खेलते हुए चले आ रहे हो।" – कार्तिक थोड़े गुस्से से बोला।

"दुख की बात थी तो दुख तो होना ही था, रोया भी खूब फिर वर्तिका दीदी से बात की, उनका भी रो-रोकर बुरा हाल था। फिर सोचा जब हमारा ये हाल है तो चाचा-चाची पर क्या गुजर रही होगी? सीमा के कहने पर चाचा को फोन लगा लिया और हमें सारी वस्तुस्थिति पता चल गई।" – सौरभ ने कहा – "वर्तिका दीदी को बताया तो उन्होंने कहा, हमने चलने की तैयारी कर ही ली है तो चलते हैं चाचा-चाची से मिलने, कार्तिक भैया से भी मुलाकात हो जाएगी।"

"क्या कहा था चाचा ने" – कार्तिक ने उतावलेपन से पूछा।

जवाब चाची ने दिया – "कल सबेरे सबेरे जब रबी अपनी ड्यूटी पर जा रओ तो ऊने कौआ के ऊपर कौआ बेठो देख लओ हतो... सबेरे सबेरे इतनो अशुभ... हमई ने चाचा से कहके सभी नाते-रिश्तेदारों को खबर कराई ती कि लोग रो-धो के शोक मना लें तो अशुभ टल जैहे।" – कहते-कहते चाची की आँखे नम हो गईं – "बबुआ, हमाए बुंदेलखंड में कौआ के ऊपर कौआ खों बैठो देखवो बहुत बड़ो अशुभ मानो जात है, देखवे वाले की अकाल मर्तू तक हो जात है। परके साल ही गोकूल कक्का को नाती ऐई कारन चल बसो हतो। गाँव के भजनलाल पंडित और रामरतन गुनिया ने जैई जतन बताओ हतो कि नजदीकी नाते-रिस्तेदार रविकांत की मर्तू को शोक मना लेहें तो बिपती टल जैहे, नई तो अनहोनी होके रैहे... अब तुमई बताओ बबुआ हम का करते... देखो बिपदा टल गई कि नई"

कार्तिक कुछ नहीं बोल सका। चाची के भोलेपन ने उसके मन को भीतर तक भिगो दिया था। उसका सारा गुस्सा हवा हो चुका था।

कोचिंग

बड़ा लज्जित महसूस किया था उसने जब आई.आई.टी. कोचिंग के पहले टेस्ट का परिणाम आया था। छयालीस बच्चों में बयालीसवें नंबर पर आया था वह। परिणाम निराशाजनक था स्वभावतः बहुत निराशा हुई थी उसे। पापा-मम्मी ने जिन अपेक्षाओं के साथ उसे आई.आई.टी. की कोचिंग के लिये घर से इतनी दूर भेजा था, उनकी उम्मीदें बेजा लगने लगीं थी। कई दिन लग गए थे, निराशा के इस अँधेरे से निकलने में। मेहनत वह खूब करता था परंतु जिस एकाग्रता की जरूरत ऐसी परीक्षाओं के लिए होती है वह उसमें सफल नहीं हो पा रहा था। जितना वह मन को स्थिर करने की कोशिश करता, उतना ही उसका मन भटकता हुआ छतरपुर की गलियों में पुराने दोस्तों, माँ और सांभवी के बीच ले जाता। मोबाइल पर माँ से बात रोज होती थी लेकिन उन्हें मिस करने की बात कहने का साहस नहीं कर पाता था। सांभवी को भी मिस करता। सांभवी उसकी छुटकी, उसकी बहिन। कोटा आकर उसे सांभवी की हर छोटी-छोटी बात याद आती थी। उसके बारे में सोचता रहता - "कितना अर्सा बीत गया है उससे झगड़ा किए हुए, उसकी चोटी खींच कर सताए हुए।" सांभवी भी तो उसे बहुत परेशान करती थी। जब भी उसके साथ चेस खेलती, हार सामने देख कर मोहरों को उछाल देती थी और दूर खड़ी होकर जीभ चिढ़ाने लगती। कैरम खेलते हुए भी सांभवी अक्सर ऐसा ही करती थी।

उस दिन की स्मृति अब भी ताजा है जब उसने सांभवी के साथ चेस खेलने से मना कर दिया था। सांभवी ने चिढ़ कर उसके टेबल टेनिस के नए रैकेट की रबर निकाल कर फेंक दी थी। बहुत रोया था वह। बहुत झगड़ा था सांभवी से, कई दिनों तक बोला भी नहीं था। यह घटना जब भी याद आ जाती है, मन दुखी हो जाता है। सांभवी की ऐसी कितनी ही नादानियाँ अकेले में उसकी आँखें नम कर जातीं हैं तो कभी होंठो पर हँसी भी ले आती हैं। उसे लगने लगा है कि एक माह में ही वह एकाएक बहुत बड़ा हो

गया है, 16 साल से पूरे 25 साल का। एक बार सोचने बैठ जाता है तो फिर सोचता ही रहता है, चलचित्र की भाँति अनेक चित्र उसके मन-मस्तिष्क पर उभरते चले जाते हैं। अचानक याद आता कि सुबह फिजिक्स का टेस्ट है तो हड़बड़ाकर उठता है, मुँह पर पानी के छींटे मारता है और फिर किताबों में खो जाने की कोशिश करने लगता है।

दो माह बीतते-बीतते उसने अपनी रैंकिंग में कुछ सुधार कर लिया था। स्थिति बहुत संतोषजनक नहीं थी, पर एक शक्तिवर्धक टॉनिक की तरह अवश्य थी। उसे पता था, मंजिल आसान नहीं है, निर्धारित समय में सभी प्रश्नों को हल करना चुनौती था उसके लिए। समय का दवाब उसे हरा रहा था। कई प्रश्न उसे आते हुये भी छूट जाते थे। अगले एक माह तक वह अपनी रैंकिंग में मामूली सुधार ही कर पाया। उसके मन में डर बैठने लगा कि समय के कारण वह पीछे छूट जाएगा। उसके साथी भी उसकी कोई मदद नहीं करते थे वह उनका प्रतिद्वंदी जो था। कॉम्पिटिशन की इस भावना के कारण बहुत से बच्चों की बाल-सुलभ मौलिकता खतम हो रही थी। अधिकांश बच्चे एक-दूसरे को सहयोगी समझते ही नहीं थे। टीचर्स उसकी मदद तो करते थे परंतु अंग्रेजी में बात न कर पाने की अपनी कमजोरी के कारण वह उनसे पूछने में झिझक महसूस करता था। कहने को तो वह भी छतरपुर के एक नामी कॉन्वेंट स्कूल में पढ़ता था पर अंग्रेजी के स्थान पर वहाँ अधिकतर पढाई हिंदी में ही होती थी। इस कारण भी उसकी जिज्ञासाएँ मन में दबी रह जातीं थी।

दोस्त बनाने में वह शुरू से ही सेलेक्टिव था। टेस्ट में अव्वल आने वाले स्टूडेंट उसकी और उपेक्षित नजर से देखते थे और जो उससे दोस्ती करना चाहते थे, वे लड़के उसे पसंद नहीं थे। टेस्ट में सबसे फिसड्डी रहने वाले नंदन मेहरा और सुरेश जाटव अक्सर उसके आगे पीछे घूमते रहते और "चिकने क्या हाल है" कहते हुए अजीब निगाहों से देखते थे। वह यथा संभव उनसे बचकर ही रहता।

तीन माह बाद चित्रा के रूप में उसे अपने स्वभाव के अनुरूप दोस्त मिली। चित्रा को भी एक दोस्त की तलाश थी। वह भी उसी की तरह एक छोटे शहर देवास से कोचिंग लेने आयी थी। दोनों में शीघ्र ही गहरी दोस्ती हो गई। वह दूसरे बच्चों की तरह खुदगर्ज नहीं लगी थी उसे, उसी की तरह

निश्छल और सहज स्वभाव की थी वह। वह अपनी माँ के साथ एक वन बी.एच.के. फ्लैट लेकर रहती थी।

कोचिंग क्लास में भी वह चित्रा के पास ही बैठने लगा था। कई बार क्लास अनवरत रूप से छः सात घंटे लगती और बीच में बमुश्किल बीस मिनट का ब्रेक मिलता। चित्रा उसके साथ अपना टिफिन शेयर करती और जिद करके अपने हिस्से के ब्रेडरोल और गाजर का हलवा भी उसे खिला देती। दिन-प्रतिदिन वह अपने में बहुत परिवर्तन अनुभव करने लगा था। घर की भी अब उतनी याद नहीं सताती थी। चित्रा की संगति में वह ज्यादा खुशमिजाज और व्यवस्थित हो गया था। वीकली-टेस्ट्स में भी उसका परफॉरमेंस सुधरता जा रहा था। चित्रा उसकी यथासंभव मदद करती थी। कोटा में अब उसका मन लगने लगा था। आंटी के यहाँ का खाना भी उसे अब उतना तीखा नहीं लगता था। शुरु-शुरु में उससे वहाँ का खाना खाया ही नहीं जाता था। इतनी मिर्ची, ऊ ऊ करते हुए हर निवाले के साथ वह पानी पीता रहता था। रात में जलन होती तो जेलुसिल सीरप लेकर सो जाता।

दीपावली पर उसे छः दिनों की छुट्टियाँ मिली थी। सांभवी, माँ, पापा, दादी और दोस्तों को कोटा के अनुभव सुनाने में ही सारा समय निकल गया। घर पर सभी ने उसमें बहुत परिवर्तन महसूस किया। पाँच माह में ही वह बड़ा धीर-गंभीर हो चुका था। मम्मी-पापा तो यह देखकर बहुत आश्वस्त हुए पर सांभवी को अचंभा हुआ कि भाई अब सच में बड़ा भाई हो गया है। जब वह कोटा लौटने वाला था कि रुचिरा दीदी की शादी का कार्ड मिला। रुचिरा उसकी बुआ की लड़की थी। वह चाह कर भी उनकी शादी में शामिल नहीं हो सकता था।

वह दुखी मन से कोटा वापस लौटा तो एक और बुरी खबर ने उसे अंदर तक हिला दिया। उसके साथ कोचिंग में पढ़ने वाले सार्थक विश्वास ने पंखे से लटक कर जान दे दी थी। सार्थक कोटा के माहौल में स्वयं को एडजस्ट नहीं कर पा रहा था। टेस्ट में भी वह अंतिम तीन से ऊपर नहीं उठ पा रहा था। नंदन मेहरा और सुरेश जाटव तो उससे भी नीचे रहते थे टेस्ट में, पर दोनों को कभी चिंताग्रस्त नहीं देखा था उसने, हमेशा किसी न किसी के चक्कर में लगे रहते थे। पर सार्थक अक्सर अकेला ही रहता था, किसी से ज्यादा बातें भी नहीं करता था। खबर सुनकर वह रोया तो नहीं लेकिन अंदर

तक हिल जरूर गया था। अपेक्षाओं से मुक्ति का यह कौन सा तरीका है? पेरेंट्स तो भले के लिए अपने से दूर पढ़ने को भेजते है। अपने बच्चे को दूर भेज कर वे भी कहाँ चैन से रहते हैं। यदि सार्थक का मन यहाँ नहीं लग रहा था तो उसे अपने पेरेंट्स से बात करनी थी। पेरेंट्स को भी इस बात का ध्यान रखना चाहिए था कि सार्थक किसी तनाव से तो नहीं गुजर रहा। कितने किस्से सुने हैं उसने पिछले तीन-चार माहों में मन को झकझोर देने वाले। मेंस पास नहीं कर पाने के कारण सात-आठ बच्चों ने पिछले सत्र में अपनी जान दी थी। स्मिता का किस्सा तो झकझोर देने वाला था। वह प्रेग्नेंट थी इसलिए उसने फाँसी लगा ली थी।

वह हर बात अपनी माँ से शेयर करता था। उनसे बात कर के उसके मन को सुकून तो मिलता ही था हर मुश्किल से जीतने का साहस भी मिलता। जब भी वह इस तरह की किसी घटना के बारे में सुनता, कुछ बनने के उसके इरादे और भी मजबूत हो जाते। वह मन ही मन दोहराता रहता कि वह कमजोर नहीं है। किसी भी स्थिति में वह हार नहीं मानेगा, हर स्थिति से लड़ेगा। वह कायर नहीं है जो भाग खड़ा होगा, सोचते हुए उसका मन आत्मविश्वास से भर जाता।

आंटी के यहाँ उसके अतिरिक्त देवांग रहता था, जो उससे दो साल सीनियर था तथा दो बार मेंस एग्जाम दे चुका था किंतु एक बार भी पास नहीं हो पाया था। बड़े ही बेफिक्र किस्म का लड़का था, पढ़ाई को लेकर जरा भी गंभीर नहीं दिखता था। रूम पर उसने देवांग को शायद ही कभी पढ़ते देखा था। जब भी वह देवांग से टकराता, वह मोबाइल पर बतियाते दिखाई देता। वह सोचता बड़े बाप का बेटा है इसलिए मौज करने यहाँ आया है। दोनों में हाय-हैलो के अतिरिक्त ज्यादा बात नहीं होती थी। दोनों के नेचर में भी बहुत अंतर था। जहाँ देवांग को फैशनेबल कपड़े पहिनने और तरह-तरह के गैजेट रखने का शौक था वहीं उसे इन सबसे ज्यादा सारोकार नहीं था। वह जिस काम के लिये कोटा आया था वह उसी में फोकस रहना चहता था। देवांग से ही उसे पता चला था कि वह पापा-मम्मी से जिद करके अपने कुछ दोस्तों के साथ यहाँ कोचिंग के लिये आया था। देवांग के कुछ दोस्त जे.ई.ई. में पास होकर निकल गये थे, कुछ आल इंडिया इंट्रेंस टेस्ट में सेलेक्ट हो गये थे और कुछ स्टेट पी.ई.टी. से इंजीनियरिंग में चले गये थे।

देवांग को एक साल की और छूट मिली थी किस्मत आजमाने के लिए, यदि इस बार भी सफलता नहीं मिली तो वह इंजीनियर बनने का सपना देखना छोड़ देगा और कोई दूसरा कोर्स करेगा। क्या करेगा? यह तब तक निश्चित नहीं कर सका था। देवांग उसे किसी पहेली से कम नहीं लगता था। हर माह के पहले सप्ताह में वह आंटी से दो-तीन दिन की छुट्टियाँ लेकर अपने किसी अंकल से मिलने जाता था। जब लौटता तो उसके साथ कुछ नये कपड़े, गैजेट और कुछ गिफ्ट भी होते थे।

जब वह कोटा आया था तब माँ ने उसे बहुत सारे इंस्ट्रक्शंस दिये थे, क्या करना है और क्या-क्या नहीं करना है। दो साल तक कोई फिल्म नहीं देखनी है, न ही क्रिकेट मैच देखने में समय बरबाद करना है। आई. पी.एल. तो कतई नहीं। टेबल-टेनिस के रैकेट को हाथ नहीं लगाना है और स्केचिंग को तो भूल ही जाना है। सुबह-शाम दूध जरूर पीना है और खाने मे लापरवाही बिल्कुल नहीं करना है। बाप रे, इतने इंस्ट्रक्शन एक साथ... सोचा था उसने, पर माँ को उनकी सारी बातें मानने के लिए आश्वस्त किया था। टेबल-टेनिस और स्केचिंग उसके फेवरिट शौक थे। टेबल टेनिस में वह स्कूल की टीम में था और स्केचिंग में तो संभाग लेवल की स्पर्धाओं में दो बार सिल्वर मेडल जीत चुका था। माँ की आज्ञा का उसने अब तक पूरा ध्यान रखा था और अपने शौकों को उसने सपने पूरे होने तक तिलांजलि दे दी थी। चित्रा को गाने का शौक था। वह अपने साथ हारमोनियम भी लेकर आयी थी और यदा-कदा रियाज भी करती रहती थी। गाकर वह पढ़ाई के तनाव को कम करती थी और रेफ्रेश फील करती थी। जब भी वह चित्रा को गाने के लिये कहता वह उसके लिये एक ही गीत गाती थी - "पापा कहते हैं बड़ा नाम करेगा ।"

चित्रा उसे स्केचिंग के लिये प्रेरित करती थी, पर वह टाल जाता था। जब एक दिन चित्रा ने उससे बहुत जिद की तो उसे मानना पड़ा। अगले दिन उसने चित्रा का स्केच बनाकर उसे गिफ्ट किया तो चित्रा की खुशी देखने लायक थी। उसकी आँखों में अजीब सी चमक उतर आयी थी, उसने भी अपने दिल में कुछ अलग सी फीलिंग महसूस की थी। रात में जब उसने माँ से बात की तो उन्हें सब, इस बार सब नहीं, जितना जरूरी था उतना सब बता दिया - "माँ, तुम नाराज मत होना प्लीज, आपसे किये प्रॉमिस को मैंने

आज तोड़ दिया है... कई दिनों से स्केच बनाने का मन हो रहा था तो आज बनाया है एक स्केच, अब आगे ध्यान रखूंगा माँ।" उसे लगा था माँ नाराज होगी पर वह खुश हुई सुनकर – "शानू, मेरे बच्चे, मुझे नहीं पता था तुम प्रॉमिस को लेकर इतने सीरियस होगे, मैं तो केवल यही चाहती थी कि तुम जिस काम के लिये इतनी दूर गये हो उसके उद्देश्य से नहीं भटको, क्योंकि मैंने तुम्हें खाना-पीना भूलकर स्केचिंग में खोते देखा है। तुम तो हर काम उसमें डूबकर करते हो मेरे लाल, कभी-कभी तुम स्केचिंग भी कर सकते हो और क्रिकेट भी देख सकते हो... ।" उसे लगा, माँ का गला रुँधने लगा है और वह बोलते-बोलते रुक गई हैं।

माँ की बातों से उसे बहुत सुकून मिला, दिल का बोझ भी उतर गया। उत्साहित हो उसने वह स्केच अपनी व्हाट्सएप प्रोफाइल में लगा दिया। सांभवी का तुरंत मैसेज आ गया – "भैया, तो तुमने यह स्केच बनाया है. .. कौन है यह, अभी माँ को बताती हूँ। तुम कैसी पढ़ाई कर रहे हो, सब पता लग गया है मुझे... चुप क्यों हो, डर गये। तुम भी क्या याद करोगे भैया... नहीं बताऊँगी। दिखने में कुछ खास नहीं है, फिर तुमने इसका स्केच क्यों बनाया भैया? और बातें बाद में करती हूँ, सबसे पहले प्रोफाइल से ये पिक हटाओ, पापा-मम्मी ने देख ली तो खैर नहीं तुम्हारी।"

सांभवी भी कितनी बड़ी और समझदार हो गयी है, सात-आठ महीने में ही छोटी सी गुड़िया से एकदम जिज्जी बन गयी है। कैसी होगी सांभवी, किससे लड़ती होगी। बहुत लापरवाह है वह तो। स्कूल में वह ही उसका ध्यान रखता था। अब कौन रखता होगा उसका ध्यान? क्यों चिंता करते हो, आबिद और नवीन तो हैं उसका ध्यान रखने के लिये। दोनों उसे छोटी बहिन मानते है, सांभवी उन्हें राखी भी बाँधती है हर साल। आबिद, उसका दोस्त है, दिखने में बहुत बड़ा लगता है। दीवाली पर जब मिला था तो साले के थोड़ी-थोड़ी मूँछे भी आ गई थी। सहसा ही उसे देख कर हँसी छूट गई थी। उसने भी अपना हाथ होंठों के ऊपर फेरकर देखा था कि कहीं उसके भी तो मूँछ नहीं निकल आई है और उसने ध्यान ही न दिया हो। आबिद इस साल क्रिकेट टीम का कप्तान था। उसकी अगुआई में स्कूल ने संभागीय टूर्नामेंट भी जीता था। अपने इसी शौक के चलते आबिद ने कॉमर्स ले लिया था।

नवीन भी उसका पक्का दोस्त है जिसे थियेटर का शौक है। स्कूल के

नाटकों में वह भाग लेता है। शहर की एकमात्र रामलीला में भी उसने इस साल लक्ष्मण का रोल किया था। गुल दीदी के थियेटर ग्रुप से भी वह जुड़ा हुआ है। उसके पास चुटकुलों का असीमित भंडार है। तारीफ की बात तो यह है कि उसे परिस्थिति के अनुरूप चुटकुले सुनाने की समझ भी है। इस कारण सांभवी से उसकी कुछ ज्यादा ही घुटा करती थी। उसकी संगत में सांभवी ने भी चुटकुले नाटकीय अंदाज में सुनाना सीख लिया था। एक बार तो स्कूल में सांभवी ने हद ही कर दी थी। एक्टिविटी के पीरियड में उसने ऐसा मजाक किया था कि सारे टीचर्स और स्टूडेंट उसी की ओर देखने लगे थे। जोक किसी ने सुनाया था पर उसने बीच में कूदकर टीचर्स की सरासर इंसल्ट कर दी थी। जो जोक सुनाया गया था, ठीक-ठीक तो याद नहीं पर उसमें पूछा गया था कि भैंस हमें क्या देती है और सांभवी चहक कर बोल पड़ी थी - "होम वर्क" सुनकर पूरी क्लास में सन्नाटा छा गया था। मुटल्लो क्लास टीचर भारती अंबेकर अपनी झेंप छुपाते हुये जबरन हँसने का प्रयास करती दिखीं थीं। बाद में सांभवी को ले जाकर उसने उनसे माफी माँगी थी और बात आई गई हो गई थी। अब फिर सांभवी ने कुछ ऐसा वैसा कर डाला तो... अरे नहीं करेगी वह, बहुत समझदार हो गई है। देखा नहीं किस तरह उसने चित्रा की फोटो व्हाट्सएप से हटवाई है। संतोष की गहरी साँस लेते हुए वह खुद को किताबों में खपाने का प्रयास करने लगा।

आठवें मंथली टेस्ट में उसे चौथी रैंक मिली। वह बहुत खुश था। चित्रा के साथ वह इस खुशी को सेलिब्रेट करना चाहता था। अगले दिन उसने बिग बाइट रेस्त्रां से चित्रा के पसंदीदा पनीर रोल और बी. एंड आर. आइस्क्रीम पार्लर से मिंट चॉकलेट चिप्स आइस्क्रीम पैक कराई। वह चित्रा के फ्लैट की ओर जा ही रहा था कि रास्ते में नंदन मेहरा टकरा गया। उसका हाथ पकड़ कर बोला - "चिकने कहाँ जा रहा है, मेरे रूम पर चल, बहुत मजा आएगा तुझे।"

"छोड़ो मुझे।" - कहते हुए उसने किसी तरह अपना हाथ छुड़ाया और दौड़ लगा दी। इस आपाधापी में सारा सामान सड़क पर ही बिखर गया। रूम पर आकर बहुत रोया था वह।

वह अब तक हर अनहोनी के बाद स्वयं को मानसिक रूप से पहले से कहीं ज्यादा मजबूत पाता था पर इस घटना ने उसे बहुत व्यथित कर दिया

था। वह रात भर सो नहीं सका। बार-बार नंदन का चेहरा, उसका हाथ पकड़ना और कहने का बहशियाना अंदाज, उसकी नजरों में घूम जाता। सुबह जब उठा तो पूरा बदन टूट रहा था, वह ब्रश करके फिर से सो गया। उस दिन वह कोचिंग भी नहीं गया। शाम को चित्रा उसके रूम पर आ गई। क्या बताता उसे? कैसे बताता? ये भी कोई बताने की चीज है। चित्रा बार-बार पूछती रही, पर वह "कुछ नहीं... कुछ नही।" कहकर टालता रहा।

चित्रा के जाते ही उसे देवांग की याद आ गई। देवांग दो दिनों से अपने रूम में ही बंद था। दरवाजा खुला था, वह अंदर चला गया। देवांग के कमरे में किताबें कम, अनेक तरह के गैजेट की भरमार थी। टेबल पर पॉवरबैंक, एफ.एम. रेडियो, सी.डी. प्लेयर, लैपटॉप, आई पेड, ब्लू टूथ, ब्रांडेड घड़ियाँ, टाइटन आई के चश्में और न जाने क्या क्या। वह तो सबके नाम भी नहीं जानता था। इसके अतिरिक्त महँगी जींस और टी शर्ट कुर्सी पर बेतरतीब पड़ी हुई थी। उसे विश्वास हो गया कि देवांग बहुत पैसे वाले का बेटा है जिसके लिये कोचिंग टाइम पास से ज्यादा कुछ नहीं है।

दो दिन पहले ही देवांग अंकल से मिलकर आया था। इस बार अंकल ने देवांग को कैसिओ रिस्टवॉच और पेपे जींस गिफ्ट की थी। उसे पिछले माह देवांग के अंकल से हुई मुलाकात याद आ गई। जिद करके देवांग उसे अंकल से मिलने उनके होटल में ले गया था। पहली नजर में अंकल उसे बहुत भले और नेक इंसान लगे थे। उस दिन दोनों ने ही अंकल के साथ खाना खाया था। दो घंटे तक वह अंकल के साथ रहा था लेकिन जब उसने लौटने के लिये कहा तो अंकल और देवांग उसे रात में वहीं रुकने के लिए कहने लगे थे। दोनों ने ही अगले दिन सावन-फुहार वॉटरपार्क जाने का कार्यक्रम बना लिया था और उस पर भी साथ चलने के लिए दवाब बना रहे थे। उसे उनका इस तरह जिद करना अटपटा लग रहा था। वह अगले दिन टेस्ट का बहाना बनाकर लौट आया था। अंकल उसे पार्कर पेन का एक सेट गिफ्ट करना चाहते थे पर उसने शालीनता से मना कर दिया था। अंकल ने उसे गले लगा कर और उसके गालों को थपथपाकर विदा किया था।

इसके बाद से ही उसे देवांग के अंकल के बारे में जानने की इच्छा होने लगी थी। पूछने पर देवांग ने बताया था - "वह खत्री अंकल से पहली बार एक दोस्त के साथ मिला था, किसी सोशल साइट पर दोस्त की उनसे

मुलाकात हुई थी। अंकल उसे अच्छे लगे। जब भी वह कोटा आते तो दोनों उनसे मिलने चले जाते। इस साल दोस्त कोटा से वापस घर चला गया। अब मैं अकेला ही उनके पास कभी-कभी चला जाता हूँ। अंकल की जालंधर में स्पोर्टस गुड्स की मैनुफैक्चरिंग यूनिट है, अपने बिजनेस प्रमोशन के लिये वह हर माह यहाँ आते हैं दो-तीन दिनों के लिए।"

"वह हर बार इतने महँगे-महँगे गिफ्ट क्यों देते है।" उसने कह तो दिया फिर उसे लगा कि यह कहकर उसने गलती कर दी है।

"वह कहते है कि मुझसे मिलने के बाद उन्हें यहाँ पर बहुत बिजनेस मिलने लगा है और उनका बिजनेस खूब चलने लगा है। उन्होंने तो पहली भेंट में ही मुझे इंटैक्स का स्मार्टफोन दिया था। तबसे जब भी उन्हें बड़ा ऑर्डर मिलता है वह मुझे कुछ न कुछ गिफ्ट करते हैं। एक बार मैं उनके साथ उदयपुर गया था तो उन्हें एक करोड़ का ऑर्डर मिला था, इसके बाद से ही वह मुझे हर बिजनेस ट्रिप पर अपने साथ ले जाते है।"

उसे देवांग की कहानी पता नहीं क्यों बड़ी रहस्यमयी लगी थी। देवांग यहाँ कोचिंग लेने आया था लेकिन एक अनजान अंकल के बिजनेस की उसे ज्यादा चिंता थी। जबसे उसे यह कहानी पता लगी थी तबसे उसके दिमाग में अनेक तरह के प्रश्न आते थे और वह उनका उत्तर तलाशने की कोशिश करता रहता था। उस दिन भी जब देवांग उसे अपना ब्लू टूथ दिखा रहा था कि अंकल का फोन आ गया। वह जालंधर पहुँच गये थे। बात करते हुए देवांग ने उन्हें बताया कि अभी शशांक उसके पास बैठा है। देवांग का इस तरह उसके नाम का जिक्र करना उसे असंगत लगा। वह उठ कर जाने लगा तो देवांग ने रोक लिया। कुछ देर तक कमरे में सन्नाटा छाया रहा। देवांग की कराह के साथ कमरे में पसरा मौन टूटा। देवांग के पेट में मरोड़ उठी थी, वह उठकर वाशरूम की ओर भागा - "शशांक तुम रुकना अभी।"

देवांग के फोन पर बार-बार मैसेज आ रहे थे, वह अपनी उत्सुक्ता को रोक नहीं पाया और देवांग का फोन उठाकर देखने लगा। अंकल का मैसेज था - "तुमसे ि अ मलकर जब भी आता हूँ तो मन बहुत उदास रहता है। कुछ दिनों तक तुम्हारा हैंग ओवर रहता है, अगली बार जब मैं आऊँगा तो अपने दोस्त को मिलने के लिए जरूर लाना... बड़ा कमसिन है कमबख्त।"

मैसेज ने उसका मूड खराब कर दिया। उस रात भी वह पढ़ नहीं सका।

उसे ठीक से नींद भी नहीं आई। उसे बार-बार अंकल से हुई पहली मुलाकात याद आ जाती कि किस तरह उन्होंने उसकी कमर में हाथ डालकर उसे गले लगाया था और उसके गाल थपथपाए थे। अब कुछ-कुछ उनकी मंशा समझ में आ रही है यद्यपि उस दिन भी अंकल द्वारा गले लगाने पर पितृवत् वात्सल्य वाली फीलिंग नहीं हुई थी उसे। उसे आज स्वयं पर लज्जा आ रही थी। तो क्या अंकल और देवांग के बीच भी जतिन मिश्रा और भुवन काले के बीच जैसा कुछ है, जिनके बारे में उसने क्लास में अनेक लोगों के मुँह से सुना था। नंदन मेहरा और सुरेश जाटव के इशारे भी वह समझता था, लेकिन वही सब अंकल और देवांग... उसका सर घूमने लगा और वह कब सो गया, पता ही नहीं चला।

वह कोशिश करके भी अपने मानसिक विचलन को समेट नहीं पा रहा था। अगले दो टेस्ट्स में उसकी रैंकिंग गिरकर सत्रहवीं हो गई। चित्रा भी असमंजस में थी। वह उससे भी ज्यादा बात नहीं कर रहा था। क्लास में भी दूर-दूर बैठने लगा था।

ग्यारहवीं की परीक्षाएँ आ रहीं थी अतएव दो माह के लिए कोचिंग क्लासेज की छुट्टी घोषित हो गई थी। वह चित्रा से नजरें चुरा कर शीघ्रता से क्लास रूम से बाहर निकल आया था। नंदन मेहरा भी तेजी से उसके पीछे लपका। चित्रा ने दोनों को बाहर जाते देख लिया था।

"चिकने कब तक तड़पायेगा... आज तो चल रूम पे।" - नंदन उसका रास्ता रोक कर कह रहा था।

तड़ाक... नंदन के गाल पर झन्नाटेदार तमाचा पड़ा। दोनों के बीच चित्रा खड़ी थी - "अबे उससे क्या माँगता है... मुझसे माँग, मैं देती हूँ... क्या चाहिये तुझे... बोल हरामी के पिल्ले।"

नंदन भाग खड़ा हुआ। चित्रा उसका हाथ पकड़ कर एक तरफ ले गई। वह बुरी तरह हाँफ रहा था, कुछ बोल नहीं सका, आँखों में आँसू उतर आए थे। चित्रा ने पानी की बोतल उसकी ओर बढ़ाई। समय का कैसा फेर है ये... देश में न तो दामनियाँ सुरक्षित हैं और न लड़के। आज चित्रा के दुर्गा रूप के दर्शन किए थे उसने। मन ही मन निश्चय कर लिया कि अब दब्बू बन कर नहीं रहेगा वरना उसे नंदन और अंकल जैसे लोग चबा जाएँगे

देवास जाने से पहले चित्रा और आंटी ने उसे ट्रेन में बिठा कर रवाना

किया। पूरी यात्रा में चित्रा की याद उसके साथ बनी रही – "वह कितना बौना है चित्रा के सामने, कहने को लड़का है लेकिन हिम्मत जरा भी नहीं। चित्रा को देखो, लड़की होकर भी किस निर्भीकता से भिड़ गई थी नंदन से, एक पल को भी नहीं सोचा उसने कि नंदन ने पलट वार कर दिया तो... ।" सोचकर उसकी हृदय-गति बढ़ गई... अब कभी वह चित्रा को मुसीबत में नहीं डालेगा, हाथ जोड़कर माफी माँगेगा उससे। उसको भरोसा दिलाएगा कि अब वह पहले जैसा नहीं रह गया है, उसके कारण अंदर का डर निकल गया है और वह स्ट्रांग बन गया है।

दो माह पंख लगाकर उड़ गए। माँ और सांभवी उसे कोटा तक छोड़ने आए। दो दिन साथ में रहे, पर सांभवी चित्रा से नहीं मिल पाई। वह तब तक कोटा नहीं आई थी। माँ का जाना जरूरी था, वह पापा और दादी को ज्यादा दिन तक अकेला नहीं छोड़ सकती थी। दादी अर्थराइटिस के कारण ज्यादा चल-फिर नहीं पाती थी और पापा की भी शुगर अक्सर बढ़ जाती थी। माँ ही पापा से परहेज कराती थीं, वह स्वयं से तो रत्ती भर भी अपना ख्याल नहीं रखते थे।

कुछ दिन और बीत गये। नंदन जो घर गया तो फिर लौट कर ही नहीं आया, सामना होने पर उसका दोस्त सुरेश भी नजरें नीची किए निकल लेता। आई.आई.टी. मेंस का रिजल्ट आ गया। उसे और चित्रा को अच्छे मार्क्स मिले थे लेकिन देवांग इस बार भी असफल हो गया था। वह छुट्टियों में घर गया था लेकिन वापस नहीं आया। रिजल्ट तो उसे पता ही था, शायद घरवालों ने मना कर दिया होगा।

एक दिन जब वह कोचिंग से वापस लौटा तो आंटी उसे बाहर ही मिल गईं। आंटी बहुत उदास लग रहीं थी। उन्होंने बताया कि देवांग अब नहीं आएगा। उसके पापा ने आठ-दस लाख का कर्ज लेकर उसे कोचिंग के लिए कोटा भेजा था। तीन बार में भी जब वह मेंस क्लियर नहीं कर पाया तो हताशा में और कर्जदारों के दवाब के चलते उसके पापा ने ट्रेन से कटकर आत्महत्या कर ली। आज ही उसके अंकल उसका सारा सामान ले गए हैं। सुनकर उसे रोना आ गया, आँखों के सामने अंधेरा घिरने लगा, यदि आंटी न संभालती तो वह गिर ही जाता। उस दिन आंटी ने उसे कमरे में नहीं जाने दिया, नीचे अपने पास ही सुलाया, अपने साथ बिठा कर खाना भी खिलाया।

रात में उसके सिर पर हाथ फेरते हुए कहा – "शशांक, तुम बहुत बहादुर बच्चे हो और समझदार भी... मैंने तुम्हें बहुत जिम्मेदारी से सब काम करते देखा है, हर परिस्थिति से जूझने की ताकत है तुममें। आज ही तुम्हारे पापा का फोन आया था, दादी नहीं रही।"

वह एकदम चौंक कर उठ बैठा – "क्या कह रहीं हैं आंटी आप... मम्मी ने तो कुछ नहीं बताया मुझे, दोपहर में ही बात हुई थी उनसे।"

"उसके बाद ही तुम्हारे पापा का फोन आया था... उन्हें समझ नहीं आ रहा था कि मेंस में पास हो जाने की खुशी के क्षणों में वह ये दुखद खबर तुम्हें कैसे दें... दादी भी चाहती थीं कि तुम्हें डिस्टर्ब न किया जाए।" – कहते हुए आंटी ने उसे अपने सीने से लगा लिया। वह धीरे-धीरे सुबक रहा था। आंटी ने कहना जारी रखा – "अब तुमको दादी की इच्छा पर भी खरा उतरना है... पापा चाहते हैं कि तुम अपनी कोचिंग पर फोकस करो और इस दुख को अपनी राह में आड़े न आने देना।"

जब वह कुछ संयत हुआ तो उसने सांभवी को फोन लगाया – "छुटकी तुमने भी मुझसे दादी की बीमारी की बात छुपा कर रखी।" – कहते कहते वह रो दिया – "मैं दादी को देख भी नहीं सका।"

"भैया" – सांभवी इतना ही कह सकी और रोने लगी। माँ से बात करने की उसकी हिम्मत नहीं हुई।

उसे दो दिन लग गये सामान्य होने में। इस दौरान चित्रा ने उसे एक पल के लिए भी अकेला नहीं छोड़ा। जिस दिन दादी का दसवाँ था उस दिन सुबह-सुबह ही उसने मुंडन करा लिया। क्लास में सबको पता लग गया, सबने दादी की आत्मा की शांति हेतु प्रार्थना की और मौन रखा।

दादी की मौत ने उसे बहुत दुख पहुँचाया था, पर उसका निश्चय और दृढ़ हो गया था। उसे जीतना ही है... अपने लिये, दादी के लिए, पापा के लिये, चित्रा के लिये और देवांग के लिये भी। देवांग के लिए इसलिए भी ताकि भविष्य में कोई देवांग बनने कोटा न आए। जब अगले मंथली टेस्ट का परिणाम आया तो वह क्लास में सबसे आगे था, इतना आगे कि दूसरे स्थान पर आने वाली चित्रा उससे पूरे दो अंक पीछे थी। चित्रा से आगे निकलना उसे अच्छा तो नहीं लगा था पर चित्रा खुश थी। इसके बाद तो हर टेस्ट में पहले दो स्थान उन दोनों ने अपने लिए सुरक्षित कर लिए, कभी वह आगे

रहता तो कभी चित्रा।

जब आई.आई.टी. एडवांस का रिजल्ट आया तो दोनो ही प्रथम सौ बच्चों में स्थान बनाने में सफल रहे। वह खुश था और नहीं भी। वह सोच रहा था कि कुछ बनने के सफर में कितना कुछ छूट जाता है पीछे... न वह परिवार की खुशियों में सम्मिलित हो सका और न दुख के क्षणों में परिवार के साथ खड़ा हो सका। समय आगे चलता है तो बहुत सी चीजें पीछे छूटती जाती हैं। बहुत कुछ पीछे छूट गया है पर दूसरे नजरिये से देखें तो जिंदगी के सही मायने भी सीखे हैं, हार न मानने के, हर हाल में होंसला कायम रखने के, टूटने के क्षणों में स्वयं को सहेज कर रखने के और सबसे बड़ी बात लोगों का आचरण पहिचानने के व अपने लिए सही मित्र चुनने के। उसे चित्रा न मिली होती तो नंदन मेहरा उसका मानसिक शोषण करता रहता या फिर वह भी जतिन मिश्रा या भुवन काले की अनुकृति बन जाता या कोई खत्री अंकल उसे देवांग बना देते। सब कहते ही हैं यह उम्र होती ही है बहकने की, कोचिंग में तो केवल विषय-सिद्धि सिखाई जाती है, असली कोचिंग तो जिंदगी का सार समझने की है जिसे कोई सिखाता नहीं है स्वयं सीखना होता है।

वजूद

आरिफा सुनकर सन्न रह गई। उसे समझ में ही नहीं आया कि उसने ऐसा कौन सा गुनाह कर दिया कि उस्मान ने एकदम से पल्ला ही झाड़ लिया। तलाक देने के लिए सामान्य शिष्टता के पालन की जरूरत भी नहीं समझी उसने और फोन पर ही तीन बार तलाक, तलाक, तलाक कह कर फोन रख दिया।

रोते-रोते बुरा हाल था आरिफा का। अब्बू भी परेशान थे। एक साल हो गया था उस्मान को काम के सिलसिले में कुवैत गए हुए। उसकी अनुपस्थिति में ही आरिफा ने बेटी को जन्म दिया था जो दो दिन बाद ही सात माह की होने वाली थी। उस्मान ने तो बेटी का चेहरा भी नहीं देखा था। बेटी की पहली सालगिरह पर उसने बेगमगंज आने का वादा किया था। पूरा एक माह वह आरिफा और नीलू के साथ बिताने वाला था। आरिफा बहुत बेसब्री से उस्मान के आने का इंतजार कर रही थी। निकाह के बाद पहली बार उसे और उस्मान को एकसाथ इतने दिनों तक लगातार रहने का मौका मिलने वाला था। उस्मान भी आरिफा से मिलने को लेकर बहुत रोमांचित था। दोनों ने साथ-साथ आगरा, दिल्ली और अजमेर घूमने का प्रोग्राम भी बना रखा था। बहुत खुश थी आरिफा, फिर अचानक ऐसा कहर... विश्वास नहीं हो रहा था उसे, बुद्धि भी काम नहीं कर रही थी। उस्मान भी उससे हमेशा मिस करने की बात कहा करता था। फोन पर बात करते-करते दूर रहने की कसक से वह व्यथित हो जाता, उसका स्वर भीगने लगता था। स्काइप पर भी वह अक्सर फ्लाइंग किस से बातों की शुरुआत करता था। नीलू को लेकर भी जज्बाती हो जाता था। उसने उसके लिए ढेर सारे गिफ्ट भी खरीद कर रखे थे। बार्बी डॉल्स, बेबी स्टेला, बिट्टी डॉल्स, मेलिसा डग माइन की दर्जन भर से अधिक खूबसूरत गुड़ियाओं को यदाकदा दिखा कर वह नीलू को रिझाया भी करता था। इतनी सुखद स्मृतियाँ और फिर ऐसा तलाक... ऐसा तलाक तो उसने किस्से-कहानियों में भी नहीं पढ़ा था, एकाध बार अखबारों में

आधी-अधूरी खबर के रूप में जरूर उसकी नजरों से गुजरा था।

दो साल हुए थे उस्मान और आरिफा का निकाह हुए। दोनों का रिश्ता उनकी अम्मियों ने बचपन में ही तय कर दिया था। अम्मियाँ सगी बहिनें थीं। आरिफा के अब्बू बैंक में थे और रिटायर होने के बाद बेगमगंज में सेटल हो गए थे। उस्मान के अब्बू का रायसेन में आरा मशीन और लकड़ी का खानदानी बिजनेस था। बैंक में होने के कारण आरिफा के अब्बू का ट्रांसफर होता रहता था। जब वह आठवीं पास कर नौवीं में आई तो उसके अब्बू की पोस्टिंग भी भोपाल मेन ब्रांच में हो गई। इसके बाद उनका ट्रांसफर नहीं हुआ।

आरिफा शुरु से पढ़ाई के साथ ही हर काम में होशियार थी। अम्मी की तबियत अक्सर खराब रहती अतएव घर की सारी जिम्मेदारी भी वह बखूबी संभालती थी। उस्मान उससे तीन साल बड़ा था। बारहवीं पास करने के बाद जब वह भी रेफ्रीजेरेशन में आई.टी.आई. करने के लिए भोपाल आ गया तो दोनों की मुलाकातें होने लगीं। वह छुट्टियों में अक्सर खाला से मिलने के लिए आता रहता। आरिफा से भी यदा-कदा बात हो जाती लेकिन तब तक दोनों ही अपनी अम्मियों के बीच हुए समझौते से अनजान थे। माँ की बीमारी के कारण आरिफा को ही उस्मान के आने पर उसके लिए नाश्ते या फिर खाने की व्यवस्था करनी पड़ती थी।

आरिफा ग्यारहवीं में थी कि अम्मी बहुत बीमार पड़ गई। उन्हें अस्पताल में एडमिट करना पड़ा। बहुत सारे टेस्ट हुए, परिणाम में डॉक्टर ने टाटा में दिखाने को कहा। मुम्बई में इलाज चला। उन्हें आँतों का कैंसर निकला जो अंतिम स्टेज तक पहुँच गया था। वह बच नहीं सकीं। अब्बू टूट से गए। आरिफा ने ही सम्भाला उन्हें। लोगों ने अब्बू को दूसरी शादी की सलाह देनी शुरु कर दी। अब्बू नहीं माने। वह अम्मी से बेइंतहा मोहब्बत करते थे। अपनी जिंदगी में किसी और औरत की उपस्थिति के बारे में सोचना भी वह हराम समझते थे।

आरिफा उस साल इम्तहान नहीं दे सकी। उस्मान ने आई.टी.आई. करने के बाद पुणे में किसी कंपनी को ज्वाइन कर लिया था। आरिफा के अब्बू को आरिफा का पढ़ाई छोड़कर इस तरह घर के कामों में लगे रहना अच्छा नहीं लगता, वह इसके लिए स्वयं को कसूरवार समझते। घर की देखभाल के लिए उन्होंने गाँव से अपनी विधवा काकी को बुला लिया। आरिफा फिर से स्कूल

जाने लगी। 12वीं उसने अच्छे नंबरों से पास की। वह बी.बी.ए. के आखिरी साल में थी कि उसकी खाला का उस्मान से शादी के लिए संदेश आ गया। अब्बू को कोई ऐतराज नहीं था। उन्हें इस रिश्ते के बारे में पहले से ही पता था। आरिफा को भी उस्मान पसंद था। उस्मान भी आरिफा से प्रभावित था। आरिफा खूबसूरती के साथ-साथ बुद्धि और सेवा भावना की सच्ची प्रतिमूर्ति थी। केवल काकी को यह रिश्ता पसंद नहीं था। वह आरिफा का रिश्ता अपनी बेटी के लड़के फरहान से कराना चाहती थी जिसका बेगमगंज में ही डेरी और चिकन हेचरी का बड़ा कारोबार था। फरहान भी आरिफा को देखने के बाद उस पर फिदा था। वह उसे लेकर सपने बुनता रहता। काकी जबसे आरिफा के घर पर रहने आई थी फरहान का आना-जाना बढ़ गया था। वह आरिफा से बात करने का कोई न कोई बहाना ढूँढ़ता रहता। उसके इरादों से अनभिज्ञ आरिफा भी उससे हँस बोल लेती। अब्बू ने काकी को बता दिया था कि रुखसाना की इच्छा थी कि आरिफा का निकाह उस्मान से हो। अपनी मरहूम बेगम की इस इच्छा को पूरा करना उनका फर्ज है। अब्बू के इरादे की भनक लगने के बाद फरहान का आना-जाना कम हो गया था।

फायनल एग्जैम के कुछ दिनों बाद ही आरिफा और उस्मान का निकाह हो गया। बमुश्किल एक माह ही हुआ था कि उस्मान को उसकी कंपनी ने एक महत्वपूर्ण असाइनमेंट पर तीन सालों के लिए कुवैत भेज दिया। कुवैत जाने के आठ माह बाद उस्मान केवल एक बार पंद्रह दिनों के लिए घर आ सका था। तबसे सवा साल हो गया था आरिफा को उस्मान का इंतजार करते हुए। जैसे-जैसे उस्मान के आने की तारीख नजदीक आ रही थी, आरिफा हिरणी सी चपल होती जा रही थी। खुद को शीशे में देख कर बुरी तरह लजा जाती और दुपट्टे में अपना मुँह छुपा लेती।

दुपट्टे में अपना मुँह छुपाने का उपक्रम करते हुए आरिफा चौंक कर उठ बैठी। उसे लगा किसी ने तिमंजले से नीचे फेंक दिया है और उसका सारा वजूद टुकड़े-टुकड़े होकर बिखर गया है। उस पर जान छिड़कने वाला उस्मान इतना संगदिल हो सकता है, सपने में भी उसने कल्पना नहीं की थी। इस विषय में जब भी सोचती तो लगता कि उसके कानों ने सुनने में गलती की थी लेकिन दूसरे ही पल उस्मान की कर्कश आवाज गूँजने लगती और वह कानों पर हाथ रखकर काँपने लगती। उसे महसूस होता जैसे कोई कानों में

पिघला हुआ शीशा उड़ेल रहा है।

अब्बू ने कई बार फोन लगाकर उस्मान से बात करने की कोशिश की थी लेकिन एक बार भी उसने अब्बू का फोन अटेंड करने की जरूरत नहीं समझी। अब्बू भी जानते थे कि अब कुछ नहीं हो सकता लेकिन उस्मान ने ऐसा क्यूँ किया, आरिफा की हँसती-मुस्कराती जिंदगी को नर्क बना देने का कारण क्या है, यह जानना उनके लिए जरूरी था। उस्मान के अम्मी-अब्बू भी आहत थे। उन्हें भी कुछ समझ में नहीं आया था। उस्मान भी उनको इस विषय में कुछ बताने को तैयार नहीं था। खाला ने अनेक बार कुरेद-कुरेद कर उससे पूछने की कोशिश की थी लेकिन वह गोलमोल उत्तर देकर उनको टाल देता था। पता नहीं क्यूँ खाला को लग रहा था कि उस्मान तलाक देकर खुश नहीं है, अंदर ही अंदर बहुत दुखी है।

दो सप्ताह बीत गए थे। आरिफा ने भी खुद को संभाल लिया था। वह नीलू को पोलियो-ड्रॉप पिलाकर डॉक्टर के यहाँ से लौट रही थी कि घर के बाहर मुनीर टकरा गया। मुनीर उस्मान का पक्का दोस्त था। उसका भोपाल में फर्नीचर का शो रूम था। फर्नीचर के लिए लकड़ी वह उस्मान के अब्बू से ही लिया करता था। मुनीर को अचानक सामने देखकर आरिफा चौंक गई - "भाईजान, आप यहाँ"

"मैं आपसे ही मिलने आया हूँ... उस्मान ने मुझे कसम देकर भेजा है। वह आपसे माफी माँगना चाहता है लेकिन डरता है किस मुँह से माफी माँगे।"

"मुनीर भाई, अब क्या होगा माफी माँगने से... हमारे रास्ते तो उसने ही जुदा किए हैं। उसने तो मुझे कुछ कहने का मौका ही नहीं दिया और तलाक दे दिया। मुझे पता भी नहीं कि मेरी खता क्या है, किस बात को लेकर वह मुझसे इतना नाराज है।"

"गलतफहमी भाभी... गलतफहमी... गुस्सा आदमी को अंधा बना देता है। वह गुस्से में अंधा हो गया था... अब पछता रहा है।"

"किस बात का गुस्सा था, मैंने तो उससे कभी ऊँचे स्वर में बात नहीं की। उसे यदि मेरी किसी बात से तकलीफ पहुँची थी तो एक बार कहता तो मुझसे।"

"कैसे बताऊँ... पर बताना तो पड़ेगा। भाभी माफ करना मुझे, आपसे

ऐसी बात कहने की हिमाकत कर रहा हूँ। उस्मान फेसबुक और इंस्टाग्राम पर आपकी और मोहनीश की साथ-साथ तस्वीरें देखकर आपा खो बैठा था। उसे लगा था कि वह कुवैत में रहकर आपको दिन रात मिस करता है और आप यहाँ गैर मर्दों के साथ गुलछर्रे उड़ा रहीं है।"

मुनीर की बातें सुनकर आरिफा क्रोध से काँपने लगी - "छि:... कितनी घिनौनी सोच है उसकी, ये बात उसने आपको बताई लेकिन मुझे बताना उचित नहीं समझा। क्या यही है उसकी मोहब्बत? यही है उसका भरोसा। इतना भी नहीं जान सका मुझे। मुझ पर जरा भी यकीन नहीं था। मोहनीश के बारे में सब कुछ जानता है वह, कोई गलतफहमी थी तो एक बार पूछ तो लेता। मेरा भाई है मोहनीश... मैं राखी बाँधती हूँ उसे। तीन सालों बाद मोहनीश डसेलडर्फ से यहाँ आया था... रक्षाबंधन था तो गई थी राखी बाँध ने उसे... और क्या कहा आपने। मैंने फेसबुक और इंस्टाग्राम पर मोहनीश के साथ फोटो डाली हैं। सरासर झूठ है यह... मैं कई हफ्तों से फेसबुक पर गई ही नहीं और न ही मैंने कोई फोटो-वोटो पोस्ट की है। उन्हें ये सब बताने से कोई फायदा नहीं है फिर भी आप चाहें तो बता दीजिए उनको।"

"ये क्या कह रहीं हैं भाभी आप... मोहनीश के साथ सिटी मॉल में एंजॉय करते हुए आपकी कई तस्वीरें तो मैंने स्वयं देखी है।"

"भाईजान, मैं सिटी माल गई जरूर थी पर मैंने कोई फोटो वहाँ नहीं ली और न ही मोहनीश ने। मेरा और उसका रिश्ता गंगा और जमजम जैसा पाक है। मैं उसे राखी बाँधती हूँ और वह बड़ा होने के बावजूद मेरे पैर छूता है। मुझे दिखाओ कौन से फोटो देखे हैं आपने।"

"भाभी, अब नहीं दिख रहे हैं... उस्मान को इसी बात से तकलीफ हुई थी कि आपका सत्य सामने आ गया इसलिए आपने उन तस्वीरों को डिलीट कर दिया।"

"भाईजान, ये सब मनगढ़ंत बातें हैं। मैंने न कोई फोटो डाली और न ही डिलीट की। मोहनीश से मेरा रिश्ता बीस सालों का है जिसे सब जानते हैं... उस्मान के मन में कोई बात आई थी तो मुझसे पूछते, मैं क्लेरिफाई करती पर उन्हें तो मुझे कटघरे में खड़ा करना था, क्यों पूछते मुझसे।"

"आप सही कह रही हैं भाभी... उस्मान ने आपसे बात नहीं करके गलती की है। अब उसे अपनी गलती का एहसास हो गया है। काकी के

कहने पर फरहान ने उस्मान से बात की थी और उसे तफसील से हकीकत से रूबरू कराया था, तभी से बहुत परेशान है वह, अपनी बेजा बेवकूफी पर पछता रहा है।"

"मैं क्या कर सकती हूँ अब"

"आप एक बार उस्मान से बात कर लो। मेरी सलाह है, आप खुद बात न कीजिए बल्कि अब्बू से कहिए कि एक बार बात कर ले।"

"भाईजान, मैं सब कुछ भूल जाना चाहती हूँ। इस हादसे ने मेरी जिंदगी में तूफान ला दिया है, मैं उस हादसे से उबरने की कोशिश में हूँ। मैंने दिल से उस्मान को चाहा है पर उसने न मेरे बारे में सोचा और न ही अपनी बेटी के बारे में। मैं सब कुछ भूल जाना चाहती हूँ... बात नहीं कर पाऊँगी। अब्बू मुझे देखते हैं तो उनकी आँखें भर आती हैं। कैसे कहूँगी उनसे कि सब कुछ भूल कर उस्मान से बात कर ले।"

मुनीर चला गया पर आरिफा को नई उलझन में डाल गया। कौन सी तस्वीरें हैं जिनने उस्मान को इतना परेशान कर दिया कि वह तलाक देने को मजबूर हो गया। भोपाल की बैंक कालोनी में वह और मोहनीश अगल-बगल में रहते थे। दोनों के परिवारों में बहुत घरोवा था। अपनत्व इतना कि ईद, दीपावली और होली जैसे त्योहार दोनों परिवार मिलकर मनाते थे। किसी के घर में जब कोई पकवान बनता तो दोनों ही एक दूसरे के यहाँ भिजवाते। मोहनीश उस समय आठ साल का था और आरिफा चार साल की। रक्षाबंधन के दिन दोस्तों के हाथों पर रंग-बिरंगी राखियाँ बँधी देखकर मोहनीश बहुत उदास होता, सोचता, काश कोई उसे भी राखी बाँधता। ईद पर आरिफा को भी लगा करता काश उसके कोई भाई होता तो उसे भी ईदी मिलती। मोहनीश की माँ ने ही रक्षाबंधन के दिन आरिफा को बुलाकर मोहनीश को राखी बँध वाई थी तबसे यह रिश्ता साल-दर-साल और मजबूत व अटूट होता गया। मोहनीश इंजीनियरिंग करने के बाद एम.बी.ए. करने जर्मनी चला गया, फिर वहीं जॉब लग गई। बहुत सालों बाद इस बार मोहनीश रक्षाबंधन के अवसर पर भोपाल में था। उसने फोन किया तो आरिफा अब्बू के साथ राखी बाँधने भोपाल चली आई। वह दो दिन भोपाल में रुकी थी और मोहनीश के साथ उसने अपने और उस्मान के लिए बहुत सी खरीदारी भी की थी।

"पागलपन की भी हद है ये तो, जो हमारे अपने लोग हैं वही शक

करते हैं... भाई-बहिन के रिश्ते को भी कलंकित करने से बाज नहीं आते। उस्मान भी ऐसा ही निकला... तीन तलाक बोलने से पहले उसने रत्ती भर नहीं सोचा। मन में पनपे संदेह नहीं तो कम से कम नीलू की ही खातिर एक बार बात तो कर ही सकता था। मुझसे भी तो वह सबसे ज्यादा प्यार करने का दावा करता रहता था। क्या नाम दे उसके प्यार को, दिखावा, ढोंग या छलावा। बात करता तो मैं उसकी सारी गलतफहमियों को दूर करने की कोशिश करती... पर नहीं। फरहान... कौन है मेरा... दूर का रिश्तेदार है लेकिन उसने उस्मान के दिल का वहम दूर किया। उससे बात कर उस्मान का संदेह जाता रहा। क्या यह बात भरोसे लायक है? क्या सच में उस्मान अब बहुत शर्मिंदा है? होगा भी, तो अब माफी माँगने से क्या होगा? जीवन तो बेपटरी हो ही चुका है, वापस पटरी पर लाया नहीं जा सकता। मुझ पर कलंक लग ही गया, सारे नाते-रिश्तेदारों की नजर में कसूरवार बन गई हूँ। सब देखकर खुसुर-पुसुर शुरु कर देते हैं। अब क्यों बात करना चाहता है उस्मान? कुछ भी कर ले वह, हम दोनों अब एक नहीं हो सकते। मैं चाहूँ भी तो उसके पास नहीं जा सकती, दोबारा निकाह करना पड़ेगा उससे। दोबारा निकाह इतना आसान नहीं है... निकाह करने से पहले हलाला से गुजरना होगा। उफ्फ, कितना तकलीफदेह होगा यह सब। गलती उस्मान की और सजा मुझे। यदि उस्मान ने सही में मुझसे प्रेम किया है तो क्या वह महसूस कर पाएगा मेरी इस पीड़ा को, मुझे देख पाएगा किसी ओर की बाँहों में। मोहनीश के साथ तस्वीरें देखकर विचलित होने वाला उसका दिल मुझे किसी के साथ हमबिस्तर होते हुए बर्दास्त कर सकेगा" आरिफा जितना सोचती उतनी ही उसकी परेशानी बढ़ जाती। मन में घुटन होने लगती।

कुछ दिन बीत गए। एक दिन अचानक अब्बू के पास उस्मान का फोन आ गया। क्या बात हुई दोनों में, यह तो आरिफा को पता नहीं चला लेकिन उस्मान ने अब्बू की नाराजगी दूर कर दी है, वह इतना समझ गई थी। उस दिन आरिफा अब्बू के लिए चाय लेकर गई थी जब उन्होंने उससे उस्मान को माफ कर फिर से उसके पास लौट जाने को कहा। बाकी समझाने का काम काकी ने किया - "बेटी जिंदगी बहुत बड़ी है... अब्बू और मैं कब तक तुम्हारे साथ रहेंगे। अकेली औरत के सामने रोज नई मुसीबतें आती हैं, भेड़िए नोचने को घात लगाए बैठे रहते हैं। उस्मान तुमको बहुत प्यार करता

है... फिर से अपनाना चाहता है तो तुम्हें वापस जाना चाहिए उसके पास। रही हलाला की बात तो उसका भी कोई न कोई हल निकल ही आएगा, बस तुम राजी हो जाओ।"

आरिफा किसी निर्णय पर नहीं पहुँच पा रही थी। उसका मन उस्मान को माफ करने को कहता पर उस्मान तक वापस जाने की राह किसी और मर्द के बिस्तर से होकर जाती है, यह कल्पना करके ही वह सिहर उठती। शरीर में कंपन होने लगता, पर काकी की बातें भी सही है। अकेले कैसे काटेगी वह पहाड़ सी जिंदगी? परसों ही अखबार में पढ़ा था कि दिल्ली में अकेली रहने वाली एक महिला से घर में घुस कर किसी ने बलात्कार कर उसकी हत्या कर दी थी। किसी का साथ न हो तो कितना असुरक्षित हो जाता है जीवन। उसकी बेटी का क्या होगा? कैसे उसे सुखमय जिंदगी दे पाएगी वह? कैसे सुरक्षित रखेगी उसे सामाजिक भेड़ियों से?

अब्बू जब भी आरिफा को देखते उनकी आँखें छलक आती। वह बड़ी मुश्किल से अपने मनोभावों को नियंत्रित कर पाते। गम कब तक दिल में पलता रहता, एक दिन हार्ट अटैक के रूप में बाहर आ गया। आरिफा द्वारा हलाला की हामी ने उन्हें बचा लिया। काकी के प्रयास से फरहान उससे हलाला-निकाह करने और फिर तलाक देने के लिए तैयार हो गया। फरहान की बीवी इस रिश्ते के लिए तैयार नहीं थी। भला कौन सी खुद्दार औरत अपने शौहर को किसी और औरत के साथ शेयर करना चाहती, भले ही यह हलाला निकाह था पर था तो यातना देने वाला ही? लेकिन वह क्या कर सकती थी? उसके तो मायके में भी कोई नहीं था, कहाँ जाती गुहार लगाने, अतः खुदा की इच्छा मान कर चुप रह गई।

अब्बू ठीक होकर घर आ गए। उन्होंने उस्मान को भी बता दिया। उस्मान का फोन आरिफा के पास आ गया। बहुत रो रहा था अपनी नादानी पर। रोते हुए बार-बार आरिफा का शुक्रिया अदा कर रहा था, खुदा को धन्यवाद दे रहा था, जिंदगी में वापस आरिफा को भेजने के लिए।

कुछ दिनों बाद ही आरिफा और फरहान का निकाह हो गया। आरिफा फरहान के घर आ गई।

आरिफा के मन में फरहान की पहली बीवी आईना के लिए अपराध बोध था। वह माफी माँग कर उसे दिलासा देना चाहती थी। वह मन में

माफी मांगने के लिए शब्दों का तानाबाना बुन ही रही थी कि आईना ने ही अपने कमरे में बुला लिया।

"ऊपर जाओ, तुम्हें बार-बार भेजने का फरमान आ रहा है उनका... तुमसे मिलने को बेकरार हो रहे है।" - आईना ने आरिफा का हाथ चूमते हुए कहा। आरिफा भावुक हो उठी।

"आपा, आप कितने बड़े दिल वाली हैं। मुझे माफ कर दीजिए। किस्मत ने हमारे साथ बहुत बुरा मजाक किया है। आपकी कोई गलती नहीं है फिर भी आप यातना भोगने को विवश हैं। मैं जितनी जल्दी हो सकेगा यहाँ से चली जाऊँगी... मुझे भी ये सब करते हुए बहुत पीड़ा हो रही है।"

"तुम परेशान न हो बहिन... आज तुम्हारी जिंदगी का अहम दिन है। तुम खुशी-खुशी उनके पास जाओ। नीलम को मेरे पास छोड़ दो, मैं उसे संभाल लूँगी।"

आईना का दिल उसके नाम के अनुरूप ही साफ था। इतने बड़े गम को भी बड़ी आसानी से दिल की पर्तों में छुपा लिया था उसने। "पति को किसी के साथ शेयर करना क्या इतना आसान हो सकता है? आपा, आप महान हो... आपकी अपराधी हूँ मै।"... आरिफा के मन में द्वंद्व चल रहा था। उसकी इच्छा हो रही थी, आईना से गले लग कर रो ले - "बहुत बड़ी भूल हो गई है मुझसे, हलाला-निकाह के लिए फरहान के नाम को स्वीकृति देकर। इस काम के लिए कोई विधुर भी हो सकता था या कोई बुजुर्ग... कम से कम मेरे माथे पर किसी का पति छीनने का कलंक तो नहीं लगता। लेकिन ये फरहान को क्या हुआ, मुझसे मिलने के लिए इतना उतावला क्यों हो रहा है।"

"अब जाओ तुम, कपड़े ठीक कर लो... तुम्हारे लिए आज बहुत बड़ा दिन है, ऐसा मुँह बनाकर मत जाना उनके पास, क्या समझेंगे वह। बैठो यहाँ, तुम्हारे बाल सँवार देती हूँ... उन्हें रॉयल परफ्यूम बहुत पसंद है, कपड़ों पर उसे भी छिड़क लो थोड़ा सा।" - आईना की बातें सुन कर आरिफा की रुलाई छूट गई। वह आईना के गले लग कर कुछ देर तक सुबकती रही।

हिम्मत कर आरिफा आईना के कमरे से बाहर निकली और ऊपर जाने के लिए सीढ़ी पर पहला कदम रखा ही था कि आईना के सिसकने की आवाज सुनाई दी। आरिफा के दिल में हूक उठी - "कैसी किस्मत है मेरी.

.. अपने खंडित वजूद को समेटने के प्रयास में वह आईना का वजूद खंडित करने जा रही है।"

फरहान के कमरे में जाते हुए आरिफा का दिल बैठा जा रहा था। उसके लिए किया गया श्रृंगार उसे मुँह चिढ़ा रहा था – "पर अब कुछ भी सोचने का समय नहीं है, नियति सब कुछ निर्धारित कर चुकी है। अब मुझे केवल भाग्य की लिखी पटकथा अनुसार अपनी भूमिका निभानी है। आज की रात की ही तो बात है फिर सब कुछ ठीक हो जाएगा, पहले की तरह।" आरिफा मन को दिलासा देते हुए आगे बढ़ती जा रही थी।

"आओ आरिफा... जल्दी करो, कितनी देर कर दी... कबसे तुम्हारा इंतजार कर रहा हूँ।" – पलंग पर अधलेटे फरहान की लरजती हुई आवाज उसके कानों में पड़ी।

"जी" – खुद को सहज करते हुए आरिफा ने उत्तर दिया।

पलंग के पास पहुँचते ही फरहान ने उसका हाथ पकड़ कर अपने पास खींच लिया और उसके होंठों पर अपने होंठ रख दिए। आरिफा कसमसाई पर फरहान की बाहों का शिकंजा अजगर की तरह उसके चारों ओर कस चुका था। उसकी पकड़ से छूट पाना असंभव लगा उसे।

"थोड़ा रुकिए... मैं कुछ कहना चाहती हूँ।" – आरिफा ने हिम्मत करते हुए कहा।

"अभी नहीं जानू, जो कुछ कहना है, बाद में कहना। आज की रात तो कुछ कहने-सुनने की नहीं, करने की है। वर्षों की अधूरी मुराद है, पूरी करना है।" – आरिफा को फरहान के स्वर में हैवानियत ध्वनित होते प्रतीत हुई। एकाएक उसे समझ में नहीं आया कि फरहान कैसी बहकी-बहकी बातें कर रहा है।

"कैसी बातें कर रहे हैं आप? आप मेरे लिए किसी फरिश्ते से कम नहीं है। मेरी बरबाद हो चुकी जिंदगी को दोबारा गुलजार करने के लिए आप आगे आए हैं। मुझ बेबस की इतनी मदद कर रहे हैं आप।" – आरिफा ने सप्रयास स्वयं को फरहान की बाहों से मुक्त करने का उपक्रम करते हुए कहा।

"मैं कोई फरिश्ता-वरिश्ता नहीं जानू, मैं तो कबसे इस दिन के इंतजार में था कि कब तुम मेरी बाहों में होगी और मैं तुम्हारे जिस्म का मालिक बनूँगा।" – फरहान ने आरिफा पर बाहों का दवाब बनाते हुए कहा – "मैंने

जब तुम्हें पहली बार देखा था तभी से तुम्हें पाने की ठान ली थी लेकिन तुम्हारे अब्बू ने मेरा रिश्ता ठुकरा दिया और उस दो कौड़ी के उस्मान के साथ तुम्हारा निकाह करवा दिया। उसी दिन से तुम्हें पाने की मेरी ललक और बढ़ गई और फिर मैंने वह किया जो कोई सोच भी नहीं सकता।"

"ऐसा क्या किया आपने।" आरिफा बेबस मछली सी शिकारी के काँटे में फँसी छटपटा रही थी।

"जिस दिन तुम मोहनीश के साथ सिटी मॉल में घूम रही थी मैं भी वहाँ था। मैंने छुप कर तुम्हारे और मोहनीश के कुछ फोटो लिए, उन्हें फोटोशॉप की मदद से एडिट कराया, तुम्हारे नाम की फर्जी फेसबुक प्रोफाइल बनाई... इंस्टाग्राम पर भी प्रोफाइल बनाई, तुम्हारे कुछ दोस्तों के साथ ही उस्मान और मुनीर को फ्रेंड रिक्वेस्ट भेजी... कुछ ने तुरंत स्वीकार कर ली, उस्मान भी उनमें से एक था। विदेश में रहकर वह थोड़ा सयाना हो गया है। उसने पूछा था जानू, नई प्रोफाइल की क्या जरूरत आन पड़ी। मैंने उससे कहा - डियर ये, केवल खास लोगों के लिए है। फिर मैंने तुम्हारे और मोहनीश के कई फोटो डाले, उस्मान को उकसाने के लिए डियर और स्वीट जैसे संबोधन मोहनीश के लिए उपयोग किए, इसके बाद क्या हुआ तुम जानती ही हो। सॉरी स्वीटहार्ट... तुम्हें पाने के लिए इतना सब करना पड़ा। पर क्या करता? रिश्ता ठुकराए जाने से मैं बहुत अपमानित महसूस कर रहा था। मुझे यही तरीका सबसे ज्यादा कारगर लगा वापस तुम्हें पाने के लिए... मेरा प्लान काम कर गया।"

"तुम बहुत कमीने हो फरहान... फरिश्ते के खोल में शैतान हो तुम... अब नहीं बचोगे मुझसे, नहीं छोड़ूँगी तुझे... तूने मेरी जिंदगी तबाह की, उस्मान की हँसती-खेलती दुनिया में भी जहर घोला... आईना आपा को दुख दिया... तू इंसान कहलाने के भी काबिल नहीं, हैवान है तू हैवान" - कहते हुए आरिफा शक्ति की पर्याय नजर आने लगी। उसने पूरी ताकत लगा कर स्वयं को फरहान के हाथों से मुक्त किया और उछल कर उसके ऊपर जा बैठी। पलंग के सिरहाने पर रखे चाकू को उठाकर उसने फरहान पर ताबड़तोड़ वार कर उसे लहू-लुहान कर दिया। फरहान को अधमरा कर वह पलंग से उतरी किंतु लड़खड़ा कर गिर पड़ी और अचेत हो गई।

होश आया तो आरिफा ने स्वयं को पुलिस कस्टडी में अस्पताल में पाया।

आईना नीलम को गोद में लिए उसके होश में आने का इंतजार कर रही थी। बाहर अब्बू और उस्मान बेंच पर बैठे हुए थे। नर्स डॉक्टर को सूचना देने के लिए बाहर निकली तो उस्मान आरिफा से अपने गुनाह की क्षमा माँगने बदहवास सा अंदर की ओर लपका। जल्दबाजी में दरवाजे से ठोकर खाकर गिरते-गिरते बचा। आरिफा आईना का हाथ अपने हाथ में लेकर कह रही थी - "आपा, अब आप ही इसकी अम्मी हैं... इसे कभी पता मत चलने देना कि वह एक कातिल माँ की औलाद है, आप मानेंगी न इतनी बात।"

"आप ज्यादा बात मत कीजिए... आपको कुछ नहीं होगा, सिस्टर डॉक्टर को बुलाने गई है।" - आईना ने आरिफा के हाथ को सहलाते हुए कहा - "आप कातिल नहीं हैं, फरहान अभी जिंदा है... वह अभी मौत से जंग लड़ रहा है।"

"आपा, आप फरहान को छोड़कर मेरे पास... ।" आरिफा ने सजल नेत्रों से आईना की ओर देखा - "मैं अपने खंडित वजूद को जोड़ने निकली थी लेकिन अब तो मेरा वजूद ही नहीं रहा। बिना वजूद के जिंदगी कैसी... मैं नहीं बचूँगी आपा।"

दरवाजे पर खड़े-खड़े दोनों की बातें सुन रहे उस्मान की डूबती हुई आवाज आरिफा के कानों में पड़ी - "आरिफा... ..।"

आरिफा ने सिर घुमा कर उसकी ओर देखा और आँखें बंद कर लीं। अस्पताल के शांत वातावरण में उस्मान के सिसकने की आवाज बहुत देर तक गूँजती रही।

स्टेंट

बृजभूषण का पूरा परिवार चिंता-निमग्न था। कारण, डॉक्टर सुधाकर पंचोली ने तत्काल एंज्योप्लास्टी कराने की सलाह दी थी। डॉक्टर के कहे शब्द घरवालों के कानों में बज रहे थे - "पेशेंट की एक आर्टिरी में नब्बे पर्सेंट ब्लॉकेज है और दूसरी में सत्तर पर्सेंट, तत्काल एंज्योप्लास्टी करना जरूरी है। आप शीघ्र ही दो लाख रुपए जमा करा दे।"

नब्बे पर्सेंट ब्लॉकेज की बात सुनकर सभी सन्न रह गए थे। पत्नी शशिबाला तो जैसे अपनी सुध-बुध ही खो बैठी थीं। बेटी सुगंध डॉक्टर की सलाह के अनुसार तुरंत एंज्योप्लास्टी कराने की पक्ष में थी जबकि बेटा सुयश एंज्योप्लास्टी कराने से पहले किसी दूसरे विशेषज्ञ डॉक्टर की सलाह लेना चाहता था। वह सुगंध को समझाने की कोशिश कर रहा था - "सुबह तक पापा अच्छे भले थे। सीने में जरा सा भारीपन ही तो लगा था उन्हें कि हम दिखाने ले आए। अभी पापा की स्थिति स्थिर है और वह सबसे बात भी कर रहे हैं, दर्द भी बिल्कुल नहीं है। मैंने अपने दोस्त अखिल को बुलाया है उसके चाचा कस्तूरबा में डॉक्टर हैं। उसके साथ जाकर मैं उनसे मिलकर आता हूँ। पैसे भी निकालने हैं, इसके बाद क्या करना है निर्णय करेंगे।"

सुगंध भाई की बातों से सहमत नहीं हो रही थी। वह बार-बार एक ही बात दोहरा रही थी - "भैया हार्ट का मामला है, याद करो डॉक्टर ने क्या कहा था... जितनी जल्दी हो सके एंज्योप्लास्टी करना जरूरी है। यदि पापा को कुछ हो गया तो... नहीं... नहीं, हम रिस्क नहीं ले सकते। मेरी सहेली नैना के पापा को तो जरा सा दर्द हुआ था और वह अस्पताल तक भी नहीं पहुँच सके थे, रास्ते में ही उनकी मृत्यु हो गई थी। भाई आप क्यूँ टाइम खराब कर रहे हैं, रिपोर्ट देखकर अखिल भैया के चाचा भी यही सलाह देंगे। माँ को देखो कैसी विक्षुब्ध सी बैठी हैं, कुछ बोल ही नहीं रहीं है।"

इस बीच दो घंटे में नर्स तीन बार आकर पूछ चुकी थी - "क्या निर्णय किया... पैसे जल्दी जमा करा दीजिए" डॉक्टर ने भी कैथेटर निकाला नहीं

था, हाथ में टैपिंग करके उसे बाँध दिया था। उनका कहना था कि एक बार कैथेटर निकाल दिया तो फिर पैर की धमनी से दोबारा कैथेटर डालकर एंज्योप्लास्टी करनी होगी।

सुयश ने कुछ दिनों पूर्व ही व्हाट्सएप पर वायरल हुए हार्ट-सर्जरी से संबंधित एक वीडियो देखा था। उसे देखने के बाद वह आश्वस्त था कि पापा को कुछ नहीं होगा पर वह सुगंध को नहीं समझा पा रहा था शायद सुगंध समझना भी नहीं चाह रही थी। सुगंध ने भी उस वीडियो को देखा था लेकिन यह पापा का मामला था। वह भावनाओं के ऊपर अपने विवेक को तरजीह देना नहीं चाहती थी। उसके सामने ऐसी कोई दुविधा नहीं थी कि वह किस डॉक्टर पर विश्वास करे... वीडियो वाले या पापा का इलाज करने वाले। डॉक्टर तो ईश्वर का प्रतिरूप होता है। डॉ पंचोली ने पापा के सभी टेस्ट कर एंज्योप्लास्टी की सलाह दी है, उसे उन पर अविश्वास करने का कोई कारण नजर नहीं आ रहा था। उसने अपना निर्णय सुना दिया - "डॉ पंचोली ने जो कहा है उस पर सेकेंड थॉट की कोई गुंजाइश नहीं है।" सुयश ने ज्यादा प्रतिकार नहीं किया और दो लाख का चेक और अनुमति पत्र काउंटर पर जमा करा दिए। उसी दिन शाम को डॉक्टर पंचोली ने बृजभूषण की एंज्योप्लास्टी कर दी। बाद में उन्होंने सुयश को अपने चैंबर में बुला कर बताया कि विलंब हो जाने से दूसरी आर्टिरी में ब्लॉकेज अस्सी प्रतिशत हो गया था इसलिए दो स्टेंट लगाने पड़े। एक लाख रुपए के अतिरिक्त बिल का भुगतान सुयश को और करना पड़ा। एक सप्ताह अस्पताल में रखने के बाद बृजभूषण को छुट्टी दे दी गई। उन्हें नियमित रूप से चेक-अप कराते रहने की सलाह के साथ कुछ सावधानियाँ बरतने को भी कहा गया।

दो सप्ताह के विश्राम के बाद बृजभूषण ने ऑफिस जाना शुरू कर दिया। उनकी दिनचर्या भी थोड़े बदलाव के साथ पूर्ववत हो चली थी। डॉक्टर की सलाह अनुसार वह नियमित रूप से घूमने जाते, हल्का व्यायाम करते और समय पर दवाएँ लेते। शशिबाला के चेहरे पर भी रंगत लौट आई थी। सुगंध भी खुश दिखाई देती थी। पर सुयश न जाने क्यूँ खुद को संयत नहीं कर पाया था। बार-बार उसे वीडियो में बताई गई बातें कचोटती रहती थी कि किस तरह अनेक डॉक्टर आवश्यक न होने के बावजूद कमीशन के लिए कई-कई गैरजरूरी टेस्ट करा डालते हैं और मोटी फीस के लिए अनावश्यक

ऑपरेशन करने से भी नहीं झिझकते। जरूरी दवाइयों के साथ गैरजरूरी दवाईयाँ लिखना तो डॉक्टर्स की बड़ी कॉमन प्रैक्टिस है। वह मन को समझाने की कोशिश करता रहता – "जो हुआ सो हुआ, अब पापा स्वस्थ हैं, खुश हैं तो इस विषय में ज्यादा सोच-विचार क्या करना" एक दिन सुगंध ने उसे बताया कि "आज मैंने पापा को गुनगुनाते देखा है।" तो उसे विश्वास ही नहीं हुआ। ऑपरेशन के बाद धीर-गंभीर हो चुके पापा का फिर से अपने पुराने ह्युमरस अंदाज में लौटना, मन को असीम सुकून देने वाला था। सुयश ने अपने सिर से एक बोझ उतरता महसूस किया।

तीन माह के अंदर ही सब कुछ सामान्य हो चला था। बृजभूषण भी माह में एक-दो गोष्ठियों में भाग लेने जाने लगे थे। कुछ दिन बाद सभी लोग सिने पैलेस में बाजीराव मस्तानी भी देख आए थे। सुगंध को एम.बी.ए. के तीन हफ्ते के स्टडी टूर पर हैदराबाद जाना था पर वह पापा को छोड़ कर जाने की जरा भी इच्छुक नहीं थी। बृजभूषण ने ही उसे मनाया। सुयश भी अपनी एम.टेक. की पढ़ाई में पूरा ध्यान लगाने लगा था। शशिबाला भी कॉलोनी की किटी पार्टियों में सक्रिय हो गई थी। यानी कि जिंदगी पहले की तरह पटरियों पर लौट आई थी अपनी पूरी ठसक और रवानी के साथ।

बृजभूषण घूमने के बहुत शौकीन थे। हर साल पूरा परिवार गर्मियों अथवा सर्दियों की छुट्टियों में किसी न किसी हिल-स्टेशन या फिर किसी दर्शनीय स्थल पर घूमने अवश्य जाता था। बच्चों ने बीमारी में जिस तरह उनका ख्याल रखा था वह उन्हें अक्सर याद आता। वह चाहते थे कि इस बार भी कहीं बाहर जाकर कुछ समय बच्चों के साथ बिताया जाए। सुगंध के एग्जैम के बाद उन्होंने एक सप्ताह के लिए ऊंटी जाने का कार्यक्रम बना लिया। सुयश के प्रोजेक्ट का काम चल रहा था लेकिन वह भी इस अवसर को मिस करने के मूड में नहीं था। एक सप्ताह तक उसने दिन-रात एक कर अपने हिस्से का काम पूरा कर डाला।

छुट्टियों को सबने खूब एंजॉय किया। पायकारा लेक पर बच्चों की फरमाइस पर बृजभूषण ने अपना पसंदीदा मस्ती वाला गाना भी गाया – "समंदर में नहा कर और भी नमकीन हो गई हो / अभी आया है प्यार का मौसम और रंगीन हो गई हो" बेचारी शशिबाला, "अरे ये कौन सा गाना लेकर बैठ गए।", कहते हुए शर्म से लजाती रही। बच्चों ने इन अनूठे पलों

का वीडियो भी शूट किया। बोटैनिकल गॉर्डन, मुदुमलाई वाइल्ड-लाइफ सेंक्चुरी, कुन्नूर सभी स्थानों पर सबने खूब मस्ती की। सुयश और सुगंध, पापा को पुरानी रंगत में देखकर बहुत खुश थे। टूर से लौटते हुए सब तरोताजा थे और असीम ऊर्जा से भरे हुए थे।

दस दिन बाद ही परिवार को एक और शुभ सूचना मिली। बृजभूषण का प्रमोशन हो गया और उनको वहीं हेड ऑफिस में ही पदस्थ कर दिया गया। इस खुशी में उन्होंने एक छोटी सी पार्टी दी। सुयश और सुगंध के कुछ दोस्त भी पार्टी में शामिल हुए। डॉक्टर पंचोली को भी बुलाया था पर वह नहीं आए पर सुयश के दोस्त अखिल के साथ उसके अंकल डॉ नीरज अवस्थी अप्रत्याशित रूप से पार्टी में आ गए। पार्टी से जाते समय उन्होंने सुयश को बुलाकर कहा - "योर पापा इज रियल जीनियस एंड फुल ऑफ इनर्जी, ऐसे जिंदादिल इंसान को दिल की बीमारी कैसे हुई, आश्चर्य होता है। तुम अगले हफ्ते गुरुवार को उनकी रिपोर्ट लेकर हमारे क्लिनिक पर आ जाओ, मैं भी उनकी सारी रिपोर्ट देखना चाहता हूँ।"

सुयश नहीं चाहता था कि पापा या सुगंध को इस बारे में कुछ पता चले। पापा अपनी सामान्य जिंदगी जीने लगे हैं, उन्हें वह फिर से किसी तरह के तनाव में डालना नहीं चाहता था। सुगंध तो पता नहीं क्या-क्या सोचने लग जाएगी, पता चलने पर तो बिफर ही जाएगी।

सुयश ने अवसर पाते ही बृजभूषण की सभी रिपोर्ट्स निकाल कर अपने पास रख लीं। एक हफ्ता पलक झपकते गुजर गया। गुरुवार की शाम को सुयश रिपोर्ट दिखाने डॉक्टर नीरज अवस्थी के पास गया। बृजभूषण घर पर लौटे तो कोई नहीं था। सुगंध कोचिंग से नहीं आई थी और शशिबाला अपनी मासिक किटी पार्टी में गईं हुई थी। उन्होंने कपड़े बदले और सान्ध्यकालीन अखबार जो वह प्रतिदिन ऑफिस से लौटते हुए खरीद लेते थे, लेकर अपने कमरे में चले गए।

सुयश लौटा तो विचलित था और गुस्से से भरा हुआ भी। सुगंध उसे बाहर ही मिल गई। भाई को परेशान देखा तो बोली - "क्या हुआ भैया, प्रोजेक्ट में कोई समस्या आ गई क्या।"

"नहीं, डॉक्टर नीरज अवस्थी से मिलकर आ रहा हूँ। पापा की रिपोर्ट देखकर पता है उन्होंने क्या कहा।"

"क्या कहा" – सुगंध किसी आशंका से सुयश का मुँह ताकने लगी।

"उन्होंने कहा, पापा को कोई बड़ी समस्या नहीं थी... सब कुछ सामान्य था। नब्बे पर्सेंट ब्लॉकेज की बात झूठी थी। जितना ब्लॉकेज था वह एक माह की दवा से सब ठीक हो जाता, एंज्योप्लास्टी की आवश्यकता ही नहीं थी।"

सुयश की बातें सुनकर सुगंध को साँप सूँघ गया। उसे कुछ नहीं सूझा कि क्या बोले। वह हतप्रभ सी भाई को निहारे जा रही थी, हिम्मत कर बोली – "भैया, जो होना था सो हो गया, पापा मम्मी को पता नहीं चलना चाहिए।"

दोनों बाहर खड़े बात कर ही रहे थे कि शशिबाला भी आ गईं। दोनो को वहाँ देखा तो पूछा – "तुम लोग बाहर क्यूँ खड़े हो, क्या पापा नहीं आए अब तक।"

"पापा तो बहुत पहले ही आ गए थे। घर पर कोई नहीं था तो नींद लग गई है उन्हें, मैं दस मिनट पहले ही उनको चादर उड़ा कर आई हूँ।" – सुगंध ने कहा।

"आज बहुत देर हो गई आने में। सात बज गए, किटी पार्टी के बाद सविता के घर जाना पड़ा। अगले माह उनकी बेटी की शादी है। गहने और कपड़े खरीद कर लाई हैं तो वही दिखाने ले गईं थीं। सुगंध जाकर देखो, पापा जाग गए हों तो उनके लिए चाय बना दे।" – शशिबाला ने कहा।

"हाँ" कहते हुए सुगंध बृजभूषण को देखने कमरे में चली गई। वहाँ से उसकी चीख सुनाई दी – "भैया देखो, पापा को क्या हो गया है।"

सुयश और शशिबाला बदहवास से दौड़ते हुए उनके कमरे में पहुँचे, देखा बृजभूषण पलंग पर निस्तेज से लेटे हुए हैं, सिर तकिए से नीचे की ओर ढुलका हुआ है, सीने पर सान्ध्य कालीन पेपर रखा है। सुयश ने छूकर देखा, शरीर में कोई हलचल नहीं थी। नाड़ी भी बहुत धीमी चल रही थी।

सभी किसी अनहोनी की आशंका से काँप उठे। सुयश ने डॉक्टर नीरज अवस्थी को फोन किया। फिर पापा के सिर के नीचे ठीक से तकिया जमाया। पेपर को उठाकर एकतरफ रखना चाहा तो उसकी नजर एक हेडलाइन पर अटक गई – "पंचोली क्लिनिक पर छापा, अनेक गड़बड़ियाँ उजागर।" वह पेपर उठाकर पढ़ने लगा – "आज सुबह स्वास्थ्य विभाग और विजिलेंस की टीम ने संयुक्त रूप से पंचोली क्लिनिक पर छापा मारा। कुछ दिनों से क्लिनिक में अनियमितताओं की अनेक शिकायतें प्राप्त हुई थी। पिछले छह

माहों में क्लिनिक में हार्ट सर्जरी और एंज्योप्लास्टी करानेवाले मरीजों की संख्या आश्चर्यजनक रूप से चार गुना बढ़ गई थी। हृदयरोगियों की संख्या में अचानक हुई इस वृद्धि से स्वास्थ्य विभाग के अधिकारी सकते में थे। जाँच के दौरान रिकॉर्ड में भारी गड़बड़ियाँ मिलीं। स्टॉक में नकली और एक्सपायरी डेट के स्टेंट भी पकड़े गए। इन स्टेंट की डेट पिछले साल नवम्बर में ही समाप्त हो चुकी थी। पिछले सात माह से यही स्टेंट मरीजों को लगाए जा रहे थे... ।" खबर पढ़ते हुए सुयश को चक्कर आ गए, वह गिरते गिरते बचा। एक नजर उसने बृजभूषण के चेहरे पर डाली और रोते हुए उनके सीने को जोर जोर से दबाने लगा। सुगंध भी बिलखते हुए डॉक्टर नीरज अवस्थी को फोन लगाने लगी।

चरखारीवाली काकी

कुछ देर पहले ही मेरे साथ नई नवेली दुल्हन का गृह प्रवेश हुआ था और मुँह दिखाई तथा कुछ दूसरी रस्मों की तैयारियाँ हो रहीं थी। अम्मा कुर्सी पर बैठी तैयारियों को देख रहीं थी और कई बार चरखारीवाली काकी को याद कर चुकी थीं – "अभी तक चरखारीवाली नहीं आई... कहती थी आप तनकई चिंता न करो मैं सब संभाल लूँगी" तभी बाहर किसी की आवाज सुनाई दी... "चरखारीवाली नहीं रही।" अम्मा ने सुना तो पूजा की थाली उनके हाथों से गिरते-गिरते बची। मुझे तो जैसे साँप ही सूँघ गया। मैं दुल्हन के पास बैठा हुआ था। तुलसी बुआ ने मुझे दुल्हन के पास ही बैठे रहने का इशारा करते हुए कहा था – "बबुआ, अभी कहीं नहीं जाना है... कुछ नैंग दोनों को साथ में करना है" उसी समय मैंने मनोरमा मामी और शीला मौसी को तेजी से कमरे से बाहर जाते देखा।

मुझे एक-एक क्षण काटना भारी हो रहा था। मन पर काबू कर पाना मुश्किल होता जा रहा था। बगल में ब्याह कर लाई गई जीवन संगिनी बैठी थी और दूसरी तरफ अपने बच्चे सरीखा स्नेह देने वाली काकी के निधन की अविश्वसनीय खबर विह्वल कर रही थी। कर्तव्य की तराजू के दोनों पलड़े बराबरी पर आकर रुक गए थे, कोई भी पलड़ा ऊपर नीचे नहीं हो रहा था। मैं वहाँ बैठा जरूर था लेकिन चरखारीवाली काकी का सौम्य और ममतामयी चेहरा बार-बार आँखों के सामने आकर स्थिर हो जाता था। कल जब बरात लेके घर से निकले थे तब तक तो काकी अच्छी भली थीं। शादी में दौड़-दौड़ कर काम कर रहीं थीं, सारी जिम्मेदारी अपने ऊपर ले रखी थी। शादी से बीस दिन पहले अम्मा बाथरूम में गिर पड़ी थीं। कमर में अंदरूनी चोट आई थी। डॉक्टर ने कमर में पट्टा पहिनने और पूरा आराम करने की सलाह दी थी। अम्मा को उनने पलंग से उठने नहीं दिया था। कहती थीं –. "जब तलक मैं हूँ कोनऊ काम की चिंता करबे की जरूरत नाई है जीजी... आप तो बैठे-बैठे हुकुम देओ, सारो काम हो जैहे एकदम फस्ट कलास... डाग्डर ने आपको आराम करबे को कहो है सो पूरो आराम करो।"

"अरी चरखारीवाली, बहू आवेगी तो का कहेगी... हाय दैया, कैसी बीमारू सास पल्ले से बाँध दई... हम पलंग पे बैठे रहबी तो और बीमार

पड़ जैबी" - अम्मा ने एक बार कहते हुए पलंग से उठने की कोशिश की थी पर चरखारीवाली ने एक नहीं सुनी थी और साधिकार कहा था - "जीजी, आप पलंग पे बैठे-बैठे नजर रखो बस... काम में कौनऊ गड़बड़ी लगे तो टोक दइयो, पर उठबे की बिल्कुल न सोचियो, अपनी चरखारीवाली पे भरोसो नईं रह गओ का, बीमारी की हालत में आपको काम करने पड़े तो धिक्कार है हमें।"

इसके बाद तो चरखारीवाली काकी को फुरसत से दो पल भी बैठे नहीं देखा। शादी के लिए आम और आँवले का आचार डालने से लेकर उड़द, मूँग और साबूदाने के पापड़ भी उनने अकेले ही बनाए थे। आटा, दाल, चावल, शक्कर, मसाले आदि को भी करीने से साफ कर डिब्बों में भरकर जमाया था। इस सब के बीच समय निकाल कर वह अम्मा की कमर में दवा भी लगा देतीं। पता नहीं कहाँ से आती थी इतनी ऊर्जा उनमें।

वैसे तो चरखारीवाली काकी से हमारा कोई सीधा रिश्ता नहीं था पर अपनों से ज्यादा अपनापा था अम्मा और उनमें। उनका नाम क्या था, मुझे नहीं पता... कभी जानने की जरूरत भी नहीं महसूस हुई थी। जिसके मुँह से भी सुना उनको चरखारीवाली कहते ही सुना। सारे मोहल्ले के लोग उनको इसी नाम से पुकारते थे। बड़े लोग केवल चरखारीवाली कहते तो बच्चे चरखारीवाली चाची या काकी कहकर बुलाते। कुछ हम उम्र लोग चरखारीवाली भौजी कहकर संबोधित करते। यही पहिचान थी उनकी। इसमें अटपटा कुछ नहीं था। हमारे सिंहपुर में ब्याह कर आई अधिकांश महिलाओं के ऐसे ही नाम थे, पनागरवाली, बक्स्वाहावाली, मड़लावाली, ककरहटीवाली, गुनौरवाली, सटईवाली... । शादी के बाद हमारे गाँव में महिलाओं के ऐसे ही नाम हो जाते थे और उनके वास्तविक नाम वाली पहिचान गाँव की सीमा के भीतर कदम रखते ही छूट जाती थी। बस अम्मा को कोई उनके गाँव के नाम से नहीं पुकारता था शायद इसके पीछे अम्मा के गाँव का नाम छोटी-लौड़ी होना था, जिसका उच्चारण अधिकांश लोग छोटी-लोंडी करते थे। शुरु में मैं सोचता था कि अम्मा को कोई छोटी लौड़ीवाली कहकर क्यों नहीं बुलाता पर जैसे-जैसे बड़ा हुआ कारण स्वयं ही समझ में आ गया।

अम्मा के विवाह के तीन माह उपरांत ही चरखारीवाली काकी ब्याह कर सिंहपुर आई थी। बला की सुंदर लेकिन बहुत अभागी थी काकी। उनके

भाग्य में पति का सुख लिखा ही नहीं था। शादी के चौथे दिन ही पन्ना-घाटी में मोटरसाइकिल के स्लिप हो जाने से पति-परमेश्वर नहीं रहे। लोगों ने काकी को बहुत बुरा भला कहा। कुछ ने तो डायन तक की संज्ञा दे डाली थी पर अनपढ़ सास अपेक्षा के विपरीत उनके साथ मजबूती से खड़ी नजर आई। लोगों से कहा - "ईमें ऊ बेचारी को का दोष, ऊकी तो सारी दुनिया, सारो सुख चैन चलो गओ। सारो कसूर तो सुखपाल को है... लाख बार मना करो हतो कि दारू पीके मोटर साइकिल मती चलाया कर... पर ऊने कबहुँ न सुनी... सो, जो तो एक दिन होनई था, सो हो गओ। वो तो चलो गओ और चारई दिन में बहू की मांग सूनी कर गओ।"

खुशियों पर असमय लगे ग्रहण को काकी ने भाग्य का लिखा मान के संतोष कर लिया। उन्होंने सास के साथ ही सिंहपुर को भी पूरे अपनेपन से अपना लिया। अम्मा बताती हैं कि दामाद की मौत के बाद बाऊ जी चरखारीवाली को साथ ले जाने के लिए भी आए थे लेकिन बूढ़ी सास का मुँह देखकर उन्होंने जाने से मना कर दिया था। हमारे घर से दो घर छोड़कर ही उनका घर था। अम्मा को उनसे विशेष लगाव हो गया था, शायद अम्मा उनके इस तरह विधवा हो जाने से व्यथित थीं और उनको अपनापन देकर उनका दुख कम करना चाहती थीं। पर काकी ने कभी समय की मार के आगे घुटने नहीं टेके। उन्होंने जिंदगी को बोझ नहीं माना, उसे ढोया नहीं बल्कि उसे जीती रहीं बड़ी शिद्दत से, हौसले से और असीम संतोष भाव से। बड़े से बड़ा दुख उनके आँगन में पैर पसार कर नहीं बैठ पाया। वह दूसरों की खुशियों में अपनी खुशी तलाश कर जिंदगी में रंगों की कमी को पूरा करती रहीं। सारे मोहल्ले में किसी के यहाँ कोई औसर हो, उनकी उपस्थिति अनिवार्य होती चली गई, वह आगे-आगे रहतीं और निःस्वार्थ भाव से काम करतीं।

मुझसे विशेष स्नेह था उनको। अम्मा बताती हैं, मेरा जन्म ऑपरेशन से हुआ था। घर में कोई नहीं था जो अम्मा की देखभाल कर सकता। तुलसी बुआ को बुलावा भेजा था किंतु वह नहीं आ सकी थी। ऐसे कठिन समय में काकी पाँच दिनों तक न केवल अम्मा के साथ अस्पताल में रहीं थी अपितु घर आने के बाद भी उनकी सेवा-सुश्रूषा करती रहीं थी। मुझे पालने में भी उनका बहुत योगदान था। मेरी लोई-मालिश तो शायद ही अम्मा ने

कभी की होगी। यह काम काकी के ही जिम्मे था। मैं बड़ा हुआ तो काकी अक्सर अपने घर ले आती। मैं नखरे करता और वह खुशी-खुशी मेरे सारे नखरे सहन करती और खुश होती। उनके साथ समय बिताना मुझे भी अच्छा लगता। वह तरह-तरह के व्यंजन बनाकर अपने हाथों से खिलाती और मेरे साथ बच्चा बनकर खूब धमाल मचातीं।

आठवीं तक की पढ़ाई मैंने सिंहपुर में ही रहकर की। बाद की पढ़ाई के लिए मुझे पन्ना जाना पड़ा। वहाँ होस्टल की सुविधा तो थी नहीं अतएव छत्रसाल कॉलोनी में एक कमरा लेकर रहता। खाने के लिए बिंदिया टिफिन सेंटर से टिफिन आता। कई बार इतना बेस्वाद खाना मिलता कि पहला कौर मुँह में रखते ही खाने की इच्छा मर जाती। बस स्टैंड जाकर समोसे खाकर आ जाता। बीच-बीच में अम्मा देखने आती रहतीं। साथ में नाश्ता बनाकर ले आतीं। काकी भी हर बार मेरी पसंद के बेसन के लड्डू और बरफी बना कर उनके साथ भेजतीं। जब तक अम्मा रहतीं अपनी मौज रहती। दोनों टाइम मनपसंद खाने को मिलता।

मैं जब इंजीनियरिंग करने इंदौर जा रहा था तो काकी, अम्मा से ज्यादा दुखी नजर आ रही थी। मैं थर्ड ईयर में था जब काकी की सास गुजर गई और काकी नितांत अकेली हो गई। मुझे इंजीनियरिंग करते ही गुड़गांव की एक एम.एन.सी. में जॉब मिल गया। दो साल पहले जब मैं अचानक बीमार पड़ गया था तो अम्मा और काकी कुछ दिन मेरे साथ गुड़गांव में रही थीं। बाबू जी चुनाव में ड्यूटी के चलते मुझे देखने भी नहीं आ सके थे। अम्मा के जाने के बाद काकी मेरा ख्याल रखने के लिए रुक गई थीं। अम्मा बाबू जी को ज्यादा समय के लिए अकेला नहीं छोड़ सकती थी। सुगर और ब्लड प्रेशर के मरीज जो थे। जब तक काकी साथ में रहीं मेरी भूख बढ़ गई और तीन किलो वजन भी... पचपन किलो से सीधा अट्ठावन का हो गया।

मेरी शादी को लेकर बहुत उत्साहित थीं काकी। सगाई के बाद एक बार उनने मुझसे पूछा था - "रागिनी से बात होवत है तेरी।"

मैं संकोचवश उत्तर नहीं दे सका था तो उनने ही कहा था - "बात किया कर उससे... एक दूसरे को अच्छी तरह से जानवे के लाने जरूरी है बातें करना... तेरे पास नंबर नहीं है तो मैं देती हूँ तेरे को।"

उनकी बात सुनकर बहुत आश्चर्य हुआ था कि रागिनी का नंबर उनके

पास है। बाद में पता चला कि रागिनी के छोटे भाई से, जो सगाई में सिंहपुर आया था, नंबर लिया था उनने।

काकी की बात सुनकर मन में उनके प्रति स्नेह और आदर का भाव दोगुना हो गया। इस पिछड़े और दकियानूसी गाँव में लगभग अनपढ़ काकी की सोच इतनी प्रगतिवादी हो सकती है, एकाएक विश्वास नहीं हुआ था। बहुत देर तक उनके चेहरे को देखते हुए अनुमान लगाने का प्रयास करता रहा था। गाँव की पढ़ी-लिखी औरतों को देखता हूँ तो उनकी दकियानूसी सोच के दर्जनों किस्से आँखों में तैरने लगते हैं। ज्यादा दूर क्यों जाएँ, हमारे सगे संबंधियों और रिश्तेदारों में भी ओछी मानसिकता रखने वालों की कमी नहीं है। कल की ही बात है। बरात की निकासी के लिए मैं दूल्हे के वेश में दरवाजे पर खड़ा हुआ था। अम्मा ने मुझे तिलक लगा के थाली काकी की ओर बढ़ाई ही थी कि मनोरमा मामी की आवाज सुनाई दी थी - "लल्ली, अंधेर मत करो, विधवा से तिलक करा कर अपशगुन को न्योता क्यों दे रही हो।"

"मीरा जीजी, आप तो समझदार हो, मन्नो भौजी सही कह रही है।" - यह शीला मौसी की आवाज थी।

काकी के बढ़े हुए हाथ और कदम रुक गए। वह बिना तिलक किए साड़ी से आँखें पोंछती हुई तेजी से सामने से हट गईं। मुझे मनोरमा मामी और शीला मौसी पर गुस्सा तो बहुत आया, लेकिन समय की नजाकत समझते हुए चुप रहा आया।

रागिनी के बगल में बैठा-बैठा मैं बहुत असहाय महसूस कर रहा था। मेरे मन में बहुत से विचार और मस्तिष्क में बहुत से चित्र एक साथ आ-जा रहे थे। "चरखारीवाली नहीं रही" की सूचना अम्मा के लिए भी किसी सदमे से कम नहीं थी। वह अजीब उलझन में फँसी प्रतीत हो रहीं थी... नई बहू के आगमन की खुशियाँ मनाएँ या काकी के हृदय-विदारक निधन का मातम। वह शांत दिखने की कोशिश जरूर कर रहीं थी लेकिन उनकी आँखों की कोरों से झाँक रहे अश्रुकण उनकी इस जबरिया कोशिश की चुगली कर रहे थे। मेरे भीतर का ज्वार भी थमने का नाम नहीं ले रहा था। मैंने ही मन को कड़ा कर अम्मा से कहा - "काकी को लेकर मन बहुत व्यथित है... क्या हम आज की रस्में कल नहीं कर सकते?।"

अम्मा ने एक नजर रागिनी पर डाली, रागिनी बोली तो कुछ नहीं लेकिन नजरों में ही अम्मा से न जाने क्या कह दिया कि अम्मा ने घोषणा कर दी – "अब शेष रस्में परसों होंगी।"

मैंने रागिनी का हाथ दबाते हुए सॉरी बोला और उठ खड़ा हुआ। काकी के पड़ोस में रहने वाले रामनिहोर काका और तीन-चार लोग बाहर ही चबूतरे पर बैठे थे। मुझे देखते ही बोले – "बिटुआ, तुमको अभी यहाँ नहीं आना था... तुम अभी-अभी दुल्हन को लेके आए हो, तुम्हें उसके पास होना चाहिए।

"पर ये हुआ कैसे" – मैने काका की बात को अनसुना करते हुए पूछा।

"हरि इच्छा बिटुआ... तुम्हारी शादी को लेकर बहुत खुश थी, शायद खुशी सहन नहीं हो सकी, पूजा करते-करते उसी स्थिति में प्राण त्याग दिए।"

पास ही बैठी पवई वाली काकी ने कहा – "चरखारीवाली अभागन जरूर थी लेकिन थी बहुत पुण्यात्मा... ऐसी मौत भागवालों को ही मिले है। बिटुआ तुमारी बरात जावे के बाद से ही कमरे में बंद थी... बार-बार यही कहे जा रही थी... हम अभागे हैं पर हम अपुन के दुर्भाग की छाया हमार बिटुआ पे न पड़न देवी... जैसई बरात आवे की खबर उन्हें लगी वैसी ही उनने प्रान त्याग दए... मैं तो इतई बैठी हती जब कमरे से उनकी आवाज आवो बंद हो गई हती।"

पवई वाली काकी की बात सुनकर मनोरमा मामी और शीला मौसी के चेहरे सामने आ गए। मुझे विश्वास हो गया कि उनकी जली-कटी बातों से व्यथित होकर ही काकी ने खुद को कमरे में बंद कर लिया होगा और मेरी भलाई की कामना लेकर भगवत पूजा में लीन हो गई होंगी। मैं काँपते पैरों से काकी के कमरे में घुसा। उन्हें देखते ही पैरों के नीचे से जमीन खिसक गई और रुलाई छूट गई। वह लाल सिल्क की साड़ी पहिने दीवार के सहारे हाथ जोड़कर बैठी थीं। सामने भोलेनाथ की मूर्ति और पूजा का सामान रखा था।

दिल में एक हूक सी उठी और मेरी आँखों से आँसुओं की जलधारा बह निकली। आँसुओं पर कोई नियंत्रण नहीं रह गया था अब... वे बहे जा रहे थे जैसे किसी बराज का गेट खुल गया हो। आँसुओं के बीच ही मेरी आँखों के सामने वह चित्र साकार हो गया जब मैं सगाई के बाद वापस गुडगांव जा रहा था और काकी से मिलने गया था। मेरे सिर पर हाथ फेरते हुए बोली थीं – "तेरी शादी के बाद जे सफेद धोती फिर कभी न पहिनबी... तू जो

साड़ी लाकर देगा वोई पहिन के लाडो का मोंचायना करहों"

बहू का मोंचायना... उनके ये शब्द मेरे कानों में हथोड़े जैसा आघात कर रहे थे। मुझे पता ही नहीं चला कि कब अम्मा मेरे पीछे आकर खड़ी हो गईं। कंधे पर उनके हाथ के स्पर्श से ही मैं उनकी उपस्थिति को जान सका। मुड़कर देखा तो रागिनी उनको सहारा देते हुए उनके साथ खड़ी थी। माँ के इशारे पर जैसे ही मैं और रागिनी काकी के पैर छूने झुके, काकी के हाथ में दबे फूल की पत्तियाँ रागिनी के सिर पर आ गिरीं। दरवाजे के बाहर खड़ी मनोरमा मामी और शीला मौसी दहाड़ मार कर रो पड़ीं।

बादशाह सलामत की मोहब्बत झूठी है

रात का तीसरा पहर उतर आया था।

यह एक ऐसी उजली रात थी जिसके कालेपन की दूसरी मिसाल इतिहास

में नहीं मिलती। सुदूर आसमान में टँगा पूर्णिमा का चाँद भी मुँह छुपाने के लिए बदलियों की ओट तलाशता फिर रहा था। यमुना के जल पर तैर रही चाँदनी इंसानियत के मुँह पर पुती हुई कालिख की मानिंद दिखाई दे रही थी।

यमुना किनारे बसी उन बस्तियों में किसी की भी आँख में नींद नहीं थी। चारों ओर से कराहने, चीखने और रोने की आवाजें आ रहीं थी। हर कोई भीतर ही भीतर अधीर, आशंकित और व्यथित था। छः साल की शबनूर सुलेमान के बगल में बैठी अपनी सूनी-सूनी आँखो से अब्बू का दर्द से सना चेहरा पढ़ने की कोशिश कर रही थी। रोज अब्बू की गोदी में सिर रख कर सोने वाली शबनूर आज अब्बू का सिर अपनी गोदी में रखे थी और बीच-बीच में अपनी छोटी-छोटी उँगलियों से सुलेमान की दाढ़ी के उलझे बालों को सुलझाने लगती थी। कुछ देर पहले ही हकीम साब का मुलाजिम सुलेमान के हाथ की मल्हम-पट्टी करने के बाद दर्द से राहत का काढ़ा पिला कर गया था लेकिन कुछ ही समय बाद बाँधी गई पट्टियों के ऊपर खून की लालिमा उभर आई थी। सुलेमान आँख बंद कर लेटा हुआ था और बीच-बीच में दर्द की चुभन बढ़ने पर कराहने लगता था। जब भी सुलेमान कराहता, शबनूर भी काँप उठती और अब्बू का हाथ अपने हाथों में लेकर सहलाने लगती।

शबनूर समझने में असमर्थ थी कि बादशाह सलामत ने उसके अब्बू को उनकी नायाब फनकारी का ऐसा इनाम क्यों दिया है। इस दर्दनाक रात से पहले वाली रात को कारीगरों और कलाकारों की भरी-पूरी बस्ती में कितनी रौनक और रंगीनी थी, ईद जैसा त्योहारी माहौल था। बेगम की याद में बनवाए गए बेमिसाल मकबरे के पूरा होने की खुशी में बादशाह सलामत ने यह खास आयोजन रखवाया था। उनके आदेश पर दरबारी गायकों शेख बहाउद्दीन और लाल खान के शागिर्दों ने बस्ती में महफिल सजाई थी और अपनी खयाल और ध्रुपद गायकी से शमाँ बाँध दिया था। बच्चों ने भी सारी रात ढोलक और सकाराह की धुनों पर नाचते-गाते बिताई थी। राजपुताने से आए भाटों द्वारा प्रस्तुत कठपुलियों का खेल भी सबको खूब भाया था। भोजन का तो कहना ही क्या था। बीस हजार माहिरों, कारीगरों और मजदूरों के लिए शाही रसोई में बनने वाले तमाम तरह के लजीज व्यंजन परोसे गए थे।

याखिनी, हलीम, फालूदा और शीर कोरमा जैसे व्यंजन तो अधिकांश लोगों ने पहली बार चखे थे। बादामी फिर्नी तो शबनूर को इतनी पसंद आई थी कि वह बार-बार अम्मी से इसके स्वाद का जिक्र उस रात करती रही थी।

सुलेमान ने पानी माँगा तो उसका सिर ऊपर उठाते समय हाथ लटक कर जमीन से टकरा गया। दर्द का गुबार सा उठा और उसके मुँह से रूह को कँपा देने वाली चीख निकल गई। शबनूर भी सिहर उठी जैसे उसे भी उतना ही दर्द हुआ हो। वह सुलेमान का हाथ अपने हाथों में लेकर सहलाते हुए पूछ बैठी - "अब्बू, रात में इतना लजीज खाना खिला कर सुबह-सुबह बादशाह सलामत ने सबके हाथ क्यों कटवा दिए... क्यों किया उन्होंने ऐसा।"

शबनूर का प्रश्न सुनकर रेहाना और सुलेमान दोनों ही भौचक रह। क्या जवाब दें उस मासूम को, दोनों को ही कोई माकूल उत्तर नहीं सूझा। चुप ही रहे।

"नूर बेटा, सो जाओ आप... रात बहुत हो गई है... कल भी आप नहीं सोई थीं... आपके अब्बू के पास मैं बैठती हूँ।" - रेहाना ने उसका ध्यान बँटाने के लिए कहा।

"नहीं अम्मी... मुझे नींद नहीं आ रही है... अब्बू को इस हाल में छोड़कर मैं कैसे सो सकती हूँ।"

शबनूर की बात सुनकर सुलेमान की कोरों में पानी झिलमिलाने लगा था। उसे याद हो आई चौदह साल पहले की घटना, जब उस्ताद इशा शिराजी, पर्सियन हुनरमंदों को लेने इस्फाहान आए थे और उन्होंने हिंदुस्तान चलकर निर्माण कार्यों में हाथ बँटाने का प्रस्ताव दिया था। बदले में हर सुख सुविधा का ध्यान रखने और बेशुमार धन दौलत पाने के ख्वाब दिखाए थे। उस समय बादशाह सलामत अपनी मरहूम बेगम के लिए यमुना किनारे मोहब्बत की ऐसी नायाब इमारत बनवा रहे थे जो सदियों तक उनकी बेपनाह मोहब्बत की गवाह बन कर खड़ी रहे। इस शानदार इमारत का नक्शा उनके ही हमवतन अहमद लहौरी ने बनाया था। लहौरी तब अपने साथ खोरासान, कंदाहार, तबरिज और तेहरान से सैकड़ों कारीगरों, दस्तकारों, पत्थरों को तराशने वाले और नक्काशी करने वाले कारिंदों को साथ ले गए थे। काम की अधिकता के कारण इशा शिराजी को और अधिक कारीगरों को लाने भेजा गया था।

कुछ समय पहले ही रेहाना और सुलेमान का निकाह हुआ था। रेहाना के कहने पर ही सुलेमान ने हिन्दुस्तान आने के लिए रजामंदी दी थी। सुलेमान को पत्थरों पर महीन नक्काशी करने में महारत हासिल थी अतएव उसे और

लोगों से ज्यादा मेहनताना देने का वादा कर राजी किया गया था। सुलेमान अपने अब्बू और चचाजात भाईयों करीम और शमीम के साथ आया था। उसके दोनों भाई नक्काशी के काम में उसकी मदद करते थे।

उन सबने पर्सिया, पख्तून, तुर्की और उज्बेकिस्तान से आए सैकड़ों कारीगरों तथा कलाकारों के साथ ही हजारों स्थानीय मजदूरों और हुनरमंदों के साथ बड़ी मेहनत और लगन के साथ अपने काम को अंजाम दिया था। इसी का नतीजा था कि दुनिया को मोहब्बत की पाकीजगी से रूबरू कराने वाला एक बेमिसाल स्मारक यमुना के किनारे खड़ा हो गया था। इस स्मारक की मीनारों और मेहराबों पर नक्काशी का काम सुलेमान और उसके भाईयों द्वारा ही किया गया था।

सुलेमान को याद हो आया वह दिन जब बादशाह सलामत स्वयं काम का जायजा लेने तशरीफ लाए थे। उस दिन भी पूनम की रात थी। रेहाना ने शादी के सात साल बाद बेटी को जन्म दिया था। घर में खुशी का माहौल था कि बादशाह सलामत का तुरंत मिलने का संदेश आया। बादशाह उसके द्वारा बनाए गए मेहराब के पास खड़े थे। इशा शिराजी ने उसे पास बुलाकर बादशाह से कहा था – "जहाँपनाह, यही वह कारीगर है जिसके हुनर का कमाल आप देख रहे है।"

"सुभान अल्लाह" – बादशाह के मुँह से निकला था और उन्होंने अपनी तर्जनी से हीरे की अँगूठी उतार कर उसे इनाम स्वरूप दी थी।

इनाम पाकर अचंभित रह गया था सुलेमान। बादशाह सलामत ने उसकी कला को सराहा था और एक अदने से कारीगर को अपने हाथों की अँगूठी अता फरमाई थी। उसे विश्वास नहीं हो रहा था कि उसकी उँगलियों में ऐसा करिश्मा है जिसे दुनिया सदियों तक अचरज से निहारेगी। अगले दिन बस्ती में बादशाह सलामत द्वारा सुलेमान को बख्शीश दिए जाने की चर्चा होती रही। सुलेमान ने उस रात को ताउम्र अपनी जिंदगी का यादगार हिस्सा बनाने के लिये बेटी का नाम ही शबनूर रख दिया था।

पुरानी यादों में गोता लगाते हुए सुलेमान ने सिर घुमाकर पट्टियों में लिपटी बिना उँगलियों वाली अपनी हथेलियों को देखा – "किस्मत का करम देखिए... बादशाह की दी हुई जिस अँगूठी को उसने यह सोचकर संभाल कर रख दिया था कि जब काम पूरा करके वतन लौटेगा तब शान से अपनी अनामा उँगली में धारण करेगा" अब क्या करेगा उस अँगूठी का? अब तो हाथों में उँगलियाँ ही नहीं हैं। सोचकर सुलेमान को अपने कलेजे में कुछ

फँसता प्रतीत हुआ और उसकी आँखें पनीली हो उठीं। मुँह फेर कर वह पुनः यादों की खोह में उतर गया।

बादशाह से बख्शीश पाने के बाद तो सुलेमान और भी संजीदगी से अपने काम को अंजाम देने लगा। शबनूर ने उसके जीवन में आकर खुशियों की अनमोल सौगात दी थी। वह अपने परिवार और अजीजों के साथ खुश था। लेकिन खुशियाँ भी स्थाई नहीं होती, गमों को साथ लेकर आती हैं। लगातार अथक परिश्रम करने और पत्थरों की कटाई-घिसाई के दौरान हवा में घुलते बारीक कणों की चपेट में आने से शमीम ने जो बिस्तर पकड़ा तो फिर जनाजे के साथ ही घर से बाहर निकल सका। पिछले आठ सालों में उसने कितनी ही असमय मौतें देखीं थी, लेकिन किसी अपने को खोने का दुख उसने पहली बार महसूस किया था। पत्थरों को सुदूर राजपुताने से लाने और उनको चढ़ाने-उतारने में कितने ही मजदूर दब कर अपनी जान गवाँ चुके थे। कुछ लोगों की मौत तो सामान ढोने वाले हाथियों के पैरों तले आ जाने से हुई थी। लोग मर जाते, साथ काम करने वाले कामगार अफसोस जता कर फिर काम में जुट जाते। कहीं कुछ नहीं बदलता, यमुना के उस पार मजहब के हिसाब से या तो उनको दफना दिया जाता या फिर जला दिया जाता। दो-तीन पहर की मायूसी के बाद सब पहले जैसा हो जाता और भूल जाते कि मरहूम बेगम को दफनाने के लिए बनाई जा रही इस भव्य इमारत के नीचे उनके कितने ही अपने दफन हो चुके हैं जिनका कभी, कहीं कोई जिक्र नहीं होगा।

शमीम की मौत को चालीस दिन भी नहीं हुए थे कि अब्बू साथ छोड़ गए। पत्थरों को ऊपर चढ़ाने के लिए ढलान बनाते समय वह संभल नहीं पाए और नीचे आ गिरे थे। सिर में गहरी चोट लगी और दो दिनों तक मौत से लड़ते हुए चल बसे। अब्बू की मौत के बाद तो सुलेमान टूट सा गया था और वापस जाने की सोचने लगा था। कई दिनों तक वह काम पर भी नहीं गया तो एक दिन काम की निगरानी करने वाले नाजिर ने उसे बुलवा कर धमकाया था - "कल से काम पर वापस आ जाना वरना हक्काम की अदालत में पेश होने को तैयार रहो... तुम्हारी वजह से काम में देर हो रही है।"

अदालत का नाम सुनकर दहल गया था सुलेमान। जानता था कि क्या फैसला दिया जाएगा। कुछ दिन पहले ही अल्ताफ और फजल को उम्र भर के लिए कैदखाने में डालने से पूर्व कोड़े मारते हुए पूरी बस्ती में घुमाया गया था। दोनों रहम की मिन्नतें करते हुए दर्द से बिलबिला रहे थे पर उन

दरिंदों का दिल जरा भी नहीं पसीजा था। दोनों का बस इतना कसूर था कि वे अपनी बीमार अम्मी को देखने एक हफ्ते की छुट्टी लेकर फिरोजाबाद गए थे और दस दिन की देरी से वापस लौटे थे। जब तब दोनों को दी गई यातना के दृश्य सुलेमान की नजरों के सामने उपस्थित हो जाते और वह सोचने लगता... बादशाह तो इतने रहम दिल हैं लेकिन उनके कारिंदे साक्षात जल्लाद हैं जल्लाद।

नाजिर की धमकी के बाद सुलेमान ने वापस लौटने का ख्याल दिल से निकाल दिया और अपने काम में फिर से लग गया। उसकी इच्छा थी कि जितनी जल्दी हो सके काम पूरा हो और वह अपने मुल्क वापस लौट सके।

आखिर वह दिन भी आ गया जब वर्षों की मेहनत के बाद बादशाह का ख्वाब पूरा हो गया था। सभी खुश थे अपनी मेहनत की खुसूसियत देखकर। सफेद संगमरमर की एक ऐसी इमारत सामने थी जिसकी कोई मिसाल दुनिया में नहीं थी। बादशाह सलामत उस दिन इस अजूबे को निहारते हुए अभिभूत हो गए थे। बेगम की कब्र का स्थान देख कर तो उनकी आँखें झिलमिल होने लगी थीं। अपनी तीसरी बेगम के लिए उनके दिल में कितनी बेपनाह मोहब्बत है यह तो सभी जानते थे, लेकिन उनकी मौत के बीस सालों बाद भी वह बादशाह के दिल में इस तरह जिंदा हैं यह हैरत में डालने वाला था। उन्होंने बाहरी भाग में फारसी कलाकार अमानत खान द्वारा उकेरी गई कुरान की आयतों को भी पढ़ा और उसकी कलाकारी से खुश होकर उसकी पीठ भी ठोंकी थी।

अगले दिन बादशाह ने चाँदनी रात में मुख्य कारीगर अहमद लहौरी के साथ नौका-विहार करते हुए इस बेजोड़ नजारे को देखा। इसके बाद उन्होंने जन्नतनशीं बेगम की कब्र में सुपुर्दगी की तारीख और सभी कलाकारों को पुरस्कृत करने का दिन भी मुकर्रर कर दिया था। सब बहुत खुश थे और बड़ी बेचैनी से इस दिन के आने का इंतजार किया था सबने।

बाहर से जोर-जोर से आ रही रोने की आवाज ने सुलेमान की विचार-शृंखला भंग कर दी। रेहाना ने परदा हटाकर बाहर की तरफ झाँका, फरहाना बी बदहवास सी रोते हुए उसके घर की तरफ आ रहीं थी। रेहाना ने वहीं से आवाज दी - "क्या हुआ बी, सब खैरियत तो है।"

"जीनत के अब्बू की हथेली से लगातार लहू बह रहा है, बंद ही नहीं हो रहा है। हकीम को भी कुछ समझ में नहीं आ रहा है... हरिहर वैद्य जी भी देख गए हैं। उनकी दवाओं ने भी असर नहीं किया। बेसुध से पड़े हैं,

कुछ बोल भी नहीं रहे है।" – फरहाना ने हाँफते हुए कहा।

रेहाना अनहोनी की कल्पना कर सिहर उठी। फरहाना उसकी खालाजात बड़ी बहिन है। उसने फरहाना को सहारा दिया और उसके घर की ओर चल दी। कुछ ही देर में रेहाना के भी जोर-जोर से रोने की आवाज आने लगी। आसिफ मियाँ का इंतकाल हो चुका था। इस अशुभ रात की सोलहवीं मौत थी यह, जो उनकी बस्ती में हुई थी। सभी की मौत का एक ही कारण था, अत्यधिक खून बह जाना। दूसरी बस्तियों से भी मौत की खबरें मिल रहीं थी।

सुलेमान ने सुना तो लगा उसकी साँसे भी अब साथ छोड़ने वाली हैं। शबनूर के चेहरे पर नजर डाली, वह आँखें बंद किए उसका हाथ थामे सीधी बैठी हुई थी। मन में द्वंद्व जारी था। बादशाह के नुमाइंदों ने सबको झोली भर-भर कर अशर्फियाँ दी थीं लेकिन बदले में पत्थरों को जीवन बख्शाने वाली उँगलियाँ ले लीं थीं, वो भी केवल इस आशंका से कि भविष्य में कोई दूसरा राजा या नबाब मोहब्बत के इस मकबरे की दूसरी प्रतिकृति इन कारीगरों से बनवाने की सोच भी न सके। कैसा इनाम था यह? क्या यही इनाम पाने के लिए वह अपना वतन छोड़ कर यहाँ आया था? जिंदगी भर के लिए लाचार और मोहताज बना दिया, अपने खुद के जरूरी काम करने लायक भी नहीं छोड़ा। अब्बू और खालाजात भाई को तो वह पहले ही खो चुका है, अब अपने हाथ से पानी लेकर भी नहीं पी सकता... हमेशा दूसरों को तकलीफ देते हुए जिंदगी गुजारनी होगी उसे। ऐसी जिंदगी से तो मौत ही बेहतर है। तुमने अच्छा किया आसिफ चले गए, जन्नत में पुरअसर सुकून से तो रह सकोगे... खुदा हाफिज मियाँ... ।

रेहाना रोते हुए वापस आ गई और सुलेमान के गले से लिपट कर रोने लगी – "कैसा इंसाफ है ये... बादशाह ने अपनी मोहब्बत को अमर बनाने के लिए हमारी मोहब्बत का गला घौंटने का काम किया है, हमारी मोहब्बत का मजाक बनाया है उन्होंने। क्या हम मोहब्बत नहीं करते? क्या हमारी मोहब्बत बादशाह की मोहब्बत से कमतर है? उन्होंने तो मरहूम बेगम के लिए एक शानदार मकबरा बनाया है पर हम सबको कुछ अशर्फियाँ देकर जीते जी मकबरे में दफन कर दिया। बादशाह के कारिंदों ने जिस तरह का इनाम दिया है, क्या बादशाह की रजामंदी के बिना मुमकिन था यह सब? पहले पता होता कि ये इनाम मिलने वाला है तो कोई अपना वतन छोड़ कर क्यों आता यहाँ पर। फनकारों के हाथ भी काटे तो इतनी लापरवाही और बेहूदगी से कि जान पर ही बन आई। इससे तो अच्छा था सीधे शमशीर से

सिर अलग कर देते, पल-पल इतना दर्दनाक मंजर तो नहीं देखना पड़ता।"

आहट सुन कर शबनूर जाग गई - "क्या हुआ अम्मी"

"आसिफ मियाँ गुजर गए... ।" कहते हुए रेहाना फिर से फफक-फफक कर रोने लगी।

शबनूर कुछ देर तक रेहाना को रोते देखती रही फिर अब्बू का हाथ सहलाते हुए पूछ बैठी - "क्या बादशाह सचमुच अपनी बेगम से बेइंतहा मोहब्बत करते हैं? क्या सच में बादशाह के अंदर एक मोहब्बत करने वाला दिल धड़कता है?।"

"हाँ बेटा" - सुलेमान ने छोटा सा उत्तर दिया।

"झूठ है अब्बू... मैं नहीं मानती। यदि बादशाह सलामत मोहब्बत का मतलब भी समझते तो किसी के साथ कभी ऐसा अन्याय नहीं करते। मोहब्बत करने वाले के दिल में खुदा बसता है और खुदा इतना बेदिल नहीं होता।" - कहते हुए शबनूर की आँखों में रोष उतर आया था - "मोहब्बत करने वाला इंसान खुदा के बंदों को इतनी तकलीफ कभी नहीं दे सकता। बादशाह की मोहब्बत झूठी है अब्बू, उसकी मोहब्बत में हमारे जैसी पाकीजगी नहीं है।"

सुलेमान आश्चर्य से शबनूर की ओर देखने लगा। उसने शबनूर के मुँह पर उँगली रखनी चाही पर भूल गया कि उसके तो उँगलियाँ है ही नहीं। हाथ हिल जाने से दर्द से कराह उठा। शबनूर की बात सुनकर रेहाना एक दम खड़ी हो गई - "सच कहती है नूर... बादशाह की मोहब्बत झूठी है। हजारों लोगों के कटे हाथ और सैकड़ों लोगों की मौत इसके सबूत हैं। भले ही आने वाले सालों में सैलानी इसे मोहब्बत की पाक निशानी के रूप में याद रखें पर झूठी मोहब्बत का यह मकबरा सदा हमारे जख्मों को कुरेदता रहेगा। हम अब नहीं रहेंगे यहाँ, सुबह ही चल देंगे दूर कही।"

रेहाना फुर्ति से उठी और अपना सामान समेटने लगी।

साझा संस्कार

पंच परमेश्वर के अलगू चौधरी और जुम्मन शेख की ही तरह थी मुकुटधर और फतह मोहम्मद की दोस्ती। कुछ मानो में तो उनसे भी बढ़कर और गहरी। मुकुटधर और फतह मोहम्मद के पिताओं के बीच भी दाँत काटी दोस्ती थी। फतह मोहम्मद के वालिद ताज मोहम्मद के नाम पर ही जीत सिंह ने अपने बेटे का नाम मुकुटधर रखा था। जब ताज मोहम्मद के यहाँ भी बेटे का जन्म हुआ तो उसने भी अपने मित्र जीतू के नाम पर उसका नाम फतह मोहम्मद रख दिया। उन दोनों से चार साल बड़ी थी कुलसुम आपा, ताज मोहम्मद की बेटी। मुकुटधर और फतह को एक समान प्यार करने वाली और दोनों को भी उतनी ही प्रिय। कुलसुम का विवाह फलों के व्यवसायी नियाज मोहम्मद से हुआ था जिनकी शहर में ग्यारह नंबर बस स्टॉप के पास दुकान थी।

मुकुटधर और फतह मोहम्मद के खेत आपस में जुड़े हुए थे। दोनों के पास दो-दो बीघा जमीन थी, न कोई सीमांकन और न ही कोई बागड़। फतह मोहम्मद ने अपने खेत में दो छोटे-छोटे तालाब खुदवा लिए थे जिनमें वह मछली पालन का काम करता। बाकी बची जगह में सब्जी उगाता। मुकुटधर अपने खेतों में मौसम के अनुसार फसलें बोता। दोनों को अपने खेतों से इतनी आमदनी हो जाती कि जीवनयापन अच्छे से हो जाता, किसी के आगे हाथ फैलाने की जरूरत नहीं पड़ती। जिस साल बारिश अच्छी हो जाती तो थोड़ा बहुत बचत भी हो जाती। शादी के बाद भी दोनों के रिश्ते न केवल आत्मीय बने रहे, बल्कि और घनिष्ठ हो गए। दोनों की पत्नियों, कुसुमलता और नसीमा के बीच भी बहिनों सरीखा स्नेह था। दोनों परिवार साथ मिलकर सभी त्योहार मनाते। कुलसुम आपा भी हर साल रक्षाबंधन पर गाँव जरूर आती। मुकुटधर के पैदा होने के ढाई महीने बाद ही रक्षाबंधन पड़ा था। तब कुलसुम ने उसकी छोटी-छोटी नाजुक कलाइयों पर राखी बाँधने की जो शुरुआत की थी वह तीस सालों बाद भी बदस्तूर जारी थी।

फतह मोहम्मद ने जबसे मछली पालन का काम शुरु किया था, चुन्नी लाल उसका एकमात्र खरीददार था। वह शहर से आता और मछलियाँ लेकर चला जाता। हर हफ्ते इमानदारी से हिसाब-किताब कर देता। फतह मोहम्मद को कभी उससे शिकायत नहीं हुई। वह चुन्नी लाल से इसलिए भी खुश रहता कि बिना भागदौड़ किए उसे नियमित आमदनी होती रहती। सीजन

के समय पर वह फिशरीज कार्पोरेशन से मछली के बीज की व्यवस्था भी करवा देता। सुना था चुन्नी लाल मछलियाँ किसी बड़े सेठ को बेंच देता है जो उन्हें आइस-पैक करके कलकत्ता भेजता था। चुन्नी लाल मुकुटधर की भी फसल बेंचने में सहायता करता था। मंडी में उसकी अच्छी पकड़ थी इसलिए मुकुटधर को कभी भी दलालों के चक्कर नहीं काटना पड़े थे। चुन्नी लाल ही ट्राली की व्यवस्था करके ले आता और मुकुटधर का सौदा पक्का करवा देता। कुल मिलाकर चुन्नी लाल उन दोनों के लिए काफी अहमियत रखता था।

मुकुटधर और फतह मोहम्मद के एक-एक बेटा था, नाम शंभू दयाल और जहीर मोहम्मद। शंभू और जहीर बड़े हुए। गाँव के सरकारी स्कूल से दोनों ने आठवीं पास की। इससे ज्यादा पढ़ने की व्यवस्था वहाँ नहीं थी सो आगे की पढ़ाई छोड़ दी और अपने पिताओं के कामों में हाथ बँटाने लगे। पिताओं का काम व्यवस्थित था सो उनके लिए करने के लिए कुछ अधिक था नहीं। कुछ समय में ही उनका पैतृक काम से मोह भंग होने लगा। उनकी इच्छा होती कि वे भी अपने फूफा की तरह शहर में रहें और वहाँ कोई काम धंधा करें। उनकी इस इच्छा को पटवारी का लड़का हवा देता रहता जो शहर में ऑटो चलाता था। वह महीने में एक-दो बार गाँव आता और अपने पैसों की ठसक दिखाकर शहर के ऐसे-ऐसे किस्से सुनाता कि दोनों को गाँव की जिंदगी बेमजा लगने लगी। दोनों एकाधिक बार फूफा के घर भी रहकर आए थे। फलों के ठेले से ही फूफा की अच्छी-खासी आमदनी थी। उनकी जेब में हमेशा पाँच-सात हजार पड़े रहते जबकि गाँव में हाड़तोड़ मेहनत करने के बाद भी महीने में दस हजार से ज्यादा आमदनी नहीं हो पाती। चाहे जब मौसम की मार झेलनी पड़ती और खड़ी फसल चौपट हो जाती। यही हाल मछली पालन का भी था। मछली का जितना बीज आता, उसमें आधा तो खराब निकल जाता। जरा सी चूक हो जाए तो मछलियों को बीमारी लगने का खतरा अलग। रोज-रोज जाल को ठीक करते बैठो।

शंभू और जहीर की शहर जाने की इच्छा पर मुकुटधर और फतह मोहम्मद ने भी एतराज नहीं किया। वह जानते थे कि गाँव के उनके अधिकतर संगी साथी या तो काम की तलाश में शहर का रुख कर गए हैं या फिर आगे पढ़ाई के लिए दूसरे कस्बों में रहने लगे हैं। मुकुटधर और फतह

मोहम्मद ने चुन्नी लाल और नियाज मोहम्मद से सलाह मशविरा किया। चुन्नी लाल ने भरोसा दिलाया कि वह अपने सेठ से बात करके काम पर लगवा देगा। यदि दोनों ड्राइवरी सीख लें तो बैंक से लोडिंग ऑटो या फिर ऑटो रिक्शा के लिए लोन भी मिल जाएगा। लोडिंग ऑटो रहेगा तो घर के भी काम आएगा और किराए पर लगने वाले पैसों की भी बचत होने लगेगी। दोनों को बात जम गई। तय हुआ दोनों ड्राइवरी सीखेंगे और फतह मोहम्मद का बेटा लोडिंग ऑटो लेगा तथा मुकुटधर का बेटा ऑटो रिक्शा।

सारे काम उनकी इच्छानुसार हो गए। शंभू और जहीर कुछ दिनों तक फूफा के साथ ही रहे। जहीर के पास काम की कमी नहीं थी। उसके पास गाँव से मछलियाँ लाने के काम के साथ ही नियाज और उसके कुछ मित्रों के लिए अलसुबह नवबहार मंडी से फलों को लेकर आने का नियमित काम था। दिन में भी उसे ग्यारह नंबर मार्केट के पास स्थित सरदार जी की शॉप से सामान ग्राहकों के घर पहुँचाने का काम मिलता रहता। चार-पाँच सालों में ही जहीर ने काफी तरक्की कर ली और फूफा के पास ही निजामुद्दीन कॉलोनी में एक ई.डब्ल्यू.एस. बुक कर लिया।

शुरु-शुरु में शंभू दयाल को भी ऑटो चालन से अच्छी कमाई हुई लेकिन जबसे बड़ी-बड़ी कंपनियों की टैक्सियाँ सड़कों पर दौड़ने लगीं उसकी आय का ग्राफ गिरने लगा। कई बार तो वह स्टेशन पर चार-पाँच घंटे खड़ा रहता और कोई सवारी नहीं मिलती। निजामुद्दीन कॉलोनी से स्टेशन तक आना जाना भी उसे भारी लगने लगा। वह स्टेशन पर नए-नए बने अपने दोस्त रासबिहारी प्रजापति के साथ स्टेशन के पास ही रहने लगा। इसी बीच उसे कुछ बच्चों को मांटेसरी स्कूल लाने-ले जाने का काम मिल गया। बीस-बाइस हजार की नियमित आमदनी का सिलसिला जम गया। दिन में वह घर पर आराम करता या फिर जहीर के साथ उसके ऑटो में घूमता रहता। रात में स्टेशन पर खड़ा हो जाता, एक दो सवारियाँ मिल जाती।

समय अच्छा कट रहा था कि अचानक सब कुछ ठप्प हो गया। जो जहाँ था वहीं रुक गया। चारों ओर दहशत ही दहशत। एक कल्पनातीत खौफ। पहले भी वायरस के प्रकोप देखे थे पर ऐसे वायरस के बारे में न कभी सुना था और न कभी उससे मुठभेड़ हुई थी। हर कोई आतंक के साए में जीने को मजबूर, लगता मौत दरवाजे के बाहर खड़ी है, एक पैर बाहर निकाला

और दबोच लिया उसने। चारों ओर से डरावनी खबरें आ रहीं थी। लाखों की संख्या में लोग जान हथेली पर लेकर हजारों किलोमीटर के सफर पर सड़कों पर उतर आए थे। बस एक ही इच्छा कि मौत भी आए तो अपनों के बीच आए। पुलिस और प्रशासन की निरंकुशता के बीच कभी-कभी सुखद समाचार भी मिल जाते। लोग स्वेच्छा से लोगों को खाना, दवाएँ और चप्पलें बाँटते दिख जाते। ऐसे दृश्य दिल को सुकून पहुँचाते।

ट्रेनें, बसें, स्कूल सब बंद थे सो शंभू और रासबिहारी घर पर ही पड़े रहते। सारी आमदनी के स्रोत सूख गए। फूफा फोन कर हालचाल लेते रहते। जहीर के हाथों एक बार कुछ पैसे भी भिजवाए थे उन्होंने। मोहल्ले में सब कुछ ठीक-ठाक नहीं था। रात गहराती तो विचलित करने वाली आवाजें सुनाई देने लगतीं, सुबह लोगों की खुसुर-पुसुर शुरु हो जाती। किन्हीं गजेंद्र भैया की आमद मोहल्ले में बढ़ गई थी। कौन हैं गजेंद्र भैया, अधिकांश लोग नहीं जानते थे उनको, पर बात बहुत पते की करते हैं। ऐसी-ऐसी बातें बताते हैं कि आँखें फटी की फटी रह जाती हैं। गाँव के पटवारी के लड़के ने बताया था शंभू को। तीन-चार दिनों से रासबिहारी आधी रात में बिना बताए निकल जाता और अलसुबह ही लौट कर आता। तबसे ही रासबिहारी बहकी-बहकी बातें करने लगा था। शंभू ने उससे जानने की कोशिश भी की पर वह टाल जाता। एक दिन सुबह जब वह लौटा तो उसके हाथ में कुछ झंडे थे। एक उसने अपने ऑटो पर लगाया और दूसरा शंभू के ऑटो पर। झंडा लगाने पर ऐतराज जताने का कोई कारण शंभू को नजर नहीं आया पर बाद में रासबिहारी ने जो कहा, वह कई दिनों तक उसका गूढ़ार्थ समझने की कोशिश करता रहा - "ये हमारी अस्मिता का ध्वज है, जो इसका सम्मान नहीं करेगा उसे हम यहाँ नहीं रहने देंगे।"

रासबिहारी की बात सुनकर शंभू को किसी बड़ी गड़बड़ी की आशंका नजर आने लगी यद्यपि उसका इशारा किन लोगों की ओर है, वह समझ नहीं पाया था। अंदर ही अंदर कुछ सुलग रहा है यह तो वह बहुत दिनों से महसूस कर रहा था। आखिर रासबिहारी करना क्या चाहता है? क्या है उसके मन में? उसने जब भी खोजबीन करने का प्रयास किया, रासबिहारी का एक ही जवाब होता- "कुछ नहीं... कामधंधा है नहीं, गजेंद्र भैया के काम में हाथ बँटाते हैं हम लोग, खर्चा पानी निकल आता है हमारा।" मन रासबिहारी

की बात मानने को तैयार नहीं था लेकिन उसका मन यह भी स्वीकारने को तैयार नहीं था कि रासबिहारी कोई प्लानिंग कर रहा है।

उस दिन जहीर जब चुन्नी लाल का इंतजार कर रहा था कि उसका फोन आया – "जहीर बेटा, आज हम तुम्हारे साथ मछलियाँ लेने नही चल पाएँगे। जिस सेठ को हम मछलियाँ बेंचते थे उसने मुझसे मछलियाँ लेने से मना कर दिया है, कह रहा है कि उसकी जमात के लोग धमका कर गए है कि खबरदार जो किसी काफिर से बिजनेस किया। तुम खुद मंसूर सेठ से बात कर लो, तुम्हारी बात मान लेगा वह। मैं बीच से हट जाऊँगा तो उसके मजहबी लोगों को भी ऐतराज नहीं होगा तुमसे मछलियाँ लेने मे।"

"चाचा, आपने मुझे गोदी में खिलाया है, आपने ही हमें बिजनेस में जमाया है आप हमारे अपने से ज्यादा अपने हैं, हम यह कैसे कर सकते हैं। आपको छोडने के बारे में न अब्बू और न ही मुकुट चच्चा कभी तैयार होंगे।" – जहीर ने कातरता पूर्वक कहा।

"क्या बताएँ बेटा, ऐसा भी समय देखना बदा था सो देख रहे हैं... हमने दूसरे सेठ से भी बात की थी वह मछलियाँ लेने को तैयार भी था पर जैसे ही मैंने फतह भाई का नाम लिया उसने साफ मना कर दिया, कहने लगा केवल अपने लोगों से ही वह मछलियाँ खरीदेगा।" – कहते-कहते चुन्नीलाल की आवाज भर्राने लगी।

"आप धीरज रखिए चाचा"

"कोशिश कर रहा हूँ बेटा... तुमसे भी विनती है कि अपने पर नियंत्रण रखना और कोई गलत काम मत करना। ये वायरस तो एक न एक दिन चला जाएगा पर हमारे भीतर एक ऐसा खोखलापन, एक ऐसी तुच्छता को छोड़ जाएगा जिसकी भरपाई करने में वर्षों लग जाएँगे। पता नहीं मानवता की कितनी जलती चिताएँ हमें देखनी पड़ेगी।"

चुन्नी लाल की आवाज दर्द से भीगी हुई थी। जहीर बहुत देर तक उस दर्द को महसूस करता रहा। मन भारी हुआ तो शंभू से मिलने चला गया।

लॉकडाउन खुलने की शुरुआत हो चुकी थी। सब्जी मंडी में चहल-पहल बढ़ने लगी थी। नियाज अपनी दूकान खोलकर फलों की टोकरियाँ ठेले पर जमा रहे थे। दो लड़के आए, बोले – "सेब कैसे दिए।" और जोर-जोर से छींकने लगे।

"भाई, मुँह उधर करके छींकिए, एक तो आपने मास्क नहीं लगाया और यहाँ छींक भी रहे है।"

"ओए, जबान संभाल कर बोल, एक तो तू फलों को चाट-चाट कर सबको बेंचता है और हमें सीख देता है।" - उनमें से एक लड़का गरजते हुए बोला।

"तौबा-तौबा, यदि मैंने कभी ऐसा किया हो तो अभी इसी वक्त दोजख में जाऊँ।"

"तो ले... तेरी इच्छा पूरी किए देता हूँ।" लड़के ने नियाज का कालर पकड़ कर उसे जमीन पर पटक दिया। तभी कुछ और लड़कों का झुंड वहाँ जयकारा लगाते हुए आ गया।

"क्या हो रहा है यह।"

"भैया, ये फलों पर अपना थूक मलकर बेचता है... इसने अपना जुर्म भी कबूल कर लिया है... अब दोजख में जाना चाह रहा है सो अपुन इसकी इच्छा पूरी कर रहे है।"

"ऊपर वाले से खौफ खाओ, इतना सफेद झूठ भी मत बोलो... ।" - नियाज जमीन पर बैठते हुए आगंतुक लड़के से बोले - "तुम तो शंभू के दोस्त हो, कितनी बार हमारी दूकान पर आ चुके हो... समझाओ इनको, कोई बेजा गलतफहमी हुई है।"

"हाँ, शंभू हमारा दोस्त था, आज से वह भाई है हमारा, उसके कहने पर ही हम आए हैं। वह नादान था अब तक, अब अकल आ गई है उसे, कौन अपना है और कौन पराया, समझ गया है वह। अब नहीं आएगा तुम्हारे पास कभी... आज से अपना बोरिया बिस्तर समेटो और फिर यहाँ मत दिखना।"

"तुम अब अपने दोस्त पर ही कीचड़ उछाल रहे हो... शंभू कभी ऐसा नहीं कह सकता। तीस साल से ज्यादा हो गए हमें यहाँ फल बेंचते हुए, कभी किसी को कोई शिकायत नहीं हुई... तुम सब हमारे बेटे के समान हो। हमेशा हमसे फल लेके जाते रहे हो, हमसे कोई भूल हो गई हो तो बताओ, हम सुधारेंगे अपनी भूल।" - नियाज गिड़गिड़ाते हुए बोले।

"हमसे रिश्तेदारी गाँठने की जरूरत नहीं है, तोड़ दो हाथ पैर ससुरे के ताकि फिर कभी यहाँ नहीं दिखे।"

लड़कों को हिदायत देते हुए रासबिहारी और उसके साथी आगे बढ़ गए।

दोनों लड़कों ने नियाज की जमकर ठुकाई की और उसे अधमरी हालत में छोड़कर चले गए। कुछ देर तक नियाज जमीन पर निश्चेष्ट पड़े रहे। लड़कों के जाते ही कुछ तमाशबीन उनके इर्द-गिर्द इकट्ठे हो गए और सहानुभूति का लेप लगाने लगे। किसी ने कुलसुम को खबर कर दी। नियाज से उठते नहीं बन रहा था। कुछ लोगों ने नियाज को उठा कर बैठाया और मुँह पर पानी के छींटे मारे। कुछ घूँट पानी पिलाया। कुलसुम ने उनको इस हालत में देखा तो बेहोश होते-होते बची। जहीर को कुछ सूझ नहीं रहा था कि क्या करे। वह अत्यंत डर गया था। शंभू को कई बार मदद के लिए फोन लगाया लेकिन उसका फोन स्विच ऑफ आ रहा था। हारकर जहीर ने लोडिंग ऑटो में नियाज को लिटाया और अस्पताल ले गया। वह तीन अस्पतालों में गया पर किसी भी अस्पताल ने नियाज को एडमिट करने में रुचि नहीं दिखाई। किसी ने पुलिस केस का हवाला दिया तो किसी ने कोविड की निगेटिव रिपोर्ट लाने के पश्चात ही अस्पताल में इलाज करने का नियम बता दिया। जहीर हारकर नियाज को घर ले गया। इत्तफाक से एक कंपाउंडर पास में ही रहता था। उसने घर आकर देखने की हामीं भर दी। उसकी हाँ किसी वरदान से कम नही थी। कोई फरिश्ता इंसानी रूप धरकर आया था मानो। नियाज की पसलियों में बहुत पीड़ा थी हालाँकि फ्रेक्चर नहीं था। कंपाउंडर ने दर्द का इंजेक्शन लगा दिया और फोन पर किसी डॉक्टर से सलाह कर कुछ दवाएँ लिख दीं।

दो दिन बाद गाँव भी खबर पहुँच गई। पटवारी के लड़के ने खूब नमक मिर्च लगाकर गाँव में अफवाहों का बाजार गर्म कर दिया। जिन लोगों को मुकुटधर और फतह मोहम्मद की दोस्ती जरा भी नहीं सुहाती थी उन्होंने इस अवसर का पूरा फायदा उठाया और अपने-अपने ढंग से दोनों के बीच नफरत की दीवार खड़ी करने की कोशिश की। "शंभू एक उन्मादी ब्रिगेड का सरगना बन गया है।"... "ऑटो में झंडा लगाए घूमता है, जहीर ने मना किया था तो उससे मारपीट पर उतारू हो गया था।"... "उसके कहने पर ही उसके कुछ दोस्तों ने नियाज को जान से मारने की कोशिश की।"... "नियाज की किस्मत अच्छी थी कि जिंदा बच गया।"... इनके अलावा भी कुछ और कहानियाँ हवा में तैर रहीं थी। "नियाज ने शंभू को घर से निकाल दिया था जिस कारण वह अपने दोस्त के साथ रह रहा था। तभी से वह

बदला लेने की फिराक में था।"... "जहीर ने एक बार शंभू को थप्पड़ मार दिया था सो उसने बदला लिया।"... "जहीर ने शंभू के खिलाफ पुलिस में बयान दिया है" अचानक से इतनी कहानियाँ... जितने लोग उतने तर्क, तर्क क्या उतने निष्कर्ष, हर घटना की अजीब सी मनमाफिक व्याख्या। पीढ़ियों से चली आ रही मुकुटधर और फतह मोहम्मद की दोस्ती पर संकट के बादल मंडराने लगे।

दोनों ने खुद को अपने घरों में कैद कर लिया। सोच नहीं पा रहे थे कि कैसे एक दूसरे का सामना करें। विश्वास नहीं हो रहा था इन बातों को मानने का... नियाज बाबू पर जानलेवा हमला हुआ है, यह सच्चाई है इसलिए लगता है, सभी की सभी कहानियाँ एकदम निराधार नहीं हो सकती। लेकिन इस दुश्मनी की वजह क्या है? जिन कुलसुम आपा ने मुकुटधर को अपनी गोद में खिलाया हो उसका बेटा उनके सुहाग का दुश्मन हो जाए, कैसे विश्वास किया जाए इस बात पर। नियाज तो स्वयं शंभू को अपने बेटे सरीखा मानता है। शंभू भी हमेशा फूफी-फूफा की तारीफ करते नहीं अघाता था। फिर ऐसा क्या हो गया? सोच-सोच कर बुद्धि कुंद होने लगती, सिर भारी होने लगता, चक्कर आने लगते। कुसुमलता और नसीमा भी परेशान थीं, कैसे समझाएँ इन लोगों को। बिना सच जाने, पीढ़ियों के साझे संस्कार अर्थहीन न हो जाएँ कहीं।

दो दिनों से दोनों घरों में चूल्हा भी नहीं जला था। जेठ का सूरज भी अपनी किरणों को उन घरों की देहरी के उस पार भेजने में असमर्थ सिद्ध हो रहा था। कहीं ऐसा न हो सूरज अंदर आने की बाट जोहता रहे और अँधेरा तमाम रिश्तों, संवेदनाओं और विश्वास को लील जाए। "जैसा कुछ सुना है वैसा कुछ हो ही नहीं" - मुकुटधर और फतह मोहम्मद के मन में एक विचार कौंधा, एक मद्धिम सी उम्मीद की लकीर मन के भीतरी कोने में टिमटिमाती दिखाई दी। सोचा, सब कुछ नष्ट हो उससे पहले एक बार बात कर ली जाए। मुकुटधर घर से बाहर निकला और उधर से फतह मोहम्मद। दोनों कुछ देर खड़े-खड़े एक दूसरे को ताकते रहे। हाथ भर की दूरी लेकिन मीलों लंबा बेगानापन। मुकुटधर ने हिम्मत जुटाई - "फतह क्या तुम्हें लगता है कि हमारा शंभू ऐसा कर सकता है...।"

फतह, ऐसा संबोधन तो मुकुटधर के मुँह से पहली बार सुना था, हमेशा

फत्ते कहकर बुलाता था। बातचीत में परायापन झलक ही आया। "अरे मैं भी कहाँ पहले सरीखा मुक्कू से तपाक से मिला हूँ।" सोचा फतह मोहम्मद ने। बोला – "इस प्रश्न का उत्तर तुम्हीं दो, मैं विश्वास कर लूँगा तुम्हारी बात का।"

चुप रह गया मुकुटधर, कुछ बोल नहीं पाया। फतह मोहम्मद का अब भी इतना विश्वास है उस पर। कुछ मिनट बीते कि मोटर साइकिल रुकने की आवाज सुनाई दी। चुन्नी लाल गाड़ी स्टैंड पर खड़ी कर उनकी ही तरफ आ रहा था।

"ऊपरवाले का लाख-लाख शुक्र है... तुम दोनों को साथ देखकर दिल को कितना सुकून मिला है, बता नहीं सकता।" – चुन्नी लाल ने मुकुटधर और फतह मोहम्मद के हाथ अपने हाथों में लेते हुए कहा।

"नियाज भाई कैसे हैं, चुन्नी जी, माहौल खराब है कहकर आप ने हमें आने से रोक दिया था।" – दोनों एक साथ बोल पड़े।

"नियाज भाई ठीक हैं, चिंता की कोई बात नहीं है। मेरे एक परिचित डॉक्टर उनको देख रहे हैं एक हफ्ते में भले चंगे हो जाएँगे।" – चुन्नी लाल ने कहा – "पर जो हुआ अच्छा नहीं हुआ, वर्षों लग जाएँगे हमारी साझी विरासत को फिर से स्थापित होने में... तुम दोनों को साथ देखकर उम्मीद जगी है, तुम्हारे संस्कार इतने खोखले नहीं है जितना कुछ सिरफिरे लोगों ने समझ रखा है।"

"क्या हुआ था, हमें बताइए चुन्नी जी।"

"मैं इसीलिए आया हूँ ताकि तुम्हें सब बता सकूँ। शंभू के साथ उसके दोस्त प्रजापति ने बहुत ही शातिर खेल खेला है। शंभू का दोष केवल इतना है कि वह विकृत मानसिकता वाले अपने इस दोस्त के इरादों को समझ नहीं सका। जिस दिन की यह घटना है उस दिन शंभू अपने कमरे में सो रहा था। प्रजापति ने उसके मोबाइल से सिम निकाली और कमरे के बाहर ताला मार कर अपने मंसूबों को अंजाम देने निकल गया। शंभू की सिम से प्रजापति ने सबको मंडी में तैयारी के साथ उपस्थित रहने की सूचना दी और फिर उन लोगों ने वही किया जो उनसे कहा गया था। जहीर शंभू को फोन करता रहा पर उस तक सूचना पहुँची ही नहीं। दूसरे दिन कुछ लड़के पकड़े गए। शंभू का नाम संदिग्धों में आ गया। रात में पुलिस ने उसे उठा लिया। वह रोता

रहा, गिड़गिड़ाता रहा, एक बार फूफा को देखने की मिन्नतें करता रहा पर पुलिस उससे सच उगलवाने के हथकंडे अपनाने में व्यस्त रही।"

"इतना सब घट गया, हमें बताया ही नहीं किसी ने।"

"मैंने ही मना किया था जहीर और कुलसुम बहिन को।" - चुन्नी लाल ने कहा - "शंभू को छुड़ाना जरूरी था, बड़ी मुश्किल से शंभू की जमानत करा पाया... मुझे विश्वास था कि शंभू ऐसा कुछ नहीं कर सकता। प्रजापति ने अच्छा जाल बुना था, एक पॉवरफुल नेता का हाथ भी उस पर था सो पुलिस भी उस पर हाथ नहीं डाल रही थी लेकिन हर अपराधी से कोई न कोई गलती हो ही जाती है। शंभू के नंबर से काल जरूर किए गए थे पर शंभू के फोन में किसी के नंबर नहीं मिले, शंभू किसी को जानता भी नहीं था। वे सारे नंबर प्रजापति के फोन में मिले... शंभू की सिम भी प्रजापति के फोन में लगे होने के प्रमाण पुलिस को मिले। इस अधार पर वकील शंभू को जमानत दिलाने में सफल हो गया। शंभू नियाज भाई जी के यहाँ है। अब सब कुछ ठीक है, इसलिए मैं यहाँ आया हूँ। आप लोग भी एक दो दिन में नियाज भाई को देखने आ सकते हो"

मुकुटधर और फतह मोहम्मद ने आसमान की ओर निहारा। सूरज तेजी से नीचे चला आ रहा था और पल में ड्योड़ी पार कर कमरे के भीतर अपनी रश्मियाँ बिखेरने लगा। सूर्य, ग्रहण लगने से पूर्व ही राहू के चंगुल से मुक्त हो चुका था।